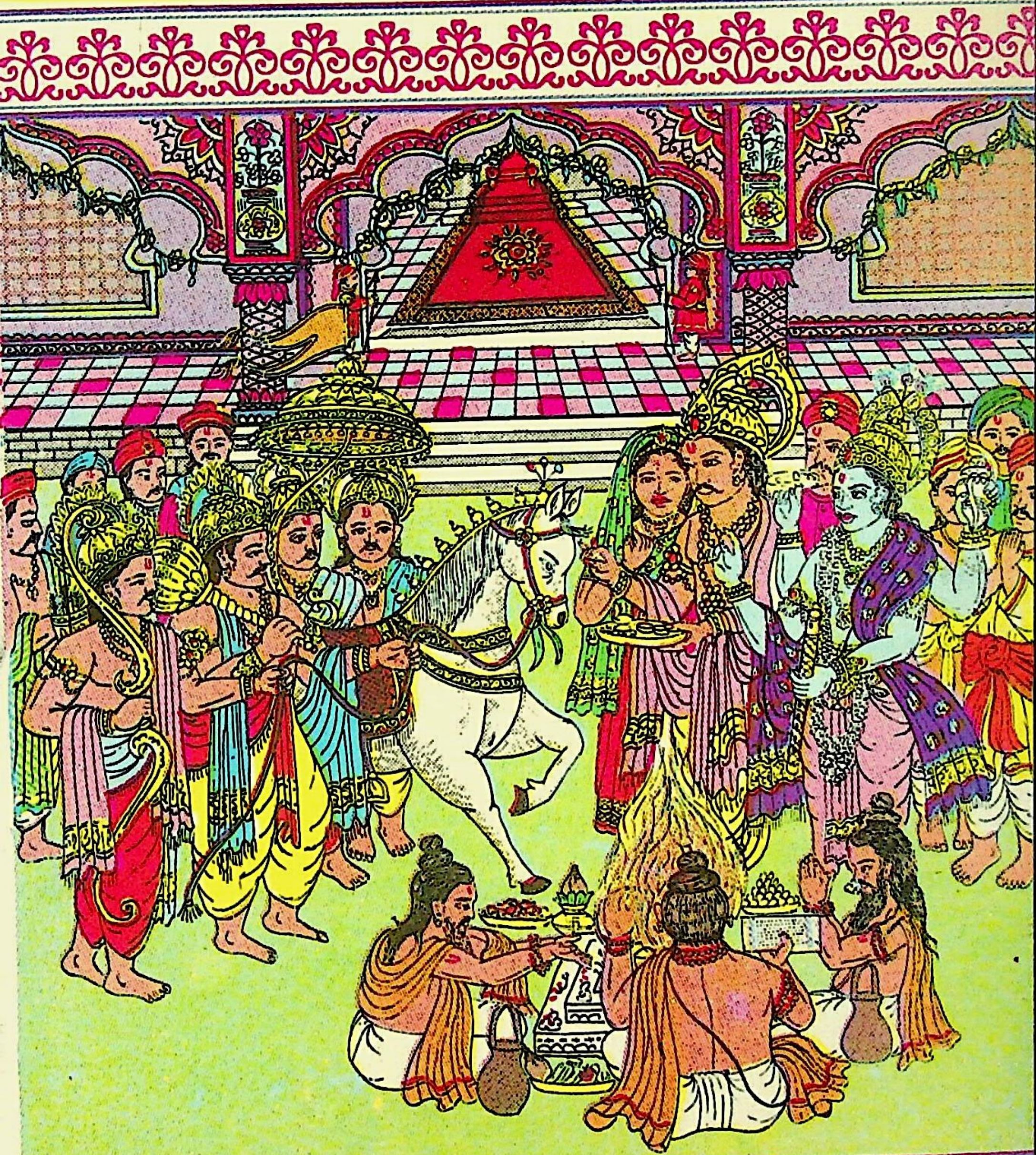
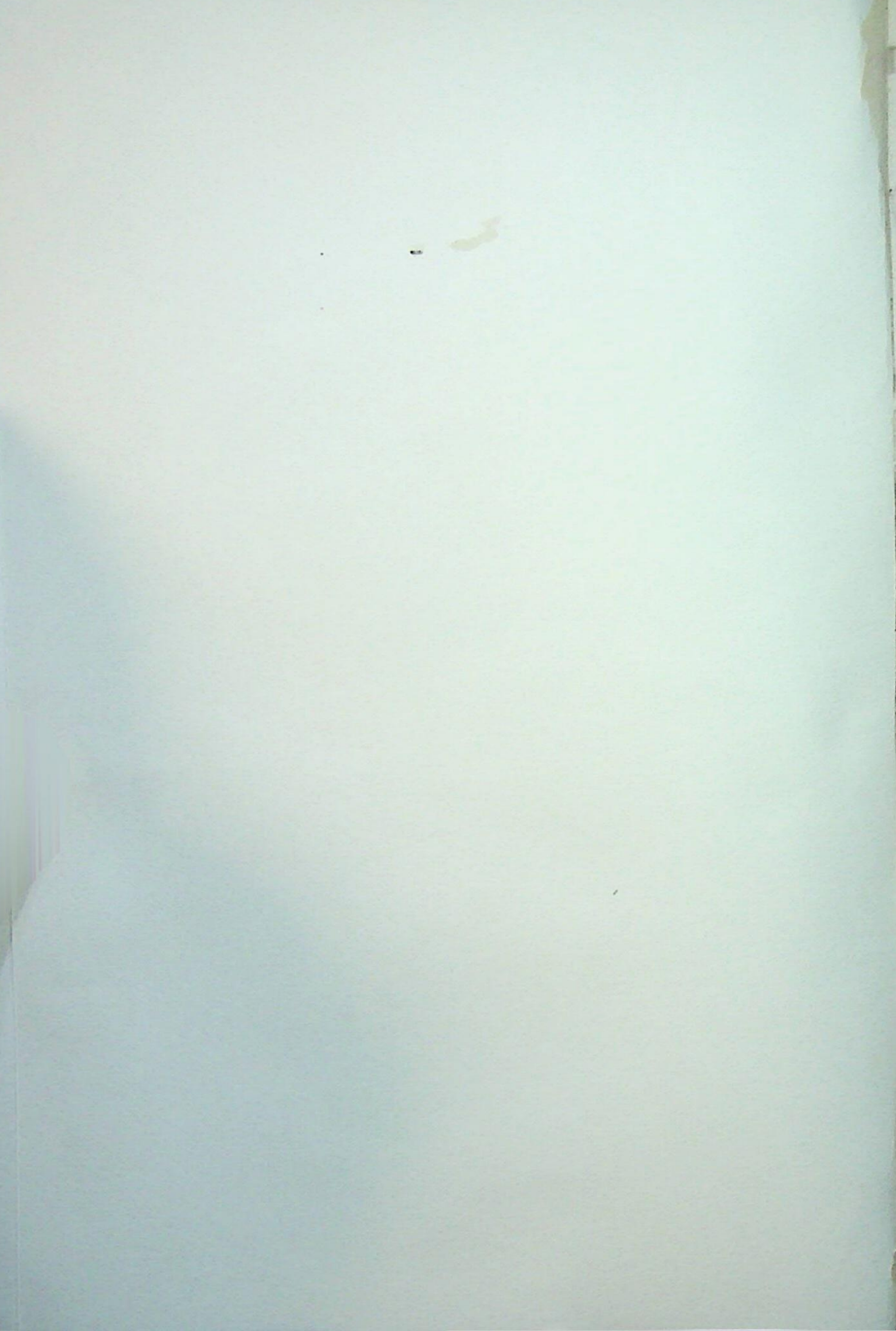
जैमिनीयाश्वमेध



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन



पं. पुरुषोत्तमदासजी कृत

जैमिनीयाश्वमेध-भाषा

छन्दोबध्द

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई - ४.

संस्करण- सन् १९९७ सम्वत् २०५४

मूल्य, ५० रुपये मात्र

Printed by Shri Sanjay Bajaj for M / s Khemraj Shrikrishnadass proprietors Shri Venkateshwar press Mumbai 400 004. at their Shri Venkateshwar press, 66, Hadapsar Industrial Estate, Pune-411013.

पं. पुरुषोत्तमदासजी कृत

जैमिनीयाश्वमेध-भाषा

छन्दोबध्द

धर्मराज महाराज युधिष्ठिरजी के
अश्वमेध यज्ञ की नाना युध्दादि-
मिश्रित अद्भुत कथा।

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई - ४.

प्रस्तावना ।

यह वही परम पवित्र जैमिनीयाश्वमेध ग्रन्थ है कि जिसकी प्राप्ति आजतक संस्कृत श्लोकोंमें भी दुर्लभ थी उसीको भाषारसज्ञ सज्जनों के आनन्दार्थ पंडित पुरुषोत्तमदासजीने दोहा चौपाई आदि सरल और सुभग छन्दवद्ध प्रियकवितामें रचा. इस महाग्रन्थके ६९ अध्याय है, उनमें ऋषिराज श्रीमज्जैमिनिजीका और जनमेजयका सुभग संवाद तथा राजाधिराज धर्म्मराजा युधिष्ठिरजीके अश्वमेध यज्ञकी कथाका अद्भुत विस्तार और हमारे सनातन वैदिकधर्म्मावलंबी गत बड़े बड़े धीर वीर राजाओंके सुन्दर इतिहास व साहसका परिपूर्णरूपसे वर्णन किया गया है, जिसके श्रवणमात्रसे मनुष्य असत्कर्त्तव्योंको त्याग सत्कर्त्तव्योन्मुख होकर धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्षका भागी होता है। इसमें महाराज धर्मके यज्ञ उद्योगकी वार्त्ता, श्रीकृष्णचन्द्रका ससैन्य द्वारकासे आना, यौवनाश्व नृपतिका तुरंग धरना तथा महासंग्रामवर्णन, अनुशल्ययुद्ध व महिषावती–निवासी राजा नीलध्वजका वल–पौरुष–संहार तथा स्वाहा और अग्निदेवकी विवाहवार्ता, अग्निदेवका युद्ध तथा भागीरथीसे अर्जुनका शापित होना, यज्ञतुरंगका पाषाण हो जाना तथा महाविजयी हंसध्वज राजा व सुरथ सुधन्वाका संग्राम तथा मणिपुरवासी महाप्रबल राजा बभ्रुवाहनसे अर्जुनके सैन्यका विनाश होना और फिर अमृत पान कर जीना तथा लवकुश–उपाख्यान तथा रत्नपुर–निवासी महाभक्त राजा मयूरध्वजका महाविषम संग्राम व साहस, भक्तिपरीक्षा वीरवर्म्माका संग्राम व यम--गोचरकी रोगसंबंधिनी वार्त्ता, तथा चन्द्रहास राजाका मिलाप, वकदाल्भ्य मुनिसे अश्वको पाना और चारों दिशा जीतकर अर्जुनका ससैन्य हस्तिनापुरप्रवेश तथा दानमानसे मित्रोंको संतुष्ट कर धर्म्मराज युधिष्ठिरजीका यज्ञ करना आदि कथाका विस्तारपूर्वक वर्णन है. यद्यपि इस आवृत्तिमें इसका शोधन विशेषरूपसे हुआ है तथापि दृष्टिदोषसे यदि कहीं अशुद्ध रह गया हो तो आशा है कि विद्वान् लोग क्षमा करेंगे ।

आपका—

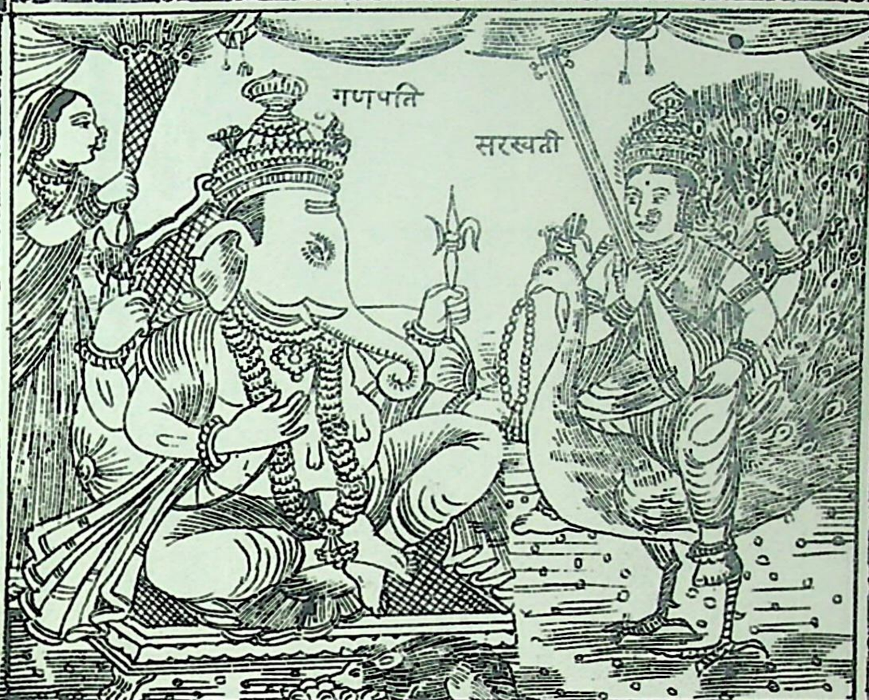
खेमराज श्रीकृष्णदास–"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्--प्रेस, बम्बई

श्रीः ।

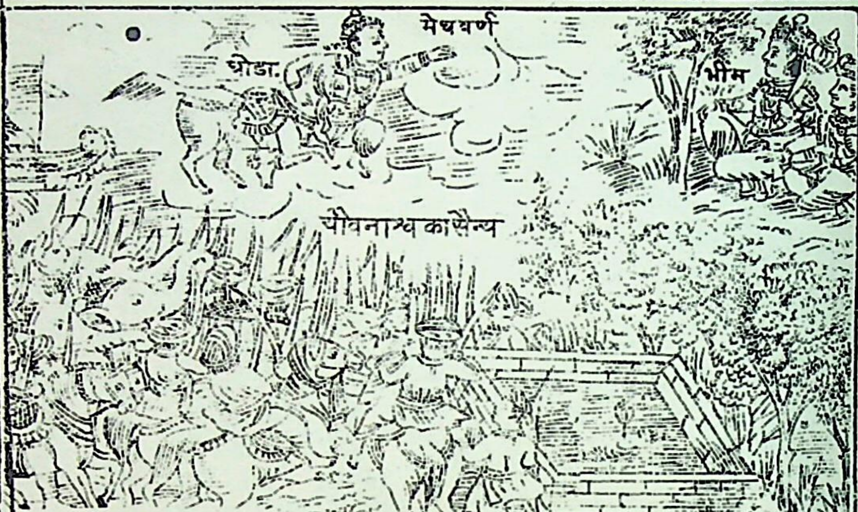
अथ जैमिनीयाश्वमेधकी विषयानुक्रमणिका ।

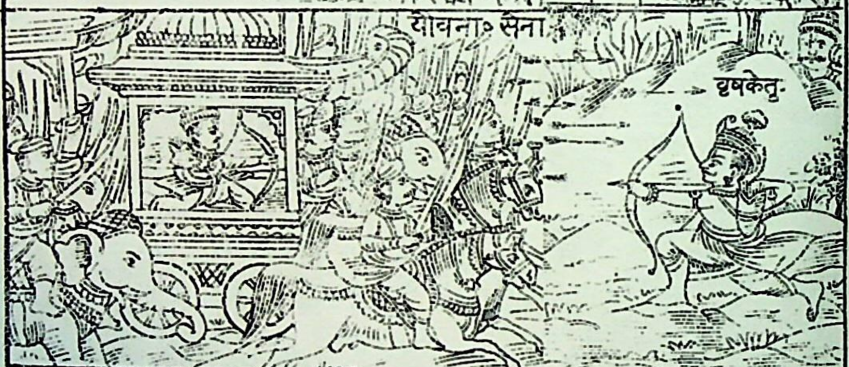


इति विषयानुक्रमाणिका समाप्त।

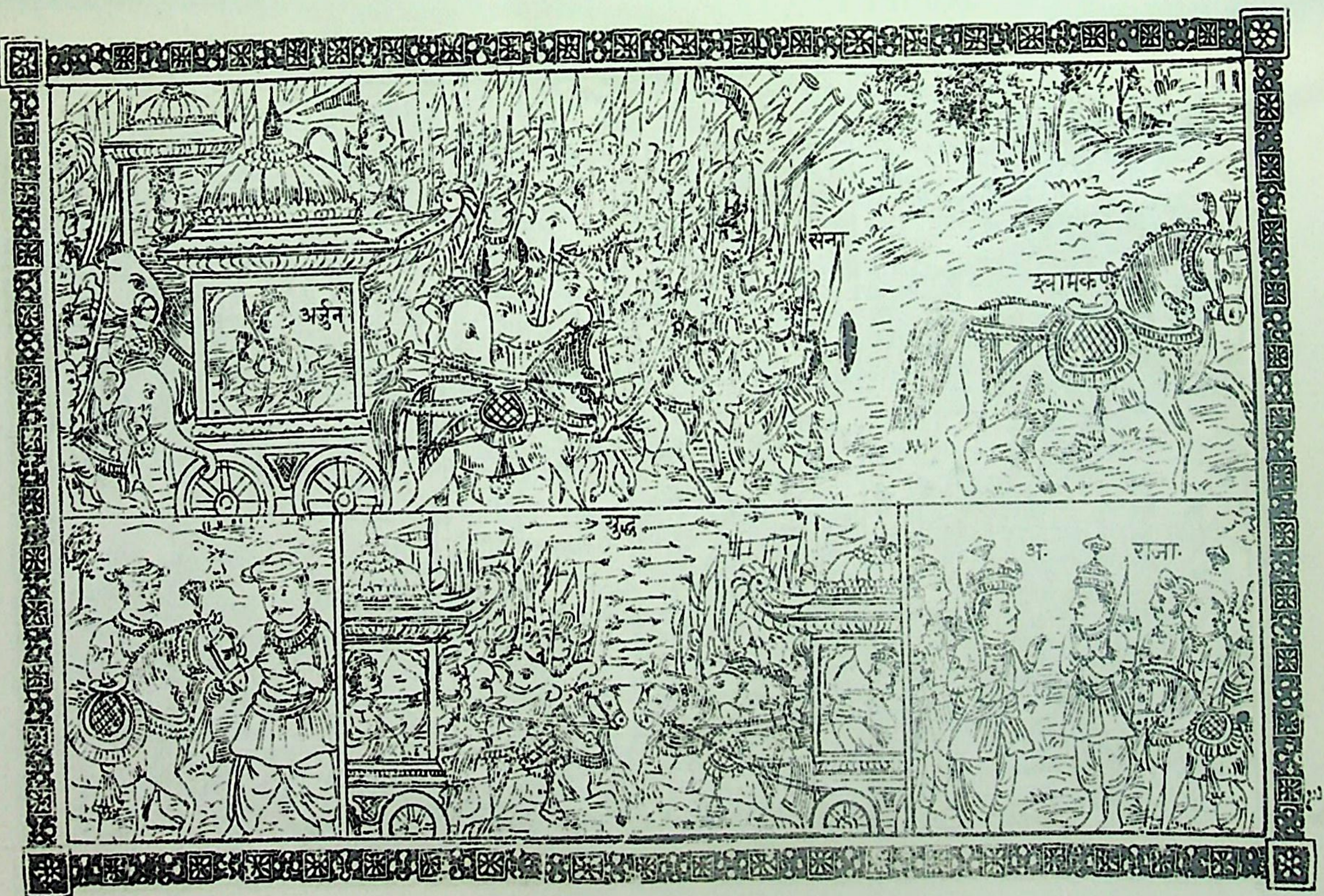

गणपति
सरस्वती


पांडव
श्रीकृष्ण


मेघवर्ण
घोडा.
भीम
यौवनाश्व का सैन्य


यौवना० सेना
वृषकेतु


पांडव
यज्ञ
यौवनाश्व सह श्याम:
आया
धर्म


अर्जुन
सेना
श्यामकर्ण
युद्ध
राजा


अर्जुन.


पुरोहित.
सिंह.ध्व.

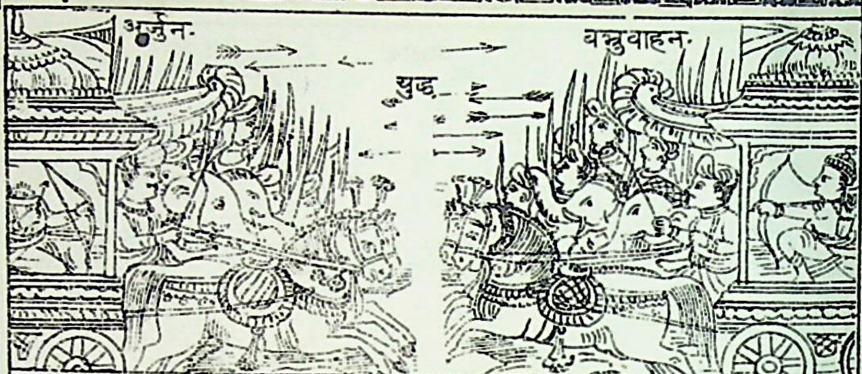

युद्ध
अर्जुन


प्रेमला.
अर्जुन.


युद्ध
ता.
अ.

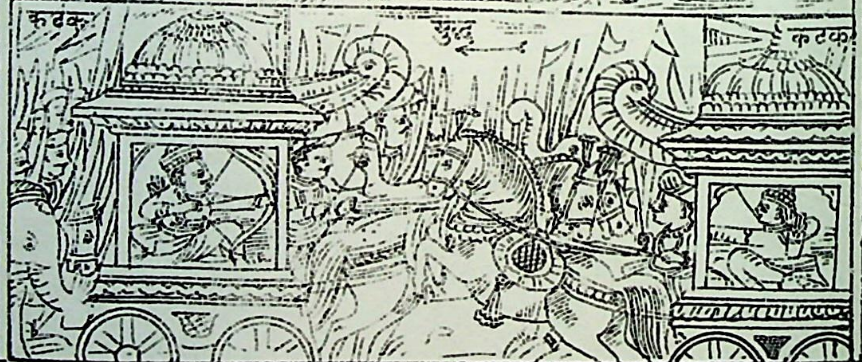

अ.
कृ
ना०
मयूरध्वज.


अर्जुन.
बभ्रुवा.
सेवक
श्या.

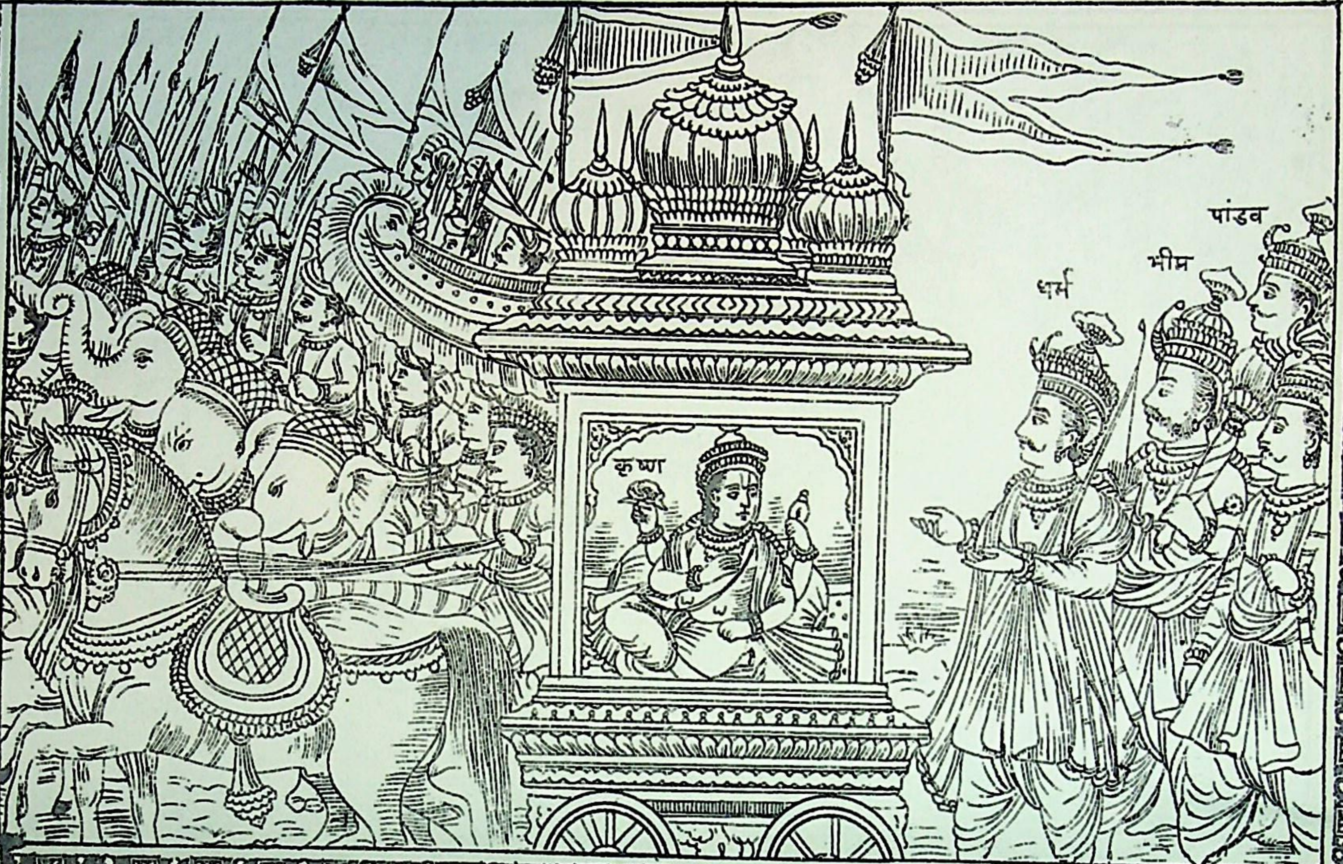

अर्जुन.
युद्ध
बभ्रुवाहन.


ब.
शेष.




कटक
युद्ध
कटक

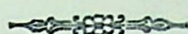

स.
भीम.
न.
अ.
व्या.
धर्म.
द्रौ.
कृ.
जन.


कृष्ण
धर्म
भीम
पांडव

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ जैमिनीय अश्वमेध भाषा ।

छन्दोबद्ध ।



नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् ॥
देवींसरस्वतींचैवततोजयमुदीरयेत् ॥ १ ॥
गणेशाधीश्वरीपुत्रसर्वकार्येषुसिद्धिद ॥
सर्वदेवार्चितविभो विघ्नेश्वरनमोस्तुते ॥ २ ॥

चौपाई ।

प्रथमहिं प्रणवौं पुरुषपुराना । आदि अंत जो है अवसाना ॥
रसनाकंत मुनिनमनहरना । देव शिरोमणि पंकजचरना ॥
निर्गुण सगुण चीन्हि ना जाही । रूप न रेख रहै सब माही ॥
ब्रह्मादिक खोजत नित रहहीं । वेद पुराण जासुगुण कहहीं ॥
महाप्रलयमें रहै निदाना । जासु अंत काहू नाहिं जाना ॥
दीनदयालु सकल दुखनाशन । संदीपनकर शोक विनाशन ॥
श्रीउरपर भृगुलात विराजति । कौस्तुभमणिप्रभुकंठसुछाजति ॥
अनुचर सनकादिक अरु नारद । गावत जाको शुक अरु शारद ॥
जहँ प्रभुको गुण अगम अपारा । शेष सहस मुख वार न पारा ॥
पंचतत्त्व कछु अंत न जानाहिं । सुर नर मुनिवर ताहि बखानाहिं ॥
जाकर रूप वर्णि नाहिं जाई । जल थल गगन रहे प्रभुछाई ॥
नाना भांति रूप सब कीन्हा । वर्चंद्र सबमहँ काहु न चीन्हा ॥
सृष्टि प्रलय अरु पालनहारा । सुमिरत पाप होहिं जरि छारा ॥
कछु प्रसाद प्रभु हमकहँ करहू । चरण रेणु हमरे शिर धरहू ॥
मैं मतिहीन परो जंजाला । कैसे वर्णौं चरित गोपाला ॥

करिय कृपा देवहु वरदाना । जातें प्रभुगुण करौं बखाना ॥
रामनाम निर्मल जगदीशा । वाराणसी जपत जेहि ईशा ॥
बलिबंधन कीन्हेउ जब बामन । नखप्रस्वेदते भै सब पावन ॥
अचल अमूरति परम निदाना । वेदशास्त्र जाकर परवाना ॥
आदि अनादि अचिंत अबूझा । जापर कृपा भई तेहि बूझा ॥
पतितनके पावन तुम स्वामी । त्रिभुवन-पति प्रभु अन्तर्यामी ॥

दोहा-होहु दयालुकृपानिधि, सिधि बुधि करहु प्रकास ॥
नमतविप्र पुरुषोत्तम, सब दासनको दास ॥ १ ॥

प्रणवौं ब्रह्म सकल अघदाहन । वेद कमंडलु हंससुवाहन ॥
सावित्री सह चरण मनावन । रामहुते चारौ मुख पावन ॥
निर्मल मति दीजै कमलासन । जैसे जपौं देव गरुडासन ॥
चतुरानन प्रणवौं मैं तोहीं । आदि पितामह मतिदे मोहीं ॥
पुनि प्रभु शंभु करौं परनामा । मति मोहिं देहु जपौं गुणग्रामा ॥
वृषभध्वज शशि तिलक ललाटा । कंठमें शेष सहसफन वाटा ॥
महाविभूति चढाये अंगा । पारवती संतत अर्द्धंगा ॥
सुरसरि जटाजूट वस देवा । गण गंधर्व करहिं नित सेवा ॥
भोलानाथ अंबुपति दाता । रामनाम सतत मन राता ॥
होहु प्रसन्न देवकर देवा । दो मति विमल करौं हरिसेवा ॥
महागणेश महाबुधि देहू । वर्णगयंद सुयश तुम लेहू ॥
तुम तो कहियतहौ सिधिदाता । सुमिरत तुम्हरे विघ्न निपाता ॥
परम भक्ति लंबोदर वाहन । करहु सहाय सकल अघदाहन ॥
एकदंत कर परशु सुहावन । दो मति जपौं रामगुण पावन ॥
आदि सरस्वति चरण मनावौं । दो मति जैसे हरिगुण गावौं ॥
तुम भल जानत हौ जगदीशहि । हन्यो दैन्य राख्यो यशशीशहि ॥
वाहन गरुड गदा कर लीन्हे । रसना रामनामकर चीन्हे ॥
वाकवादिनी निर्मल वरणा । दोमति जपौं राम कर चरणा ॥
कमलनयन कश्मीरनिवासी । तुम प्रसाद मति सकल प्रकासी ॥

दोहा-ब्रह्म रुद्र अरु गणपती, जगजननी यशलेहु ॥
पुरुषोत्तमहरि सेवकहि, बुधि प्रकाश कछु देहु॥२॥

जंबूद्वीप भरत कर खंडा । कनवजकी पाटी परचंडा ॥
सप्तपुरी महि उत्तम थाना । कौशलदेश सबै जग जाना ॥
रामपुरी सरयूके तीरा । नाम अयोध्या निर्मल नीरा ॥
स्वर्गद्वार पापकर नाशन । जहँ प्रभु रामचंद्र कर आसन ॥
तेहिंते दक्षिण योजन चारी । आदि गोमती कलमष हारी ॥
नारायण पुर निर्मल देशा । जहँ सुख बसै बिड़ाल नरेशा ॥
कृष्णदेवकरदास सुजाना । तिन सरवरि कोइ राउ न आना ॥
तिनके तीर वसत है दादर । जहँ नित यती सतीकर आदर ॥
राउ रूपमल तहाँ रहाई । वैश्यवंश नित धर्म कराई ॥
चारों दिशि जाकर यश भ्राजा । दाता तेहि सम अवर न राजा ॥
वेद पुराण जहाँ नित मानहिं । निशिदिन रामकथा जहँ ठानहिं ॥
चारों वर्ण जहाँ सुख पावहिं । याचकभीर दूरिते धावहिं ॥
सहसभोज दश वरनन देही । रामनाम तजि आन न लेही ॥
लागि गुहारि कीन्ह संहारा । दादुरपुर वे सबै जुझारा ॥
शूरवीर सब लसैं सुवारा । प्रभु गोविंद सदा रखवारा ॥
देवी पहरदेनको राखी । कर प्रतिपाल जु सूरज साखी ॥
व्याकरणी नित वेद वखानहिं । बसहिं विप्र जे रामहिं जानहिं ॥

दोहा-वैश्यवंशकुल निर्मल, नृपति रूपमल नाउँ ॥
रामदास पुरुषोत्तमै, बसहिं ते दादुर गाउँ ॥ ३ ॥

वंशविभूति पितामहि प्रीती । क्षेमानंद धर्मकी नीती ॥
तिनके सुत पुरुषोत्तम भयऊ । प्रथमहि जगन्नाथ कहँ गयऊ ॥
कमल नयन परिदक्षिण दीना । त्र्यंबकपुरी जाय गुरु कीना ॥
प्रभुप्रसाद दीनेउ गुरु जवही । राममक्ति उर उपजी तबही ॥
गुरु रघुपति कर पिंड परावा । निज इच्छा व्याकरण पढावा ॥
बहुविधि वेद पुराण विचारा । रामनाम विनु नहिं निस्तारा ॥

पुनि जु पिताकर आयसु लीना । पुरुषोत्तम द्वारे कहु कीना ॥
पुत्र कलत्र तजी सब माया । यह तौ सब उनहीकी दाया ॥
तजि हरिभक्ति जु जानहिं आना । परहिं नरक पावहिं दुख नाना ॥
संवत् सौम्य जु नाम कहावै । पंद्रहसै अठानवै गावै ॥
निर्मल चैत्रमासकर आवन । शुक्लपक्ष प्रतिपदा सुहावन ॥
उत्तम दिवस चंद्रकर वारा । सूरज मेष वसंत प्रचारा ॥
हरिप्रसाद पुरुषोत्तम दासा । अश्वमेध कर कीन्ह प्रकासा ॥
जैसे उदधि अहै अवगाहा । तृण बेडे नर उतरन चाहा ॥
तैसे प्रभु मैं मतिकर हीना । तुम गुण उदधि अहौं मैं मीना ॥
इक भरोस गोविंद तुम्हारा । तुम हमरो करिहौ प्रतिपारा ॥
महामहायश बनो जु भयऊ । तिनकी चरणरेणु हम लयऊ ॥
जैसे हरिणपुहच्चै वावन । मानसचैहै गगनकर आवन ॥
मैं मतिहीन बुद्धि मोहि नाहीं । सुमिरत राम सदा मनमाहीं ॥
भक्तवछल प्रभु विरद तुम्हारा । मो अनाथको करिहै पारा ॥

दोहा—उत्तम संगअसंग जो, सो प्रभु तुमको लाज ॥
पुरुषोत्तम जन वरणही, हरि बिनु को मोहिं साज ॥४॥

सोमवंश जन्मेजय राजा । माथे मेघछत्र भल छाजा ॥
व्यासदेवकर शिष्य कहावै । मैं सुनि कथा पुराण सुनावै ॥
राजा जन्मेजय हँकराये । सिंहासन मुनि लै बैठाये ॥
हमरे पितामहनकी बाता । कहहु ऋषिय जिमि दुरति निपाता ॥
अश्वमेध कवनी विधि कीना । विप्रन कहा दक्षिणा दीना ॥
सो मोहिं स्वामी कहौ बुझाई । पापहरन संग्रह जु सुनाई ॥

जैमिनिरुवाच ।

प्रथमहिं हरिकर चरण मनाऊँ । पुनि राजा तोहिं कथा सुनाऊँ ॥
कुरुक्षेत्रकर भयउ निदाना । राय युधिष्ठिर बड दुखमाना ॥
गंगाजाय तिलांजलि दीना । कर्ण द्रोण सबरे तब लीना ॥

रुदन करहिं सब देह सँभारहिं । कबहुँक शीश धरणिपर मारहिं ॥
महादयालु न काहू मारा । विधिवश भयउ सकल उपचारा ॥
तेहि अवसर तहँ आयउ व्यासा । देखत भयउ शोककर नासा ॥
करि प्रणपत्य पूछि ऋषि लीना । कैसे मुचै गोत्रवध कीना ॥
जिनपग पूजि करिय परनामा । भीषम द्रोण हने निष्कामा ॥
जो कंचन वरषै नित धारा । भाइ कर्ण विनु कारण मारा ॥
जब उनकर गृह देखें सूना । तब तब उपजै जिय दुख दूना ॥
कर्ण विना हमरी गति ऐसी । लोचन विना देहकी जैसी ॥
चहुँदिशि देखिये रोदनकारा । क्यों विधि राखै प्राण हमारा ॥

श्रीवेदव्यास उवाच ।

ठारह क्षौहिणि दल जब भयो । अर्जुन रथ तब रिपुउर ठयो ॥
तब आज्ञा दीनी यदुराई । अर्जुन सहजहि धनुष चढ़ाई ॥
पारथ देखा दृष्टि निहारी । मारौं काहि सबै हितकारी ॥
धनुष धरेउ रथते खसिआयो । हरिके चरणकमल शिर नायो ॥
मारौं काहि सबै सुखदाई । सुनहु गुसाईं त्रिभुवनराई ॥
पंडव मारि निपंडी धरौं । सबै राज्य दुर्योधन करौं ॥
राय युधिष्ठिर मारौ बंधव । सबै राज्य भूजौ अवलंबव ॥
अर्जुन कहँ प्रभु तबहि दिखायो । विश्वरूप देखत सुख पायो ॥
मुख पसारि अर्जुन समझायो । पार्थिव देखेउ रूप सुहायो ॥
चक्र सुदर्शन कौ सँहारा । वे तौ सब परमेश्वर मारा ॥
यह लीला सब कीन्ह गुसांई । तुम पाँचो कहँ दीन बड़ाई ॥
तुम नृप निजमन कियो हँकारा । यह अपराध जाय नहिं टारा ॥
राजा काहे मन दुख मानसि । काहे न नीक तुरंगम आनसि ॥
पुनि तुम वृथा करौ संतापा । नाहिन तुम्हैं लगै कछु पापा ॥
मारत राखत श्रीभगवंता । जासु चरित्र अपार अनंता ॥
जे कुरुक्षेत्र परे रणधीरा । तनु छूटे भये देव शरीरा ॥
अब नरेश चिंता परिहरहू । यज्ञ तुरंग नीक तुम करहू ॥

पृथिवीमाँझ सुयश तुम लेहू । करहु यज्ञ विप्रन धन देहू ॥
त्रेताराम यज्ञ भल कीन्हा । कंचनभूमि सुविप्रन दीन्हा ॥
करहु यज्ञ छांडहु सब काजा । भूंजहु एक छत्र तुम राजा ॥
आज्ञा जब यादवपति दीन्हा ! तब राजा तुम भारत कीन्हा ॥
राज मनोहर विधि तोहिं दीना । काहे न करसि पुण्य कर चीना ॥

जैमिनिरुवाच ।

इस प्रकार भाषेउ मुनि व्यासा । नृपति युधिष्ठिर पुनि परकासा ॥
हमरे नाहिं द्रव्य भंडारा । परजा हम पीडैं नहिं पारा ॥
राय सुयोधन बहुत सतावै । निशिदिन परजा हमाहिं मनावै ॥
थोरेहि करत यज्ञकर साजा । होते जो दुर्योधन राजा ॥
कछु सहाय देखत मैं नाहीं । हारेउ अर्जुन कछु बल नाहीं ॥

दोहा-तनय राज्य दे मुनिवरन, करि विनती प्रभु तोरि ॥
अश्वमेध ह्वैहै नहीं, घटै न हत्या मोरि ॥ ५ ॥

व्यास उवाच ।

व्यासदेव मुनि वचन प्रकासी । कनक अहेते वनज निवासी ॥
लगे पुरातन कथा चलावन । राजहि कारण कहि समझावन ॥
मरुत्त नरेश अवनिमें भयऊ । अश्वमेध मख जानै ठयऊ ॥
कंचन रत्न भार बहु कीन्हे । करि सन्तुष्ट सु विप्रन दीन्हे ॥
सब कंचन तजि गये हरिशरना । नाम हेमवत बहुत सु वरना ॥
सो मँगाय धन यज्ञ करावहु । घरघर मंगलचार गवावहु ॥
व्यास वचन सुनिनृप सुखपावा । राय युधिष्ठिर शीश डुलावा ॥
नाहिन यज्ञ होत मैं देखौं । यह शिख तौ तृण सम करि लेखौं ॥
विप्रनके धन यज्ञ करावहु । व्यासदेव मम सत्य छुड़ावहु ॥
परहि नरक द्विज अंश जु खाहीं । वह धन तो हम आनब नाहीं ॥
यह हत्या हम सबहिन लागी । ब्रह्म अंश प्रज्वलित जनु आगी ॥
कै अनसन हो मरिहौं कासी । कै ह्वैहौं तापस बनवासी ॥

दोहा-ह्वैहै सुयश मृत्युकर, अपयश ह्वैहै मोर ॥
रौरवनरक परौं मैं, कहा सुनौं जो तोर ॥ ६ ॥

व्यास उवाच ।

धन्य धन्य तुम नृपकुल केतू । राखत सबै धर्मकर सेतू ॥
नृपति सही जो विप्रन डरई । रामनाम कहि मति अनुसरई ॥
राजा सुन मुनि कहेउ विचारा । वा कंचनको सब व्यवहारा ॥
पाछे परशुराम अवतारा । तेजवंत प्रभुरिपु किय छारा ॥
क्षत्रिय मारि निक्षत्रिय करे । विप्र बंधु राजा भुवभरे ॥
जब जब दैत्य भये परचंडा । परशुराम कीन्हे शतखंडा ॥
परशुराम जिय तप जु विचारा । बिनु राजहि वरजै को पारा ॥
कश्यप कहँ दीनेउ प्रभु धरनी । क्षत्रिन छाँड़ी अपनी करनी ॥
कश्यप ऋषी भये जब राजा । बहुत अनीति करै बहुसाजा ॥
राजतेज तबही लग थंभै । परजाहि डांडै त्रासै खंभै ॥
विप्रनकी रक्षा नित करही । काहूकी तृण तक नहिं हरही ॥
मुनिन सबन भगवंत विचारा । लेखहि तृणवत सब संसारा ॥
तब ऋषि अपने मनहिं विचारै । बिनु क्षत्रिय को राज्य सँभारै ॥
यह जग सून भयो नृप जबहीं । राजछत्र कहँ दीन्हेउ तबहीं ॥
सुरथनाम क्षत्रिय एक योधा । तेहि दे राज्य दियो बहु बोधा ॥
जौनवर्ष नरपति जो होई । विलसै भूमि कनक धन सोई ॥
हमरे वचन सत्य करि मानहु । नाहिनदोष वडो धन आनहु ॥
व्यास वचन जब कहे प्रमाना । राय युधिष्ठिर फुरकर माना ॥
सावधान जिय सुमिरि गोविंदा । कहत ऋषियके भयो अनंदा ॥
पुनि पूछे तेहि वेदव्यासा । यज्ञकरन हम वचन प्रकासा ॥
केते विप्र मोहिं समझावहु । दक्षिणा अरु हय वराहि वतावहु ॥

व्यास उवाच ।

सुन राजा समझावौं तोहीं । बीससहस द्विज पाठक होहीं ॥
आदि कुलीन सबै बलवंता । वेदशास्त्र जानैं भगवंता ॥

पंचवेद सहस्र मर्यादा । इंद्रियजित जानैं नहिं स्वादा ॥
ऐसे विप्र चाहिये राजा । गोसहस्र चहिये पुनि साजा ॥
रत्नप्रस्थि तिहुँलोक सरहिये । पुजिये अश्व तवहि जे चहिये ॥
एक एकको चहिये तादिनो । कारज सिद्धि न विनु दक्षिना ॥
हरिपूजा बहु भाँति करावे । चरणोदक लै शीश चढ़ावे ॥

दोहा-एक एककी दक्षिणा, सुन राजा मतिधीर ॥
एक एक रथ एक गज, देवै कंचन हीर ॥ ७ ॥

विषय दक्षिणा वरनौ राजा । अव नृप सुनहु तुरंगम साजा ॥
सब तनु गऊ क्षीरसम वरना । सुंदर वदन श्याम दोउ करना ॥
पूनौ चंद्र बिंब जिमि शोभा । पीत पूछ देखत मन लोभा ॥
पवन वेग गति अगम सुहावन । देखत तनु जनु मन अति पावन ॥
शाखा चपल सकल दुख हरता । तुमरे यज्ञ केर हम करता ॥
तुमसन तुरँग कह्यो समझाईं । सुनहु यज्ञ तुम पुनि मनलाई ॥
चैत्रमासकी पूनो होई । छड़िये तुरँग सवल सँग सोई ॥
बांधव पुत्र शूर जे भारी । वर्ष दिवस करिहैं रखवारी ॥
अस पतिव्रत तुम राजा करहू । वर्षदिवस चित संयम धरहू ॥
नारी पुरुष एक सँग वासा । मनसा वाचा रहौ उदासा ॥
हयके पाछे रहै जु वीरा । धीरजवंत सहै वड़भीरा ॥
जहँ जहँ अश्व वात मल छाही । तहाँ तहाँ गो सहसनु चाही ॥
हिमकर बदन तुरंग ललाटा । लिखिये नीके कंचनपाटा ॥
छाँडेउ अश्व यज्ञके कारन । रखवारी अर्जुन धनु धारन ॥
जेहि बल होइ सुलेहि छिनाई । अर्जुन युद्ध जीति नहिं जाई ॥
ऐसी शक्ति होय आराधहु । तब तुम अश्वमेध नृप साधहु ॥
कहै व्यास बूझौ उनमाना । मतहुजाइ तुम श्रीभगवाना ॥

दोहा-होइहैं सकल पाप क्षय, मानहिं भल भगवंत ॥
करहुराज्य तुम राजहु, सुखपैहैं मुनि संत ॥ ८ ॥

राजा वहुरि बहुत दुखमाना । ह्वै है कैसे यज्ञ निदाना ॥

नाहिन धन सहाय मनबूझी । अर्जुन भीम बहुत किय जूझी ॥
कर्णपुत्र अवहीं रण बालक । औ वृषकेतु महारण घालक ॥
भीमके पुत्र घटोत्कचनंदन । मेघवर्ण बालक कुल चन्दन ॥
जासु प्रसाद युद्ध हम जीता । सबही भाँति भई परतीता ॥
भीमसेन सुन विपति हमारी । मधुसूदन प्रभु गये बिसारी ॥
करव यज्ञ होवै उपहासा । माधवचरण दूरिभा वासा ॥
वायुपुत्र सन राजा कहई । हरि बिनु हम कौड़ी नहिं लहई ॥

भीमसेन उवाच ।

भीम कहै सुनिये महराजा । कैसे करब यज्ञको साजा ॥
नाहिं दिखियत है वर घुरसारा । माधव दूर करत संभारा ॥
शिर ऊपर जाके हरि चरणा । मंगल तहाँ जहाँ भवहरणा ॥
जो गोविंदचरणते दूरी । जन्म मरन दुखरह भरि पूरी ॥
रसना राम कहै जो तारक । जन्म जन्मको दुख बहु टारक ॥
हम अपराध भरे जब जानी । हमको तजि गये शारँगपानी ॥
रहते सदा हमारे साथा । अब हम त्यागेउ जानि अनाथा॥
जो हम यज्ञ बहुतविधि करहीं । तौ काके चरणन तर धरहीं ॥
जो गोपाल चरणते दूरी । हमरे जन्म मरण भरि पूरी ॥
जो गोपाल दरश मोहिं दीन्हा । जानहु कोटियज्ञ हम कीन्हा ॥
हम जु अंध हरि हमरे लोचन । सुमिरत नाम कोटि अघमोचन ॥
बल अरु बुद्धि गोपालहमारी । विपति अनेक करी रखवारी ॥
हरि बिनु करैं कौन कर भाऊ । मिलव गोविन्द आशजियचाऊ॥
सुनत वचन सुखपायो व्यासा । धन्य सो जन्म कृष्णकी आसा ॥
जाके हृदय वसत यदुनंदन । सो जन सकल चराचरवंदन ॥
तुमसन कहौं तुरंगम जहवाँ । भद्रावती पुरी वस तहवाँ ॥
राजा यौवनाश्व तहँ रहई । राजशिरोमणि मानस कहई ॥
दशक्षौहणिदल वीर विचारी । सदा तुरंगमकी रखवारी ॥
पवनौ तहाँ न जानै पावै । मानस की कैसे बन आवै ॥

एसी विधि सो राखि तुरंगम। जैसे शिवको राखत जंगम ॥
दोहा-व्यास भीम समझायऊ, जहाँ अश्वकर वास ॥
हरिकी किरपा पाइये, कह पुरुषोत्तमदास॥ ९ ॥
इति श्रीमहाभारतेअश्वमेधपर्वणियज्ञप्रारंभणोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

जैमिनिरुवाच।

जामिनि जन्मेजयसन बरनी। सुनहु कथा सोइ पातक हरनी ॥
यह प्रस्ताव भयो तब भीमा। करी प्रतिज्ञा डरे न जीमा ॥
चाहै जौवनाश हो दारुण। आनब हय मैं करौं बिचारण ॥
जीतौं कटक कृपा भगवाना। राययुधिष्ठिरकी मोहिं आना ॥
जे नर सुमिरत प्रभु गरुड़ासन। तत्क्षण होय सकल दुखनाशन ॥
हय आने विनु बहुरि जु आवौं। परौं नरक सब धर्म नशावौं ॥
जननी तात बंधु जे घातक। हयआनेबिनु सो मोहिं पातक ॥
येकै कूप होइ जेहि ग्रामा। वेद पुराण न हरिकर नामा ॥
येकै निमिष रहौं मैं तहवाँ। हय आने बिनु रहौं न जहवाँ ॥
मारुतसुत बल बाढेउ जबही। धर्मतनयको दुख भा तवहीं ॥
व्यासकहा नृप है बलवंता। दश अक्षौहिणिदल द्युतिमंता ॥
दारुण जौवनाश है जहवाँ। कैसे अकसर जैहौ तहवाँ ॥

भीमसेन उवाच।

यह चिंता मेरे जिय भयऊ। वासुदेव हमको तजि गयऊ ॥
जैमिनि नृपसों कहैं पुराना। कुंतीनंदन बड़ दुखमाना ॥
तब बोले वृषकेतुकुमारा। कर्णपुत्र रण महा जुझारा ॥
दूसर मैं ह्वैहौं तुम संगा। करिहौं जौवनाशकर भंगा ॥
भीमसेन तब उत्तर दीन्हा। हम अन्याय बहुत तुम कीन्हा ॥
तात तुम्हार बंधु गृह रोवहि। लाज न तुममुख जो हम जोवहि ॥
पुनि वृषकेतु वचन अस बोलहि। पिता हमार कर्ण अघडोलहि ॥
सन्मुख समर करत तुम मारा। तारेउ पितहि कीन्ह उपकारा ॥
तजि पांडव नित धर्म जु साजा। सेयउ सदा सुयोधन राजा ॥

जनानि द्रुपदसुत जो जगमाता । खैंचेसि चीर कीन्ह उतपाता ॥
कीन्ह निधर हरि देखत करना । लीन्ह द्रौपदी सबकी शरना ॥
दीनदयालु पैंज निजराखी । कौरव मारि लागि सुर साखी ॥
पुनि विराटपुर गाय चुराई । अपयश बहुत भाँति तहँ पाई ॥
जैसे पद्मरागमणि काढी । काहे कहु तृष्णा अति बाढ़ी ॥
तुलसी कलपवेलिजर भंजै । विषकी लहरि कहा मन रंजै ॥
तात हमार सदा अपराधी । कबहुँ न भक्ति कृष्णकी साधी ॥
करि संग्राम तनु दुरति नशाई । तव परसाद अमरपद पाई ॥
तुम हमरे सब वड़ उपकारी । मैं तुम्हार हौं आज्ञाकारी ॥
तुम प्रसाद देखत हरि देवा । करि हौं राय युधिष्ठिर सेवा ॥

दोहा–मैं तुम्हरे सँग जाइकै, जीतब महाभुवार ॥
लै तुरंग बहुरौं तबहिं, कह वृषकेतुकुमार ॥ १० ॥

वचन मधुर वृषकेतु सुहाये । भीमसेन अतिही उर भाये ॥
इनके हृदय कपट कछु नाहीं । हमहिं छाँड़ि जे अंत न जाहीं ॥
कर्णतनय जब दीन्ह अधारा । मेघवर्ण तन भीम प्रचारा ॥
घटोत्कचसो पिता तुम्हारा । पीठि चढ़ाय लीन्ह परिवारा ॥
राखेसि पांडव पाँचौ भाई । गँधमादन लैगयो चढ़ाइ ॥
भीममेघसों पुनि असभाखा । जैसे अर्जुन उहिथल राखा ॥
आनि अश्व कीजै रिपु भंगा । अर्जुन रहैं युधिष्ठिर संगा ॥
भीम कही चित नाहीं डोला । पुनिसो मेघवर्ण अस बोला ॥
कस घटोतकच है बरिआरा । तुमते उपजो महाकुमारा ॥
जैसे नीर अपावन होई । सुरसरि परे परमशुचि सोई ॥
ऐसे अधम मुक्तिके संगा । होत पुनीत न्हात पुनि गंगा ॥
शिला अहल्या पातक भारी । रामचरण लगि स्वर्गसिधारी ॥
तैसे हम सब अधिक अपावन । तुमरे परश भये अति पावन ॥
भद्रावती पुरी महँ आवा । तुम वृषकेतुहि पीठि चढ़ावा ॥
चलहु भीम जैहैं अब तहँवा । भद्रावतीपुरी बस जहवाँ ॥

पौत्रवचन सुनि भयो अनंदा। निर्मल भीमसेन कुलचंदा॥
राय युधिष्ठिरके मन माना। आनव तुरँग शकुन शुभ जाना॥
केहरि कुलको यहै स्वभाऊ। जन्मत करै गयंदहि घाऊ॥
यह कहि व्यास रहे अरगाई। राय युधिष्ठिर धीर बँधाई॥
दोहा–मख सामग्री भाखिकै, निजगृह चले जु व्यास॥
कलमष हरन कथा यह, कह पुरुषोत्तमदास॥ ११॥

जैमिनिरुवाच।

चलत व्यास लागी नहिं वारा। पुनि राजा जिय परो खँभारा॥
रह भाई सँग गइ बड़ राती। लागी अनल जरै नृप छाती॥
दूरि तुरंगम अरु धन ताता। कैसे करिहौं यज्ञ विधाता॥
माधव निकट न देखिये स्वामी। सुमिरत जियमें अंतर्यामी॥
देवकिनंदन दीनदयाला। तुम विनु को करि है प्रतिपाला॥
नृपति युधिष्ठिर हरिहि पुकारा। सोच समुद्र परो बिकरारा॥
संशय परम कहौं मैं कासौं। कैसे यज्ञ करौं अघ नासौं॥
चंड सिंधु पातित पंचारी। मधुसूदन प्रभु तुम निस्तारी॥
सुमिरत कृष्णहि लगी न वारा। गरुड़ध्वज प्रभु ठाढे द्वारा॥
कमलापति अस काहु न जाना। भक्ति वछल है जाकर बाना॥
सबमें व्यापक यादवराई। प्रतीहारसों बात जनाई॥
शिव विरंचि जाकर यश भाखैं। सो प्रभु दास प्रतिज्ञा राखै॥
प्रतिहारी कह वचन रसाला। नृपमंदिर कहँ जाहु गोपाला॥
पर अपवाद सदा जे बोलहिं। द्रव्य परायो हरत जु डोलहिं॥
जे नर प्रभु तव दरश न पावहिं। ते नर नरक कूपमहँ जावहिं॥
इतनिनुमें काहि कहियत कोहू। प्रभु कस ठाढे द्वारे होहू॥
पाप विरति तजिहरि जियजानहिं। भाइनसहित तुमहिं भल मानहिं॥
प्रभु प्रतिहारी कहेउ बुझाई। हम निजजन कहँ देत बड़ाई॥
निगम वचनको मेटनहारा। राजा निकट गयो प्रतिहारा॥
धर्मतनयसों बात जनाई। द्वारे ठाढे हैं यदुराई॥

हरिके वचन जु सुने सुजाना । जैसे मृतक प्राण पुनि आना ॥
रजनी यदपि पहर द्वैजाई । सहित द्रौपदी पाँचौ भाई ॥
अतिअकुलाय तुरत उठिधाये । दूरहिते पाँचो शिरनाये ॥
दंड प्रणाम भलीविधि करहीं । हरि पदरेणु शीश लै धरहीं ॥
रुदन करैं निज मन समझावैं । श्रीयदुनाथहि अंकमें लावैं ॥
कीन्ह युधिष्ठिरकी मनुहारी । अर्जुन भीम दीन अँकवारी ॥
चरणपखारि उदक जो भयऊ । पाँचौ पांडव तेहि शिर धरेऊ ॥
रत्नजडित सिंहासन दीन्हा । मलय चतुर वस चर्चै लीन्हा ॥
अगर धूप मणिआरति साजी । अस्तुति करत सकल दुखभाजी ॥
शुक्लचमर शिरऊपर ढारहिं । प्रीति सहित आरती उतारहिं ॥
विकसे सब जस पूनौचंदा । द्वैहै यज्ञ करै आनंदा ॥
नानाविधि विचित्र करि पूजा । द्रौपदि अस्तुति करि पदपूजा ॥
जब मम चीर गह्यो दुःशासन । तब तुम पति राखी गरुडासन ॥
कौरव पांडव सूरज साखी । दारुण विपति परे तुम राखी ॥
जब जब दुःख परो अति धरनी । तब तब भार कियो प्रभु हरनी ॥
सुन्दरश्यामल मदनगोपाला । करत युधिष्ठिरको प्रतिपाला ॥
दोहा–अस्तुति कीन्ही द्रौपदी, पुरुषोत्तम सुविचार ॥
राजहि परेउ परमदुख, प्रभुविनुकिमि निस्तार॥१२॥
विनय द्रौपदी प्रभुकी कीन्हीं । विनती करैं नृपति तब लीन्हीं ॥
यज्ञसिद्ध अब होहि हमारा । जन्म सफल भा दरश तुम्हारा ॥
हमसों व्यास कहे प्रभु वचना । कहो गोपाल यज्ञकी रचना ॥
यौवनाश्वके अहै तुरंगा । भीमसेन जैहै बल संगा ॥

श्रीभगवानुवाच ।

कहैं कृष्ण सुनिये नृपराया । तुमको नाहिं लखि परै सहाया ॥
बड़ो उदर बहु भोजन खाहीं । भीमसेन यह कतहुँ न जाहीं ॥
काम सदा मंदिरमें रहई । बुद्धी अलप मन्त्रका कहई ॥
कामकाजको जो नित रहई । दारा जित ससुरे नित चहई ॥

ताके मंत्र तुरँग नहिं आवै । होय न यज्ञ बहुत दुखपावै ॥
कीन्ह राज तुमहूँ पुनि तहवाँ । जरासंध मारो वकु जहवाँ ॥
अर्जुन जबहिं प्रतिज्ञा कीनी । तब बाने जैद्रथ शिर छीनी ॥
अश्वमेध बड सोचहु राई । अमित नृपनसों होय लराई ॥
छाँडो तुरँग देव नर धरिहैं । दारुण युद्ध तहाँ सब करिहैं ॥
त्रेता राम यज्ञ भल कीना । हयके संग भ्रातलघु दीना ॥
जवनदेश कोइ गहै तुरंगा । बाँचत पत्र होइ मन भंगा ॥
सोचहिं सकल करहिं मनशोधा । रामहु ते दूसर को योधा ॥
जहँ जहँ देश तुरंगम जाई । लै धन रत्न मिलहिं ते धाई ॥
चहूँ खंड फिरि आयउ तहवाँ । लव कुशवनवासी रहँ जहवाँ ॥
दारुण कटक गहनवनमारी । जूझे सकल शूर भट भारी ॥
विषम युद्ध करि अश्व छुडावा । इहविधि अश्वमेध करवावा ॥
अवगुणकरत भीम नित डोलहिं । होय यज्ञ अर्जुन जो बोलहि ॥
परम तेज अर्जुन भुज दंडा । वैरी मारि करै शत खंडा ॥
निशिदिन भक्ति करै मन मोरी । रथअकेळ चढि गयउ वहोरी ॥

दोहा—सेवक पुरुषोत्तम कहै, माधव मन समझाय ॥
भीम कहेते हो कहा, मतो धनंजय जाय ॥ १३ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि कृष्णवाक्यं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

जैमिनिरुवाच ।

कहि यदुनाथ भये चुप जबही । गिरा गँभीर भीम कह तबही ॥
सुमिरन करौं चरण प्रभु वैसे । कुमति हमारि भई पुनि कैसे ॥
जे हममें गुण प्रभुने गाये । ते सब तवउर माहिं सुहाये ॥
हमतो अधिक करैं कछु भोजन । तुमरो हृदय कोटि शत योजन ॥
ब्रह्मादिक अरु सप्त पताला । शिखर सुमेरु नाग सुर माला ॥
बात तुम्हारि कहै को पारा । पुनि कस भा बड़ उदर हमारा ॥
हमकुयोनि गति कबहूं नाही । जाम्बवती प्रभु तुमहिं बिवाही ॥

मिले कछू पुनि भये वराही । तेहि तेहि योनि रहे तुम नाही ॥
नारिहेतु तुम दानव दलना । कीन्ह पारिजातक पुनि हरना ॥
राम पिता गृह कबहुँ न तजेऊ । क्षीर समुद्र सदा तुम बसेऊ ॥
य सब गुण तुम महँ भगवाना । मोकहँ कहो न बूझै आना ॥
जुरि बरात शिशुपालकि आई । तुम दुलहिन लै गये चुराई ॥
तेहि भय मथुरा वसन न पायहु । तब तुम द्वारावती बसायहु ॥
जरासध दानव बरिआरा । तुम देखत मैं धरि पुनि फारा ॥
इतने वचन भीमने कहे । पुनि प्रभुकर पंकज गहि रहे ॥
मैं बड़ि तुमसन कीन्ह ढिठाई । क्षमा करहु प्रभु यादवराई ॥
करब यज्ञ प्रभु कृपा तुम्हारी । पांचहु पांडवके हितकारी ॥
भली भई आये अघघातक । स्वाति सलिल पायउ जनु चातक॥
पंकज में सुरभी जस कोई । निकसे ताहि परम सुख सोई ॥
तैसे हम बूड़त भवसागर । तारहु हमैं कृष्णनयनागर ॥
हरिको भीम जु उत्तर दीन्हा । अवगुण मेटेउ प्रभु कहँ चीन्हा ॥
भीष वचन सुनकर निज काना । परमानंद भये भगवाना ॥
धर्मतनयको तुम समझावहु । अश्वमेध भल यज्ञ करावहु ॥
भीषम कर्ण द्रोन जो मारा । यहि मख किये होय उद्धारा ॥
भीम बहुरि बोल्यो सकुचाई । तुमहि कहे हम कीन्ह लराई ॥
पुण्य पाप हम कछू न जानहिं । मन क्रम वचन तुमहिं प्रभु मानहिं॥
तुम जो आज्ञा देहु गोपाला । आनिय अश्व मेटि जंजाला ॥
स्वामी भल हमार जो चहऊ । तुम समीप राजाके रहऊ ॥
यश तुम्हार दिन रैन बखानहिं । हम अब जाय तुरंगम आनहिं ॥
जो तुम विमुख होहु गरुड़ासन । ताकर निष्फल सब इन्द्रासन ॥
पंचामृत भोजन सब आना । करि अस्तुति तोषेउ भगवाना ॥
ताकी करिय कवन मनुहारा । जाकर सिरजो सब संसारा ॥
सबही जन अस अनुमति कीना । भीमसेनको बीरा दीना ॥
उभय कुमर राजा हँकराये । कृष्ण हाथसों पान दिवाये ॥

दोहा—कमलनयन राजाकर, समाधान प्रभु कीन ॥
जो जन हरि पांडवनकर, रजनी सोवै लीन ॥ १४ ॥
बीती रजनी भा भिनुसारा। उठे भीम अरु कर्णकुमारा ॥
मेघवर्ण आये सँग धाई। नायो माथ नृपतिपग जाई ॥
भीम कर्णसुत अरु घनवरना। तिनहू गहे कृष्णके चरना ॥
करि परिकरमा सुमिरे रामा। जननीको कीन्हेउ परणामा ॥
कुन्ती चलत मनहि दुख माना। मारग कहँ दीनेउ पकवाना ॥
तिहूँवीर आये पुनि तहवाँ। राजा कृष्णसहित थे जहवाँ ॥
नायो माथ कह्यो समुझाई। राखहु नृपति विप्र अरु गाई ॥
सेवहु सदा कृष्णके चरना। अहैं प्रसन्न धरणिके धरना ॥
जैसे नर सेवत यदुराई। कोटि जन्म कर पाप नसाई ॥
यौवनाश्व जो है बरिआरा। तैसे मारि करौं क्षयकारा ॥
ऐसे वचन कहत हौं तोहीं। केशवकर प्रसाद है मोहीं ॥
पुनि अर्जुन बोलो अस बीरा। आनहु अश्व सहौ बडि भीरा ॥
यौवनाश्व राजा अति दारुन। जीतहु यश चलिहै संसारन ॥
नर नारी अशीश शुभवाता। भीम जीति घर आव विधाता ॥
तीनहु जनन पंथ पहुँचाई। बिछुरत नयन नीर झरलाई ॥
द्रौपदि अरु गजपुरके वासी। रोवहिं सब वन पक्षि निवासी ॥
पिता विहीन कहैं इक माता। इनकहँ राखहु कुशल विधाता ॥
भीम विदा सबही को कीन्हों। चारहुँ वर्ण आशिषा दीन्हों ॥
राम सुमिरि कीन्हों प्रस्थाना। चलत शिखर सब होय मशाना ॥
अगणित देश गनैको पारा। वन पर्वत अरु विषम जुझारा ॥
पवन वेग सम तीनहु धावहिं। कोउ वायें कोउ दाहिन लावहिं ॥
सहसन योजन भूमि सिरानी। भद्रावती पुरी नियरानी ॥
महा मनोहर उत्तम थाना। घर घर बाँचत वेद पुराना ॥
विशिख शिखर ऊपर कर साजा। तहँ रहे यौवनाश्व बड़राजा ॥
महागहन नाहिं मारग सूझहि। दिन अरु रैन तहाँ नाहिं बूझहि ॥

तीनों गये सरोवर तीरा। योजन सात नीर गंभीरा॥
होय धूमते पंथ न पावहिं। ब्याकुल होकर दशदिश धावहिं॥
वेद शास्त्र अरु विष्णुपुराना। तिनके शब्द सुनिय नहिं काना॥
मठ देवल द्विज भूमि विशाला। देख तनीके अधिक रसाला॥
चहुँदीशी कंचन केर पगारा। खाई जानौ सिंधु अपारा॥
देखत भीम भयउ अनुरागा। शोभित वन पुनि बरणे लागा॥
कुसुमित फलित अनलपरसारा। सब द्रुम नवे फलनके भारा॥
अमृतफल द्रुम देखिय कैसे। माधवगुण ग्राहक जन जैसे॥
श्रीफल फल अरु सघन सुहाये। देखेउ द्रुमजे अति छवि छाये॥
जैसे साधु पुरुष मनुहारी। फलहिं सदा वे द्रुम उपकारी॥
ताल तमाल पानकर वृंदा। देखत भीम वँधेउ मनफंदा॥
शुभ्र खजूरि बहुतविधि फलही। जे नर खात रूप मन हरही॥
नींबू दाड़िम अरु सारंगा। चंप छुहारे महदुखभंगा॥
महारसाल सदा फल तहँवा। कोकिल भ्रमर रहैं नित जहँवा॥
नंदनवनकी पटतरि अहई। ऋतुवसंत संतत तहँ रहई॥
शीतल छाँह सुवासित चंपा। आदिहु अंत सुमनलगि झंपा॥
करण कागदी महासुरंगा। फलत जँभीरी अरु नारंगा॥
अमल जामुनी अरु वादांवा। फलहि वदाम मनोहर आंवा॥
कटहर वड़हर दाड़िम कंजा। फले छुहारे दुखके भंजा॥
इमली अमृत फल जनु आये। बदरी खात महासुख पाये॥
कुंद पाडरी केशरि वरना। शाल अशोक पुष्प मनहरना॥
कंचनके वर युवती जाती। मंगलमंत्र पुष्प बहुभाँती॥
कदली बहुफल महारसालः। वर्णि न जाय वहुत द्रुमजाला॥
अगणित तरु वरकंटक रहई। हरित पलाश सदा सुख चहई॥
वनस्पती को वरणै पारा। देखिये तहाँ अठारह भारा॥
भ्रमर और बोलत शुकसारी। करैं अनंद मयूर प्रचारी॥

दोहा—वन अरु शिखर मनोहर, देखेउ भीमभुवार ॥
पुरुषोत्तमजन भाषही, लागे करन विचार ॥१५॥

देखत मोहेउ वन चहुँफेरा । आये वेगि दुपहरी बेरा ॥
अब कह करियत हैं वरवीरा । जायो चहत सरोवरतीरा ॥
रत्नशिला भलघाट बनावा । जहँ यह तुरँग पिआऊ आवा ॥
सरतट तरु वरणै को पारा । दिनमणि अछत सदा अँधियारा ॥
कंचन हंस रहैं नित वैसे । देखियै मानसरोवर जैसे ॥
सघन गहन द्रुम सरके तीरा । निर्मलघाट मनोहर नीरा ॥
कुसुमित वे द्रुम महारसाला । सफल रहैं सब दिन सब काला ॥
जलपक्षी सब कंचन वरना । कोक कमोद महादुख हरना ॥
अति गंभीर सुहावन फला । निशिदिन भ्रमर रहै तहँ भूला ॥
सदा गभीर न कबहुँ सुखाई । नीरजीव कतहूँ नहिं जाई ॥
तहँ पै बैठि करिय कछु साजा । नगर हमार नाहिं कछु काजा ॥
याहि थल नीर पिआवन ऐहैं । तो हम भले तुरंगम पैहैं ॥
बड़ बड़ वीर रहैं रखवारी । नगर न होव कछू पैसारी ॥
जिमि धन कृपण न बाहर आवै । प्राणहुते अतिप्रिय तेहि भावै ॥
तीनों वीर मन्त्र अस कीन्हा । सघन वृक्ष तर आसन दीन्हा ॥
तीनहुँ वीर रहैं इक संगा । जबलागि देखे नयन तुरंगा ॥
सावधान ह्वै करियै साजा । अति आतुर भय होइ न काजा ॥

दोहा—बैठे करहिं विचार मन, महा सरोवरतीर ॥
को गहिहै को जूझिहै, बूझहिं तीनों वीर ॥१६॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि भीमवाक्यो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

जैमिनिरुवाच ।

कह वृषकेतु करिय कछु रचना । भीमसेन सुनि बोले वचना ॥
जो क्षोहिणिदल दश परचंडा । तुम प्रसाद करिहौं मैं भंडा ॥

जैसे कल्मष भरो शरीरा । नाशै छुवत गंगकर नीरा ॥
तबलगि विष तनु भलो सतावै । रुद्रपाश जबलगि नहिं पावै ॥
मोह फाँस बन्धन है तबलगि । तत्त्वविचार न बूझिय जबलगि ॥
भजहु न वासुदेवके चरना । तबलग होइ जन्म अरु मरना ॥
तबलग नर यमलोक बसाई । जबलग पुत्र गया नहिं जाई ॥
तबलग रिपु जानिय बरियारा । जबलगि भीम न गदा प्रहारा ॥
तुरँग गहनकी सिद्धि विचारहु । नृपति सहित दश क्षौहिणि मारहु ॥
भीम कहै वृषकेतु सुनावहि । तेहि क्षण हस्ति पियाऊ आवहि ॥
गरुअ गयंद गिरीसम तूला । अति बरियार समर अनुकूला ॥
बाजत घंट घोर अति लावहि । चलत महाथल डोलत धावहि ॥
कृष्ण वर्ण जनु पर्वत बाजहि । सुन्दर दशन फटिकसम राजहि ॥
तजि वन कमल मधुप मन मोहै । तेहि पाछे अबलक ज्यों सोहै ॥
करिहा पवनवेगि जिमि धावहिं । वीर धुरीन संग सब आवहिं ॥
तेहि पाछे सब तुरी तुषारा । अगणित वर्ण गनै को पारा ॥
कुलक एक करवगिया ताजी । हंसुल रेणु गनै को बाजी ॥
समदा बोहर हरि अगराना । हीरा हेवर पचकल्याना ॥
नीरतन्त गयंद है चाला । नीर दोहकंठ जयमाला ॥
खरबूजा अरु बारुकबाहा । बिनु पंखन जनु चहै उड़ाहा ॥
अपर श्याम हय कहे विशाला । मड़िलीला अर्गजा रसाला ॥
श्यामकर्ण हय गगन उड़ाही । सुन्दर वर्ण बरणि नहिं जाही ॥
अमित सिंधु जातक है पोषा । सब आत चंचल रवि सर चोषा ॥
द्युतिगतिचपल चहूँदिशि धावहिं । महँगे मोल मनुज कित पावहिं ॥
हेमडार सकलात उहारा । पद्मरागके मणिमय हारा ॥
चारि चरण दामिनि सम साजहिं । मणिरसना नीकी धुनि बाजहिं ॥
मंजुल बहुत विचित्र अपूरी । नाचत गई गगन लग धूरी ॥
हृष्ट पुष्ट सुन्दर तनु शोभा । देखत जाहि पुरन्दर लोभा ॥
बागडोरि सेवक सँग साजा । देखिये मुकुट बन्ध जनु राजा ॥

कूदै अरु हिनिहिनाहि बहूता। किस मिस देखिये सैन सहूता ॥
अग्नि तत्व ये जनु गोक्षीरा। बहुतक कंचन वर्ण शरीरा ॥
दुःसह बाजन बहुत बनावा। कालमेघ जनु अंबर छावा ॥
ध्वजा अकाश लगे सब आवहिं। चल गयंद जनु पर्वत धावहिं ॥
रेणु भयावन उड़ी अकाशा। देखत पांडव उर भइ आशा ॥
महारथी सारथी विशाला। देखत एक एक जनु काला ॥
संग अनेक धरे धनु बाना। आये कुमर करे संधाना ॥
पायउ अश्व हृदय सुख भयऊ। सकल सोच तीनहुको गयऊ ॥
शूरवीर रणधीर कमंडल। फरससहित जनु आय अखंडल ॥
ध्वजा गिद्ध एक बैठि उड़ाना। देखत सबकर जीव डराना ॥
जंबुक कालखेत भल बोलहिं। अगनित दैत्य पंख सम डोलहिं ॥
गिद्ध उड़ाना काल हमारा। मनविस्मय भा शोच विचारा ॥
युद्धविशारद भो बड़वीरा। मानस सोच आय सरतीरा ॥
मेघवर्ण कह जे सब मारहु। भीम कहै क्षणएक विचारहु ॥
व्यासदेव जो कहा तुरंगा। सो नाहीं दीखत है संगा ॥
कह वृषकेतु तुरंग विचारहु। विना प्रयोजन ये कस मारहु ॥
ये तो कटक सबै हम मारब। अश्वविना पुनि हम न सिधारब ॥

दोहा–जबलागि अश्व न देखिये, तबलागि करिय न जूझ ॥
नृपति जान वर दीजिये, देखि कुमर मन बूझ ॥ १७ ॥

कटक सरोवर करि अस्नाना। वेगि भवनको कीन्ह पयाना ॥
योधा वीर सबै सुखसाजा। भद्रावती गये फिरि राजा ॥
अशकुन सबहि पंथ बहु भयऊ। करत विचार नृपति गृह गयऊ ॥
यहै अंत वृषकेतु कुमारा। विस्मय भा जिय सोच सँभारा ॥
लागेउ ठौर नीरके जूना। तीर सरोदक देखिये सूना ॥
कुमरनसंग तुरंगम आयउ। विधना हम जानै नहिं पायउ ॥
मंजन करन आव नृप जबही। गयउ तुरंगम जानहु तबही ॥
अंबर बदल विचित्र विशेखा। अगणित आज तुरंगम देखा ॥

आनँद बहुत भयो असरारा । क्षौहिणि दशते अधिक अपारा ॥
वायुवेग है तिस तिथ वरना । निरखे बहुत तुरंगम समना ॥
निकुला चालि तेज मंजूरा । देखत हयवर ते जनु शूरा ॥
आय गये बहुतै भइ वेरा । अब नहिं हेर तुरंगम केरा ॥
कर्णसुवन चिंता तव कीन्हा । वोलो वचन भीम रँग भीन्हा ॥
अगणित वाजि आजु सब आये । चंद्रवदन सों चलत सुहाये ॥
हम तीनहु आये जेहि कारन । सो आवा नाहिं लागि विचारन ॥
बुधजन जे तहँ घरी विचारत । शुभ सुघरी तब द्वार निकारत ॥
अभिप्राय समझो कछु वीरा । घरही बाँधि पिबावहु नीरा ॥
हय विन हमाहिं भयउ धनवासा । धर्मरायको यज्ञ निरासा ॥
दान विना दारिद्र सतावै । पुत्र विना नर सुख नहिं पावै ॥
स्त्रीजित जो मानुष होई । संग कुटुम परिहरै कि सोई ॥
मंत्रीहीन होय जो राजा । कवहूँ कटक करै नहिं साजा ॥
पुण्यहीन जिमि सुख नहिं पावै । पर अपवाद सुखहिंमें गावै ॥
हरिकर मंत्र भजत जे नाहीं । भवसागर ते किमि तरि जाहीं ॥
जे नर कबहूँ हरिहि न ध्यावहिं । ते कवहूँ कैसे सुख पावहिं ॥
तैसे वचन सुनौ तव अवहुँ । हय विनु गजपुर जाहु न कवहूँ ॥
कृपासिंधु है जाकर वाना । वचन गोविंद कराहिं परमाना ॥
जासु शरीर सत्य नित वसई । तासु सहाय सदा प्रभु करई ॥
पुनि वृषकेतु न वोलन पावा । तवलगि तुरँग पियाऊ आवा ॥
संग रथी सारथी अनंता । घेरे चलहिं बहुत सामंता ॥
सवल शब्द केहरीसन जूझा । धूरि गगन भा परम असूझा ॥
पट्टे खड्ग फरी गहि हाथा । ढोरत चमर चले सब साथा ॥
क्षुंदर चमर कंठ शिर साजत । बहु विधि क्षुद्रघंटिका बाजत ॥
शंख बजावहिं चतुर विशाला । रत्न जटित मणिहार रसाला ॥
गाथा वनी पुष्पकी माला । कलँगी सोहै परम विशाला ॥
कोटि चंद्र है तासु लुनाई । पुरुषोत्तम हय वरणि न जाई ॥

पीली पूँछ कर्ण दोउ श्यामा। वदनचंद्र तन मन अभिरामा॥
भूपति बहुत भये असवारा। जय जय शब्द होय झनकारा॥
मंगलघोष काल नित आवहिं। कृष्ण अधर मुखधूप धुपावहिं॥
चरण धरणि लागहि नाहिं जानहिं। घन महि जिमि दामिनी बखानहिं॥
बहुत भाँति बाजन सब बाजहिं। गर्जत वीर मनहुँ रण साजहिं॥
हय हर्षत गर्जत बहु हाथी। क्षौहिणि दश हैं जो वर साथी॥
जैसे चिह्न कहे ऋषि व्यासा। तैसोइ तुरँग भई मन आसा॥
भीमसेनकी आज्ञा लीन्ही। मेघवर्णबुधि चितमहँ दीन्ही॥
भीम कह्यो तुम सुनहु कुमारा। कैसे लैहौ विषम जुझारा॥
मेघवर्ण पुनि उत्तर करई। आज्ञा माँगहु जीव न डरई॥
कृष्णप्रसाद युधिष्ठिर काजा। गहौं तुरंग वधौं सब राजा॥
बालक जानि अंकमें लइये। विथा न होइ बहुत सुख पइये॥
तैसेहि तुरँग गहो रणधीरा। तृणवर लेखहुँ जे सब वीरा॥
सहित पुत्र गहि राजहि आनहुँ। सत्य युधिष्ठिर नृपको मानहुँ॥
जीति शत्रु रण करौं मशाना। भीम प्रतिज्ञा करौं प्रमाना॥
भीम कर्णनंदन मन बूझहु। मोहि जियत कह तुम रण जूझहु॥

दोहा–तुम तो बैठो वृक्षतर, मैं गहिलावौं घोर॥
मेघवर्ण विनती करे, पाछ सम्हारहु मोर॥ १८॥

सुमिरत जात भीमके चरणा। गर्जत चलेउ कुँवर घन वरणा॥
गिरिवरते नीचे जनु आया। कीन जाय रण राक्षस माया॥
छिन एक माहिं भयो अँधियारा। कालमेघ जनु उठे अपारा॥
दारुण बहु दामिनि दमकाई। लागेउ वज्र शिला घहराई॥
तेहि महँ सिंहनाद करि वीरा। भय मानहिं रिपु जे रणधीरा॥
व्याकुल भये सबहि दुख माना। महारथीको गौ अभिमाना॥
देवदत्तको भा उतपाता। मानस करि कहिये कुछ बाता॥
मेघवर्ण तनु रूप बढ़ावा। देव विमान न मारग पावा॥
यहि अंतर सुर स्वर्ग निवासी। मगवासिन विनती परकासी॥

विट्ठल जाय सभा भय ठाढ़े । सुनहु न स्वामी दैयत बाढ़े ॥
शुभ अरु अशुभ न जानै बाता । आगे पुनि का करै विधाता ॥
लागो काहि न इंद्र गुहारी । करिहैं सुर नरकी रखवारी ॥
सुनिकै इंद्र क्रोध उर जागा । सब देवनसों पूँछन लागा ॥
को जानै को आव प्रचंडा । दानव आजु करौं शतखंडा ॥
देवन अपने अस्त्र सँभारा । चले क्रोध करि सुभट्ट अपारा ॥
सैन बहुत बाजन अतिबाजा । आयउ मेघवर्ण जहँ साजा ॥
तब देवन जिय मंत्र विचारा । पठवा दूत शमन कदँरारा ॥
सेवक सुरपति वेगि बुलावा । आवहु देखि दैत्यको आवा ॥
चलो दूत आयो पुनि तहँवा । सुंदर मेघवर्ण है जहँवा ॥
कंपत डरत दूत शिर नाया । कहेउ जाय मोहि इंद्र पठाया ॥
हमसों सत्य कहौ तुम वीरा । तुम भय स्वर्ग न बँधै धीरा ॥
को तुम अहो इतै कस आये । कहौ आपने वचन सुहाये ॥
पल एक वीच वीररस राखा । कोमल मेघवर्ण तब भाखा ॥
कहेउ इंद्रसन जनि भय मानहु । मेघवर्ण मोहि वे नहिं जानहु ॥
भीमक पुत्र घटोत्कच जायो । यज्ञ सहाय करन मैं आयो ॥
यौवनाश्वके अहै तुरंगा । लैहौं नाहिं करौं रिपु भंगा ॥
करि हैं यज्ञ युधिष्ठिर राजा । तेहिते कारन अहों रण साजा ॥
सुन यह वचन दूत पग गहई । आयो जहाँ पुरंदर रहई ॥
कारण सबै कहेउ समझाई । सुनौ यज्ञ पुनि विधि मनलाई ॥
भीमवंश पुनि महा जुझारा । मेघवर्ण यह महाकुमारा ॥
सुर सुख भयो सुनत यह वचना । कीन्हीं कुँवर युद्धकी रचना ॥
जौने भाँति तुरंगम लीन्हा । पुरुषोत्तम तब रण कस कीन्हा ॥
देखत देव सुखडे विमाना । मेघवर्ण सुमिरे भगवाना ॥
दश दिशि अंधकार जनु जागी । आये वीर जहाँ रण वागी ॥
लखियत प्रलयकाल जनु आगी । कायर चले दशहु दिशि भागी ॥
मोहेउ कटक रहे कर बाँधी । उठी अकाश धूरि जनु आंधी ॥

सैन सबै विह्वल भइ भारी । दामिनि दमकि महा अँधियारी ॥
छिन छिन धरणि उलटि जनुभाना । कौने वीर गहे कर बाना ॥
काहू धावत गहि नहिं जाना । अतिव्याकुल रण भयो मशाना ॥
बरसहिं दारुण शिला पषाना । रक्षक सबके श्रीभगवाना ॥
पवनप्रचंड प्रलय जनु भयऊ । दश क्षौहिणिदल दशदिशिगयऊ ॥
सिंहनाद कीन्हेसि रण जाई । गहेसि तुरँग लै गगन उड़ाई ॥
गहत तुरँग शोभा कस पायो । जनु रवि बिंब धरणिमें आयो ॥
कुंडल क्रीट रत्न मणि हारा । नीलमेघ करि गये अँधियारा ॥
यज्ञवाजि लीनेउ उर लाई । निर्भय वीर न कहूं डराई ॥
कोयौं आव कहत सब आवहिं । काँपत नगर न सन्मुख धावहिं ॥
जे पषाण उबरे परचंडा । अगणित बीर होत शतखंडा ॥
कटक भयावन भयो निराशा । मेघवर्ण लागेउ आकाशा ॥
सुमन वृष्टि नभते अति होई । धन्य कुमर भाषै सब कोई ॥
धन्य युधिष्ठिर पाँचो भाई । जिनके कुल तुम जन्मे आई ॥
यज्ञतुरंग अकेलहि लीन्हा । तीनहु भवन सुयश तुम कीन्हा ॥
स्तुति करि सुर स्वर्ग सिहाये । मेघसुवर्ण निकट रण आये ॥
अति प्रचंड कोऊ नहिं बरजै । पुनि पुनि मेघनाद करि गरजै ॥

दोहा—लीनेउ तुरंग पैज करि, बरनत दास बखान ॥
शिला पषाणनु जे बचे, ते टेरत हैं आन ॥१९॥

राजद्वार पुनि आयउ राजा । गहेसि तुरंग भई बड़ि लाजा ॥
प्रलयमेघ कछु अंग न सूझा । कासन राय करें हम जूझा ॥
राजद्वार महँ अति अंधेरा । भद्रावती पुरी भयो सोरा ॥
गये पंगु शिर टूटेउ केसा । रुधिर प्रवाह भयावन भेसा ॥
करि अँधियार आय सुनि राजा । सोच रह्यो सब सहित समाजा ॥
लीन तुरंग कछु शंक न मानी । हम सबको तृणके सम जानी ॥
सुनिकै वचन राउ रिसिआना । सहित पुत्र बल मेघ समाना ॥
हयकर हरण सुना नृप जबही । दुख अरु क्रोध भयउ जिय तबही ॥

केहिकर मीच आइ अब संगम । केहि लीनो रणयज्ञ तुरंगम ॥
सुर नर नाग दैत्य जो होई । यम गृह आजु पठावहुँ सोई ॥
राजा यौवनाश्व बरिआरा । क्रोध विकल मत कछु न सँभारा ॥
यहि अंतर आये सब वीरा । आय जुहारे राजा तीरा ॥
नृपति दिव्य रथ आनि बहूता । अति दारुण जाकर हयसूता ॥
काल अनल सम वरणो योधा । सहि न जाय जिनकर अति क्रोधा ॥
बख्तर बांधि प्रचंड जुझारा । आये नृप कहँ कीन्ह जुहारा ॥
समाधान राजाकर कीन्हा । हम सब देखिहि केहि हय लीन्हा ॥
जो हमार सबकर भल चहहू । भद्रावतीपुरी नृप रहहू ॥
सुनिकै वचन रहे रणधीरा । कीन्हे विदा धुरंधर वीरा ॥
नृपति कहा तुम हयलगि जाहू । तुरँग समेत ताहि धरि लाहू ॥
सेनापति सब बोलि तुरंता । अगणित वीर न जानिय अंता ॥
सहस चारि तहँ शूर प्रकाशा । रूँधिन पंथ जो हय आकाशा ॥
खुर रव कटक न सूझै धरनी । सुभट प्रचंड युद्धगति वरनी ॥
जहँ दश क्षौहिणि वीर वितारा । तनु परिहरि जनु स्वर्ग सिधारा ॥
मानस जन्म शाप कछु भयऊ । छुवत तुरंगम सो तरि गयऊ ॥
हमरे हृदय रहा पछितावा । खड्ग घाव नहिं मारन पावा ॥
कटक बटोरि वीर सब हेरहिं । बाणन सकल दशहुदिशि घेरहिं ।
मेघवर्ण आयो तेहि ठाँवा । वृषभध्वज्ज भीम है जहँवा ॥
दीन्ह तुरंगम कीन्ह प्रणामा । फिरि करि चले करन संग्रामा ॥
समाचार सब कहे प्रणामा । जैनै भाँति तुरंगम आना ॥
करहु अश्वकी तुम रखवारी । मैं आवौं दारुण रणमारी ॥
जबलग सेवक मृत्यु न पावै । तवलग तुमहिं न कोउ सतावै ॥
इतना कहि पुनि चलेउ कुमारा । गर्जत आव प्रचंड जुझारा ॥
हाहाहू तब दारुण होई । अद्भुत कथा न जानै कोई ॥
महा महा सब वीर जुझारा । क्रोधानल सम बाण सँभारा ॥
जोपै वीर न मारन पावौं । राजहि मुख कैसे दिखरावौं ॥

जब घन वीर भये रण ठाढ़े। कोटिन बाण सबन मिलि काढ़े ॥
मेघवर्ण जब सन्मुख धावै। एकौ वीर निकट नाहिं आवै ॥
यह अकेल वे अधिक अपारा। जैसे सिंह गयंदहि मारा ॥
पुनि बहुरहिं सब महा जुझारा। दारुण आनि करहिं शरमारा ॥
बरसाहिं विषम बाण करि फंदा। निकसो कुमर मनहु घनचन्दा ॥
महाकाल जनु रण अनुसरई। शपथ युधिष्ठिर नृपकी करई ॥
भारत मेघवर्ण रण फिरई। कोऊ वीर न सन्मुख भिरई ॥
नृपति शंख सब वीर रिसाये। महावीरके सन्मुख धाये ॥
दशांदिशि विषम बाण बहु छाये। वीर धीर रण सन्मुख धाये ॥
बाण जलोद बँधो रणधीरा। व्यापन लागेउ सकल शरीरा ॥
पांडव कुलको यहै स्वभाऊ। रण महँ देइँ न पाछे पांऊ ॥
अगणित वीर करै क्षयकारा। मूर्च्छि परेउ रण विषकी झारा ॥
जबहीं धरणि परेउ रणधीरा। कोई वीर जाय नाहिं तीरा ॥

दोहा जब देखेउ रणमूर्च्छित, हाँक दीन्ह वृषकेतु ॥
जाय अकेलो रण धस्यो, मेघवर्णके हेतु ॥ २० ॥

हांक देत रण अन्तर भयऊ। दश क्षौहिणिदल दुहुँ दिशि गयऊ ॥
करि विलाप गहि अंकम लीना। भीमसेनको आनि सुदीना ॥
दश क्षौहिणि दल यह संहारा। परेउ मूर्छि रण विष कर झारा ॥
आनि तुरंग बहुरि रण धावा। पटतर मेघवर्णको आवा ॥
यह अकेल वे अगणित वीरा। पांडव लागि सही इन पीरा ॥
सोचत जिय दुख भीम निदाना। दारुण कटक बहुत नियराना ॥
तेहि अवसर वृषकेतु कुमारा। धनु पिनाक तेहि समय सँभारा ॥
भीमसेनके बंदेउ चरणा। सौंप्यो तुरँग कुमर घनवर्णा ॥
सुमिरेउ रामचरण दुखहारी। धनु पिनाक हरिनाम सँभारी ॥
भीमसेनसों कहि पुनि बाता। सबहीकर मैं करब निपाता ॥
जिमि पिनाक गहि श्रीभगवाना। देखत दानव होहिं मशाना ॥
तैसेहि आजु करौं क्षयकारा। देखत सुर नर सब संसारा ॥

क्रोधित आयो प्रलय पहारा । सबके गर्व हरे उहि बारा ॥
हाँक देत सबकर बल नाशा । अंधकार जनु रवि परकाशा ॥
डोले शेष दशौं दिगपाला । शंकित वीर प्रलय जनु काला ॥
समिटि एक दिशि भये सब योधा। मानहु मुनिवर सागर शोधा ॥
कहिय कहा संग्राम दुहेला । धरणि जीव तकि देखि अकेला ॥
केहिके बालक तुम रणधीरा । रवि समान देखिये शरीरा ॥
देश हमार नहीं परदेशा । कीन्ह युद्ध जनु हरि शिशुभेसा ॥
स्वामिकार्य एक अहै गणेशा । एकु अनल एक पवन प्रवेशा ॥
जेहि हय लियो सु इनके संगा । छेकि धरौ गहि बाँधहु अंगा ॥
धाय धरहु कह करहु विचारा । इनहू कर कीबे अँधियारा ॥
वीर प्रचंड समर महि धावहिं । गर्जत एकौ निकट न आवहिं ॥
फिरे सहस्रन छेके जबहीं । कर्णसुवन शिर काटेउ तबहीं ॥
बाण भयानक वरणि न जाई । अग्निमथन धरणी धसिजाई ॥
अगणित शूर गनै मैकेता । परे धरणि पुनि जनु कुरखेता ॥
मथे रथी सब बरसाहिं बाना । कुंजल घंट शोक करि आना ॥
करत नाद जिमि सिंधु अपारा । मत्त गयंद होहिं द्वै फारा ॥
महारथी सब होहिं मशाना । पायक अंत न काहू जाना ॥
गज तुरंग रथ देखिय नाहीं । विषम बाणके तीरन जाहीं ॥
तब वृषकेतु सहै को पारा । प्रलयकाल सम बाण सँभारा ॥
योधा युद्ध करन जब आये । एकौ जियत जान नहिं पाये ॥
जैसे सुमिरत श्रीयदुराई । संचित कल्मष जात नशाई ॥
तैसेहि सैन होइ संहारा । बाणवीर वृषकतु कुमारा ॥
एकौ वरि न रहेउ जुझारा । सब सेना वृषकेतु सँहारा ॥
जे कादर सब कौतुक आये । ते पुनि बहुरि नगरको धाये ॥
उबरे जीव मुये नहिं घायन । लेटत आवत चलत न पाँयन ॥
चढी धवल गृह सुन्दरि जोवहिं । भद्रावती पुरी सब रोवहिं ॥
तो कोउ पुरुष रह्यो घरमाहीं । तेहि पर सब सुन्दरी रिसाहीं ॥

हरिते विमुख होतहौ वीरा । अन्तहु इह तनु रहै न थीरा ॥
चाढ़ि तुरंग रण सहौ न भीरा । केतिक दिवस जीव वरवीरा ॥

दोहा–साधू संग दरिद्र भल, नहिं असंत संग राज ॥
पुरुषोत्तम हरि चरणतर, मरिये तौ बड़ काज ॥ २१ ॥

जैमिनिरुवाच ।

जे वृषकेतु न रणमें मारा । तिन गुहारि कीन्हीं नृपद्वारा ॥
जोहि हय लीनसु तौ हम मारा । यह तौ दूसर और कुमारा ॥
मूर्च्छित:रण महिं लीन्ह छुड़ाई । प्रलय कष्ट परिजनु जनआई ॥

दोहा–सब योधा रण जूझेऊ, बच्यो न कोऊ आज ॥
जो बल होय तो जूझहू, नातरु छाँड़हु राज ॥ २२ ॥

सब योधा मिलि कीन्ह गुहारी । पुरुषोत्तम अस कहेउ विचारी ॥
हरेउ तुरंग हनेउ सब राजा । विह्वल यौवनाश्व रण साजा ॥
तमकेउ नृपति नयन भये राते । उवरे धीर नु बूझहि बाते ॥
उन सँग केतक है दल सेना । बल केतिक मोसन कहु वैना ॥

दूत उवाच ।

सुन राजन दुःसह रणमाहीं । तीनहुँ जन चौथा कोइ नाहीं ॥
एकहि आय तुरंगम लीना । दूसर रणमशान आति कीना ॥
तीसर नाहिंन रणमहँ वैसा । देखिये जनु गिरिवर है जैसा ॥
हम नहिं जानेहु तिनकर भेवा । नर नाहिं होयँ अहैं वे देवा ॥
लीन्ह तुरंग कीन्ह रण पेला । देव विना को आव अकेला ॥
करौं विषम रण अश्व छुड़ावौं । तीननको यमसदन पठावौं ॥
इमि प्रस्ताव करत आनन्दा । आये भीम जहाँ कुलचन्दा ॥
धनि बालक अकेल रण साजा । कुंजर मारत जनु मृगराजा ॥
मरत शंक हिय नैक न माना । योगेश्वर जस प्रभुका ध्याना ॥
भीम सराहत लगी न वारा । आयउ राजा विषम जुझारा ॥

लागि गुहारि सबै रण आये । भद्रावति कोउ रहन न पाये ॥
बालक वृद्ध शूर जो वीरा । गर्जत चले महारणधीरा ॥
राजा यौवनाश्व अस भाखा । पुत्र सुवेग नगरमहँ राखा ॥
राज्य सौंपि कीन्ही रखवारी । लोपेउ सूरज भै अँधियारी ॥
रथ तुरंग अगणित मै मन्ता । घेरि चले बहुतक सामन्ता ॥
उड़कर धूरि गगन लगि वागी । उठे पताल नाग सब जागी ॥
बहुत भाँति लागे रण बाजन । सुनताहि शब्द देश लगे भाजन ॥
हनत निशान नृपति रण आवा । दल सँहार वृषभध्वज धावा ॥
देखेउ रणहि वृकोदर जबही । कर्णसुवन सन बोलेउ तबही ॥
तुम अब रहौ करौं मैं जूझी । देखो कुवँर आपु मन बूझी ॥
पुनि वृषकेतु उतर अस दीना । बाण धनुष अबही कर लीना ॥
तीन लोकके आवैं वीरा । तबहुं न मानहुँ शंक शरीरा ॥
यह तौ एक देशकर नायक । युद्ध न करिहै हमरे लायक ॥
यह नृपसैन वरी मैं भीमा । सन्मुख हेरत लाज न जीमा ॥
हौं रण मथौं कृपा गोपाला । तुम हयकर कीजो प्रतिपाला ॥
तबलागि तुमहिं युद्ध नहिं करना । जबलागि जागै नहिं घन वरना ॥
हमरे युद्ध करे कह होई । जबलागि तुरँग न जुगवै कोई ॥
सुनहु भीम यह थिर नहिं देहा । अन्तकाल जारि ह्वै है खेहा ॥
तरुणाई चपला थिर नाहीं । जैसे मेघपटलकी छाहीं ॥
धर्म सुयश थिर है संसारा । पुरुषोत्तम नल कीन्ह विचारा ॥
पुनि अति बली भीम अनुसरई । वृषभध्वजको पछ मन करई ॥
क्रोधित कुमर बहुरि रिसिआना । बोलेउ वचन निगम परमाना ॥
प्रथमहि मोरि वरी यह सैना । सन्मुख हेरहु लाज न नैना ॥
है सुंदरि शृंगार करि आई । मैं करिहौं क्रीडा रण जाई ॥
अगणित बाण विषम विष भारी । जनु नखघात करहिं वर नारी ॥
सन्मुख ह्वै योधा रण धावहिं । जानहु देव अंगना आवहिं ॥
जहँ श्रुत सेज करै रण सैना । तहँवा ससुरण देखव नैना ॥

राखो धर्म रहै यह वारा । मैं रण महा करौं संहारा ॥
सुनकर भीम बहुत सुख माना । जाहु पुत्र रण करो निदाना ॥
तजिय लाज जब करिय शृँगारा । तब मैं करिहौं गदा प्रहारा ॥
जब सुतवधू निलज ह्वै धावै । कबहूँ ससुर ताड़ना लावै ॥
तेहिकर दोष कबहुँ नहिं लागत । जैसे गुरु निज शिष्य पढावत ॥
कहा भीम रण पुत्र सिखावहु । जयाति पत्र कर द्रुम वितरावहु ॥
ते बडवीर भये असवारा । तुम अकेल पैदल सुकुमारा ॥
गहि धनु बाण चले रणधीरा । तेजपुंज अति धर्म शरीरा ॥
दोहा—चले कुवँर वृषकेतु रण, भीम प्रदक्षिण लाय ॥
पुरुषोत्तम हरि सुमिरत, जूझन चले बजाय ॥ २३ ॥
यहि विधि रणमहँ होइ अनंदा । करहिं विषम रण शर बहु फंदा ॥
लागत नख जनु अधिक सनेहा । को वरणै सब विधि रण येहा ॥
सोपपान करि रुधिर जु आवै । जानहु वीर उछाह उठावै ॥
कर्णसुवन रण क्रीडा करई । गजशिर टूटि हार जनु परई ॥
कामुक पुरुष नवीन लहावै । तैसे गजमुक्ता फिरि आवै ॥
राजाकेर कटक भा ऐसा । ऋतु वसंत कमलन वन जैसा ॥
जहँ मारै वृषभध्वज बाना । जनु जलजंतु तडाग सुखाना ॥
यौवनाश्वके जेते वीरा । कोऊ सन्मुख धरै न धीरा ॥
हाहा दूत अकूत असूझा । कर्ण पुत्र सन कोउ न जूझा ॥
सुंदर वदन मनोहर देखत । राजाको तृणवत कर लेखत ॥
जो नर सदा गोविद विचारै । कहौ सो वो कैसे रण हारै ॥
राजा कटक विमुख सब भयऊ । पुनि नृप निकट कुमरके गयऊ ॥
आपुन चढेउ नृपति गज आई । कुमरहेत रण दीन पठाई ॥
बाट पैड़ देखहु मन बूझी । रथ चढि कुवँर करहु तुम जूझी ॥
एक बालक आयो परदेशा । कीनेउ समर नाहिं न दुख लेशा ॥
दश दिशि दिखियत कटक संहारा । अब तुम कुमर होहु असवारा ॥
आपन नाम कहौ समझाई । गोत्र जननि तुम देहु जनाई ॥

बूझहु कुल मैं करहुँ विचारा। तुम तो इमि जिमि शंभुकुमारा ॥
धन्य वंश जहँते तुम भयऊ। कबहुँ न पछमन रणमें गयऊ ॥
सावधान राजा अरु सैना। बोलेउ कुमर मनोहर वैना ॥
कुलकश्यपते भयो प्रकाशा। सहस किरणि जो तमअघनाशा ॥
ताकर पुत्र कर्ण सुनु राजा। नाम लेत उपजै बड लाजा ॥
जब द्रुपदीकर खैंचेउ चीरा। बैठे सभा बड बड बीरा ॥
दुर्योधन उर कीनी धरहरि। ताते नाम लेत जिय थरहरि ॥
धर्मतनय कहँ बहुत सतायो। करि कुरखेत अमरपद पायो ॥
कर्ण पिता हम हैं वृषकेतू। लीन्ह तुरंग यज्ञके हेतू ॥
भूप युधिष्ठिर आज्ञा दीना। तब हम आय तुरंगम लीना ॥
नहिं रथ लैहौं दीन तुमारा। अवर मँगावहु बहुत गुहारा ॥
जब लैवो रथ देखहु बूझी। पुनि तुमसन करिहौं नहिं जूझी ॥
जाके रथ चढि करिये साजा। तासन युद्ध न कीजिये राजा ॥
सुनहु कुमर मैं कहहुँ विचारी। वचन सत्य श्रुतिमत अनुसारी ॥

दोहा–वचन कहे नृप बार बहु, कुमर एक नहिं मान ॥
पुरुषोत्तम जन केहरी, कुंजर कहुँ रिसिआन॥२४॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि यौवनाश्वयुद्धवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

जामानरुवाच।

धन्य कर्णनंदन रणधीरा। तुम समान देखिय नहिं वीरा ॥
करण जीव भद्र यह मोही। वालक जानि बचौं रण तोही ॥

नृषकेतुरुवाच।

कह कुमर मैं बहुत विचारों। नृपति युद्ध मैं केसे मारों ॥
दरश गोपाल कबहु नहिं पावा मसों युद्ध करनहित आवा ॥
हमरे उटत न रहिहौ राजा। सुमिरत हरिहि पाप जिमि भाजा ॥
हम हैं युवा जरा तुम अहऊ। ज्ञान विहीन वचन कस कहऊ ॥
सुनतहि वचन नृपति रिसियाना। मारसि कुमरहि दारुण बाना ॥
एक बाण वृषकेतु अमेरा। काटेउ बाण धनुष नप केरा ॥

आन धनुष कर राजा धारो । शतविषबाण कुमरतन मारो ॥
पुनि शर हने करेउ रण जायल । निःफल बाण भयउ नृपघायल ॥
लागत बाण विरथ भा कैसे । झूँठी साखि नरक पर जैसे ॥
महारथी तब ऊपर कीना । शीतल पवन डुलावन लीना ॥
बिलँम न भयो उठो तब राजा । रथ अरु धनुष बहुत किय साजा॥
बाण साठि पुनि छोडे जबही । भेदो हृदय कुमरको तबही ॥
रुधिर प्रवाह भयउ अनुरागी । भानु किरण अमृत सम लागी ॥
पुनि वृषकेतु उठेउ रण माहाँ । मानहु पंचानन गज चाहा ॥
पुनि रणमहँ कीनेउ शर सेता । काटे रथ सारथी समेता ॥
जब राजा धरणीमहँ आये । भयउ अरिष्ट लोग सब धाये ॥
साधत अग्निबाण सरसाये । मारु मारु करि रणबिच धाये ॥
बाणन कर अँधियार असूझा । योधा लखे नृपति अब जूझा ॥
रण शोभित वृषकेतु कुमारा । रविसिहाय नृपसेन सँहारा ॥
दिशिदिशिते धाये सब वीरा । देखेउ नृप भरि रेणु शरीरा ॥
बहुरों रथ चढि राजा धाये । साधत अग्निबाण सरसाये ॥
वृषभध्वजहि विलंब न लागी । वरुण बाण अवतारी आगी ॥
राजा छाँड़ेउ पर्वत बाना । कर्णपुत्र रण करै मशाना ॥
राजा यौवनाश्व बरिबंडा । बरसाहि अगणित शिला अखंडा॥
अतिहि प्रचंड जाहि नाहिं तेघा । मानहु प्रलयकालके मेघा ॥
विषम बाण रण भयो दुहेला । नृपति बहुत रण कुमर अकेला ॥
पराहिं बाण रण होय मशाना । देखत कौतुक स्वर्ग विमाना ॥
अगणित वीर भये क्षयकारा । मूर्च्छि परे वृषकेतु कुमारा ॥
जस मृत्यू देखत नर डरई । कुमरनिकट नाहिं कोउ अनुसरई॥
राजा कहे गयंद चढ़ावहु । भद्रावती पुरी ल आवहु ॥
बहुत अँधेर भयो अति घेरा । जागेउ मेघवर्ण तेहि बेरा ॥
देखेउ मेघवर्ण रणघाता । सौंपेउ अश्व कहेसि कछुबाता ॥
करगहि विषम गदा लै धाये । जहँ वृषकेतु परे तहँ आये ॥

आवत भीम धरा धरडोला । तजे कुमर फिरि कोउ न बोला ॥
पवनतनय कीन्हीं मनुसाई । तुरत लीन वृषकेतु छुड़ाई ॥
आवत भीम भयानक भयऊ । राजा रण ताजि दूरिहि गयऊ ॥
देखि भीम तव कुमर शरीरा । लेत उछंग नयन वहै नीरा ॥
देखि ललाट हृदय नाहिं जागे । विषम बाण राजाके लागे ॥
दुःसह शिखिरवाण असुरारा । मूर्च्छित परेउ धरणि विकरारा ॥
चारों दिशि वैरी रणमाहीं । शोक करे कर अवसर नाहीं ॥
इनविनु कैसे गजपुर जैहों । राय युधिष्ठिरसों कहाकहिहौं ॥
कै दरशत नरपतिको मारौं । कटक समेत अनलमँह डारों ॥
कुमर सँभारि परै नाहिं पाऊ । घेरि कटक चारौं दिशी आऊ ॥
निर्बल जानि रिपुन बल कीना । भीम विचार करै तव लीना ॥
दोहा–अभय परेहैं पुरुष जो, शंक जीव महि कीन्ह ॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, हाँक भीम जब दीन्ह ॥ २५ ॥
गदा युद्ध उन काहु न जानी । सुनताहि हाँक सबन भय मानी ॥
भीम विचार गहन तव लागे । जे मूर्च्छित रण एक न जागे ॥
मचपन होइ परै नाहिं धूरी । लीनेउ युद्ध कुमरते दूरी ॥
बाजाहिं रण दुंदुभी निशाना । राजा वहुरि सँभारे बाना ॥
गिरत बाणके तरुवर टूटहिं । भीमशरीर लगत सब फूटहिं ॥
यौवनाश्व नृप शीश डुलावा । यह तो कालरूप जनु आवा ॥
एकहिं बाण सैन सब साजा । निष्फल बाण दुखित भयो राजा॥
तब पुनि भीम सिंह सम गाजा । कुंजरकुंभ विदारत साजा ॥
रथ सारथी जाय नहिं चीन्हा । मारि भीम तव चूरण कीन्हा ॥
उपजेउ जवन भीमते पवना । गज रथ तुरँग गननते गमना ॥
जैसे चैत वात परचंडा । पात पुरान होय शतखंडा ॥
महारथी सब छूटे केशा । टूटी ध्वजा विकृत भये भेशा ॥
गज गयंद रथही रथ मारै । महारथी धारि स्वर्ग पँवारै ॥
भये विमुख सब वँधे न धीरा । बहै तरनि जिमि अति गंभीरा ॥

दशादिशि कटक चलत नहिं जाना। सुमिरत सत्य जाय अघनाना॥
यौवनाश्व कस भयो अचेता। भारत भयो सशोकसमेता॥
वस्त्रहीन कोउ उर धर चरना। गदा प्रहार भयो नहिं मरना॥
कंध कबंध भये रण माहीं। आमिष काक गीध धरि खाहीं॥
कुंडल मुकुट हीन भा माथा। देखिय मुण्ड जंबुकन हाथा॥
दारुण नदी रुधिर बह जहँवा। गज रथ तुरँग चले बहि तहँवा॥
प्रेतक्रीड़ जनु रणकर कोई। बहुविधि नृत्य वेताल करोई॥
टूटि कबन्ध परै मैमन्ता। जिमि देखब पाताल वसन्ता॥
दारुण कीन्ह गदा परिहारा। क्रोधित भीम सहै को मारा॥
सुनत हाँक सेना सब भागी। भद्रावती पुरी गये त्यागी॥
विचली सैन नगरमहँ आई। आय सुवेगहि बात जनाई॥
द्वै बालक मूर्च्छित हम कीन्हा। बड़ेने आय युद्ध अब लीन्हा॥
तेहिकर क्रोध सहै को पारा। गदा युद्ध बहि सब संहारा॥
जो बल होय तो करो सहाई। लागहु वेगि गुहारि गुसाँई॥
वीर सुवेग महा बरिआरा। यौवनाश्व सुत गदा सँभारा॥
जो अब रणमें सुनियति हारी। लागेउ वीरन सहित गुहारी॥
गर्जत आव विषम रण माहा। बीर जुहार अहै अब काहा॥
यौवनाश्वकर सुनिउ जुहारा। क्रोध सहित कर गदा सँभारा॥
मैं सुवेग करिहौं बरिआरा। क्रोध हमार सहै को पारा॥
ठाढ़ न होहु करहु रणसाजू। मोसन जियत न जैहौ आजू॥
रथ तजि विषम गदा कर लीन्हा। भीमहु गदा सौंह करि दीन्हा॥
उनके बल सम नाहिंन कोऊ। जानहिं भेव गदा कर दोऊ॥
एकाहि एक न पावै छेवा। चाढ़ि विमान देखहिं सब देवा॥
जो सुवेग कछु अन्तर पावा। भीमसेन शिर गदा बजावा॥
अरुण नासिका रुधिर चलाई। सर्व शरीर उठो झन्नाई॥
पवनतनयको तब रिस लागी। मानहु प्रलयकालकी आगी॥
गदा सहित पुनि लीन्ह उठाई। दीन सुवेगहि गगन उड़ाई॥

प्रलयपवन जिमि पात भ्रमावै । भ्रमत सुवेग गगन ते आवै ॥
बहुरि गदा चाहै शिर मारा । दीन डिगाय परेउ बिकरारा ॥
पुनि जो भीम धरणि लै डारा । धरती परत सुवेग सँभारा ॥
तमासिक भीमहि लीन उठाई । सन्मुख नगर चलेउ लै धाई ॥
मुष्टिक शीश भीम तब मारा । दीन्हेसि डारि गयउ बिकरारा ॥
तेहि क्षण भीम चहासि तेहि मारा । वीर सुवेग गदा अनुसारा ॥
पुनि बाजेउ सन्मुख बरवीरा । उभय वज्रसम अति रणधीरा ॥
मुष्टिप्रहार दोऊ भल करहीं । गदायुद्ध नीके अनुसरहीं ॥
लागे करन महारणरगा । धरती परहिं आय यक संगा ॥
उनके सबै युद्धकी करनी । कुंजरनख सहस्रकै बरनी ॥
उपमा सम देखिय कोउ नाहीं । उनके सम उनही सब काहीं ॥
एकके बूते एक न गिरई । पुनि दोनों सन्मुख ह्वै भिरई ॥

दोहा-भीम सुवेगहि युद्धबड़, जागेउ कर्णकुमार ॥
पुरुषोत्तम जन वर्णहीं, पुनि रण भइ अतिरार ॥२६॥

जैमिनिरुवाच ।

जनमेजय जहँ सुनहिं पुराना । जैमिनि बैठे करहिं वखाना ॥
कथा अनँद पूछत नृप भयऊ । कहिये नाथ बहुरि कस भयऊ ॥
जैमिनि राजासन कह बाता । सुनहु कथा जेहि दुरति निपाता ॥
जब जागेउ वृषकेतु कुमारा । सुंदर वदन प्रचंड जुझारा ॥
फरकत अधर लयो कर वाना । राजा सन्मुख जाय तुलाना ॥
पंचवाण मारे रिसिआई । राजा तबहि विरथ ह्वैजाई ॥
भीमसेन तब युद्ध जु ठयऊ । राजा तबही मूर्च्छित भयऊ ॥
कुँवरक जीय रहा पछितावा । आयो निकट नृपतिके धावा ॥
प्रथम भीम जो कीन मशाना । सो एकौ वृषकेतु न जाना ॥
रणउनींद नहिं कीन्ह विचारा । भयो अयोग नृपति जो मारा ॥
कुमर बतास करै मुख नैना । राजा कैसहु कहै न बैना ॥
कमलाकंत मुनिन मनहारी । हरिसन कुमर विनय जियधारी ॥

जो कछु हमरे सुकृत शरीरा । तो यह जियहि नृपति रणधीरा ॥
जनकर कहा सदा प्रभु छाजा । मूर्च्छित रण महँ जागेउ राजा ॥
देख्यो कुमरहि करत बतासा । गहे चरण पुनि वचन प्रकासा ॥
कर्णपुत्र भेंटत मनराता । तुम तो मोर प्राणकर दाता ॥
तुमसन युद्ध करौं जो आवा । कैसे कहौं अमरमद पावा ॥
लेहु राज्य मैं दास तुम्हारा । तुम मम तात कीन्ह उपकारा ॥
राजा कहै सुनहु वृषकेतू । हम तुम मिलि अब करिहैं हेतू ॥
नृप अरु कुँवर गये मिलि तहँवा । भीम सुवेग भिरे हैं जहँवा ॥
देखे दोऊ महाप्रचंडा । एकहि एक हनै बरबंडा ॥
दोनों करहिं विषमरण मारी । मूर्च्छि पराहिं पुनि उठहिं सँभारी ॥
अंतर नृपति जाय भा ठाढ़ा । विनती कीन्ह गदा उन काढ़ा ॥
पुत्र सुवेगहि नृप समझावा । कुँवर भीमसन बात जनावा ॥
यौवनाश्व सुत गदा अड़ाई । पकरे चरण कुँवरके जाई ॥
राजहि भीम भई अँकवारी । भा आनंद विसरि गइ रारी ॥
होत मिलाप सकल दुख गयऊ । परम अनंद दशहुँ दिशि भयऊ ॥
जिन योधनकर भयउ न मरना । पकरे सबै भीमके चरना ॥
जेहि हरि संत सदा रखवारा । कस नाहिं जीतहि भीमकुमारा ॥
चारों रहे एक रस भाई । मानहु कहूँ न भई लराई ॥

दोहा–मिले चरण गहि राजा, भये सिद्धि सब काज ॥
पुरुषोत्तम जन भनत है, सुनत कथा दुखभाज ॥२७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणिवृषकेतुयौवनाश्वप्रभंजननामपंचमोऽध्यायः॥५॥

यहि अवसर कीनी प्रभु सामा । बाढ़ी प्रीति तजो संग्रामा ॥
संग भीम वृषकेतु लिवाई । भद्रावती पुरी कहँ जाई ॥
वचन वीर वृषकेतु कहावा । मेघवर्ण कहँ तुरत बुलावा ॥
हयवर मेघवर्ण लै आवा । सबहिन किये अनंद बधावा ॥
पीर सुवेग दीन्ह अँकवारी । सबै सराहि कुमरकी मारी ॥

महावीर क्षौहिणि दश दलना। इन सब कीन्ह तुरंगम हरना ॥
प्रथम वैस इह महा कुमारा। भीमवंश पुनि समर जुझारा ॥
प्रेमप्रीति अति जियमहँ जानहि। यौवनाश्व वृषकेतु बखानहि ॥

जैमिनिरुवाच।

सुनिये भीमसेन मम बाता। यह तो मोर प्राणकर दाता ॥
यह हमरे देवनकर देवा। उऋण होब मैं इनकी सेवा ॥
पुत्र सहित हम गुहनै ऐहौं। तुमसँग दरश कृष्णकर पैहौं ॥
बहु भंडार कीन्ह सब साजा। देखउ जाय युधिष्ठिर राजा ॥
पुरुषनकर धन संचित लीजै। गजपुर जा विप्रनको दीजै ॥
तन मन धन राजा चित धरिहौं। सब हरिकी न्योछावरि करिहौं ॥
है है बहुत तुरंगम साथी। अरु सामंत सहस दश हाथी ॥
सहित पुत्र अरु जीव हमारा। हयसँग होब यज्ञ रखवारा ॥
विनती कीन्ह महारणधीरा। चले नगर कहँ सब वरवीरा ॥
शोभा अधिक अपार शरीरा। को वरणै ताकी छवि धीरा ॥
राजा यौवनाश्व के संगा। भीमसेन चाढ़ि चले मतंगा ॥
सुत सुवेग वृषकेतु अनंदा। एक संग चाढ़ि चले गयंदा ॥
योधा सबै बहुत इक संगम। मेघवर्ण गहि लीन्ह तुरंगम ॥
सूना नगर सबन अस भाखा। कर्णसुवन राजा जिय राखा ॥
प्रभावती रानी वर नारी। सुनिकै मणि आरती उतारी ॥
वर कन्या कुसुमावलि करही। चंदन चर्चि चतुर श्रम हरही ॥
नगर लोग ठाढ़े सब देखहि। चढि धौलागृह द्रुमन विशेषहि ॥
मंगल गान पुष्प सब बरषाहिं। देख कुमर युवती सब हर्षाहिं ॥
रत्नथार आरति लै धावहिं। तनु सुगंध अर्गजा चढ़ावहिं ॥
गावति सुंदरि सुर नर मोहहिं। आवत गति मरालकी सोहहिं ॥
चंद्रवदन लोचन सारंगा। कटि मृगराज मनोहर अंगा ॥
मधुरवचन सुरपिक शुक भाषहिं। करि शृँगार रविको रथ राखहि ॥
कोमल सरल सकल शुभअंगा। देखत मुनि मन व्यापि अनंगा ॥

नखशिख सबै मनोहर वानी । कराति कटाक्ष ज्ञानकी हानी ॥
नवयौवन वरणी नहिं जाई । रानी प्रभावती सँग आई ॥
गौर शरीर सर्व जगवंदन । वीरनके कर चर्चित चंदन ॥
करि आरती लागि सब चरणहि । रानी उनकी कीरति वरणहि ॥
वृषभध्वजसन कही सुवाता । तुम मम कुँवर दीन्ह अहिवाता ॥
राखेउ मोर प्राण आभरना । पुनि पुनि रानी पकरत चरना ॥
यश तुम्हार त्रिभुवन में जाना । राजहि दीन्ह प्राणकर दाना ॥
उतरे राजा वैठे आसन । भीमसेन कहँ दीन्ह सिंहासन ॥
प्रभावतीसन राजा कहई । क्षुधावंत तीनहुँ जन अहई ॥
सुनत वचन मंदिर महँ ठाढ़ी । दीनेउ पंच पदारथ काढ़ी ॥
भोजन अमित विविध परकारा । तीनों वीर कराहिं ज्योनारा ॥
सहित कुटुंव नृपति पुनि जेवा । बहुत भांति कीन्हीं भलि सेवा ॥
सव परिजनकी कीन्ह सँभारा । रजनी वेर भयो सुखसारा ॥
रत्नजटित मंदिर तहँ साजा । उत्तम सेज विछायउ राजा ॥
तीनों जन सुख नींद सुवाये । विदा माँगि नरपतिगृह आये ॥

दोहा-सबल नगर भल सोवई, पुरुषोत्तम सुखमान ॥
वहि वृषकेतु सराहत, राजहिं भयो विहान ॥२८॥

भयो प्रभात रैनि जब जाई । वैठे नृपतिसभा महँ आई ॥
तीनहुँ वीर सभा संयोगा । राजा नगर बुलायउ लोगा ॥
सबसन कहा चलहु तहँ जइहैं । कृष्ण युधिष्ठिर दरशन पइहैं ॥
पुत्र कलत्र सहित पुरवासी । चलौ जहाँ गोपाल निवासी ॥
कुंती रुक्मिणि अरु पंचारी । देखें सतभामा वरनारी ॥
नगर हस्तिनापुर दुखभंगा । सुधाप्रवाह वहति जहँ गंगा ॥
होइहै यज्ञ ऋषिय सब ऐहैं । ब्रह्मादिक देखन सव ऐहैं ॥
जन परिजन सबही सुखमाना । धन्य जन्म देखिय भगवाना ॥
यौवनाश्वकी जननि सुदेहा । कृष्णदरशकाजहि न सनेहा ॥
देखब कृष्ण पुनीत शरीरा । माता वाक्य सुने जब वीरा ॥

कौन कृष्ण कस धर्म शरीरा । बुद्धि विहीन तोरि मतिधीरा ॥
तुमरे गृहैन हमहैं आउब । तहाँ जाय केतिक सुख पाउब ॥
हँसि कुपुत्र तैं मतिकर हीना । मेरे जियत करासि धन छीना ॥
यौवनाश्व कहै सुन मम माता । तुम कस कहौ दुरतिकी बाता ॥
गजपुर गंगातीर बसाई । मुनिजन सन्त रहे तहँ छाई ॥
जहाँ गोपाल भयो अवतारा । औ धरतीकर भार उतारा ॥
कलमष नाशै सुमिरत बैना । चरणकमल देखब भरि नैना ॥
राययुधिष्ठिर यज्ञ करैहैं । त्रिभुवनके बासी तहँ ऐहैं ॥
उठहु जनानि ह्वै है पुनि मरना । देखहिं जाय कृष्णके चरना ॥

वृद्धोवाच ।

सुनहु न पुत्र आयबै तहँवा । धर्म कर्म सुनियउ मैं तहँवा ॥
कृष्णनाम मैं सुना न कबहूँ । पिता तुम्हार जियत रहै तबहूँ ॥

राजोवाच ।

हमरे पिता न कीन्ह सुधर्मा । भयउ वृद्ध जानेउ नहिं मर्मा ॥
राजा वचन सुने अस जबही । बोले हँसि जननी सों तबही ॥
वचन मनोहर नृपति प्रकाशी । काहे न माता गजपुर जासी ॥
जहाँ युधिष्ठिर अरु भगवाना । गंगातीर बसहिं सुखमाना ॥
जहाँ रुक्मिणी अरु सतिभामा । देखत मन पावहि विश्रामा ॥
औरौं देवबधू तहँ आवैं । गोकुल चरित कृष्णके गावैं ॥
दुर्लभ दरश कृष्णकर पावैं । जन्म सफल करि फिरि घर आवैं ॥
यह गृह मोर बहुत पकवाना । लूसहि दासी कनक पिसाना ॥
सखी सहस वे सब लैजै हैं । मो विनु दासी सबको खैहैं ॥
दासी दास करहिं नहिं काजा । का लै करब धर्म सुनु राजा ॥
जोपै सोच न सबै गमाउब । कृष्णदरश हम तो कहँ पाउब ॥
राजा यौवनाश्व वर धीरा । काहे न राजत जो शिववीरा ॥
पुरके लोग बहुत दुख पावैं । भद्रावती लेनकहँ आवैं ॥
राजा सुनत बहुत दुख माना । यहिके जिय न बसत भगवाना ॥

राजा पांडु झुंड सब आवैं। तो भल दरश कृष्णकर पावैं॥
जे हारि भाजि वैकुंठ बसाईं। ते काहे फिरि जगमें जाईं॥
जननी होइ मनहु जगमाता। वरजै मोहि भजत जनत्राता॥
निष्फल होय जन्म अरु मरना। जे न भजहिं सादर हरिचरना॥
ज्ञानी योगी हरिपद भजहीं। जगसुखको तृणके सम तजहीं॥
जैसे यौवनाश्व नृप जाना। परिहरि राज्य भजहि भगवाना॥
नगर निवासिन अनुमति कीन्हा। सबमिलिचरणकमल मनदीन्हा॥
निशि दिन भक्ति करहिं मनसाँचा। भद्रावती रहे दिन पाँचा॥

दोहा-पुत्र कलत्र सहितसब, गजपुर चलेउ भँडार॥
भजत चले भगवन्त पद, पुरुषोत्तम आधार॥ २९॥

निकसे नृपति बाजने बाजे। शिविका पुनि अनेकविधि साजे॥
अति कृपणी जिय रुदन कराहीं। सुनत गोविंद नाम जे नाहीं॥
माया मोह कहत जे सागे। भजहिं न रामहिं सोचैं आगे॥
जैसे यौवनाश्व नृप आवै। ऐसे भजहि सो हरिको पावै॥
नगरनिवासी चले तुरंता। राजहि मिले बहुत सामंता॥
पुन्न सुवेग बहुत दल साजा। चलहु न जहाँ धर्मके राजा॥
चलत पंथ सबही सुख भयऊ। योजन सहस तुरत दल गयऊ॥
योजन असी जु गजपुर रह्यो। भीमसेन राजासन कह्यो॥
तुमरे साथ अहै वृषकेतू। जासन अहै तुमहिं बड़ हेतू॥
आज्ञा देहु प्रथम अब राजा। कहौं धर्म सन तुम सब साजा॥
राजा कहेउ भीम अगुसरहू। सेवा सावधान सब करहू॥
आज्ञा माँगि भीम जब धाये। वेगि हस्तिनापुर नियराये॥
देख्यो जाय युधिष्ठिर राजा। पकरे चरण भउय प्रभु काजा॥
बहु विधि सावधान नृप कीन्हा। भाई भीम अंक भरि लीन्हा॥
भीमहि देखि भयो आनंदा। पूछेउ कुशल कहौ कुलचंदा॥
कीन्ह अनंद दास भगवाना। अर्जुन देखि बहुत सुख माना॥
राजा भीमहि वचन सुनाये। वरनहु भीम कुशल तुम आये॥

कहै भीम सुनिये नृपराया । तुम्हरे पुण्य कुशल सुख पाया ॥
कृपा गोविंद भई बहु जबही । जीतेउँ नृपति विषम रण तबही ॥
बहु भंडार तुरंगम पायो । पुत्र कलत्र सहित नृप आयो ॥
उठत कर्णनंदन नृप भाजा । मारत राखि लीन रण राजा ॥
जैसे युद्ध भयउ तहँ जाई । समाचार सब कहेसि बुझाई ॥
मेघवर्णकर करेसि बखाना । वीर न कोउ वृषकेतु समाना ॥
जब वृषकेतु तमकिकै धावै । एकौ वीर निकट नहिं आवै ॥
सोमवंश नहिं याहि समाना । कीन्ही मख सहाय भगवाना ॥
देखन नृप आयउ तब चरना । दरश गोपाल दुरित कर हरना ॥
प्रभावती रानी अरधंगा । आई सहस सखी लै संगा ॥
सबै द्रौपदी देखन आवैं । छिनछिन चरित कृष्णकर गावैं ॥

दोहा-सुनत नृपति बहु सुखभयो, घर घर भोग विलास ॥
कथा विचित्र पवित्र अति, कह पुरुषोत्तम दास ॥ ३० ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि भीमागमनंनाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

राय आगमन सुनि नृपकाना । भूप युधिष्ठिर अति सुखमाना ॥
कहेसि भीमसेन गवनहु तहँवा । मंदिर द्रुपदसुता है जहँवा ॥
कुंतिहि जाय मिलहु पुनि भीमा । तुम बिन सोच करति है जीमा ॥
कुँवरन कुशल कहौ उनपाहीं । अरु रानी सन्मुख सब जाहीं ॥
भीमसेन तेहि गये अटारी । जहाँ बसै कुंती पंचारी ॥
जबते बिछुरे तीनहुँ वीरा । ता दिनते भयो क्षीण शरीरा ॥
निरखत जीव भई मन आशा । उदयचंद्र जिमि कुमद प्रकाशा ॥
आयसु द्रुपदसुता उठि दीन्हा । कुंती भीम हृदय गहि लीन्हा ॥
रुदन करै नयनन बह नीरा । दारुण देखत घाव शरीरा ॥
कर्ण पुत्र औरौ घनवरना । कहौ कुशलहैं उनके चरना ॥
उनकी कहौ युद्ध कुशलाता । कहहु न यौवनाश्वकी बाता ॥
सुनिकै वचन भीम तब बोला । कुशल कुँवर वैरिन रणडोला ॥

मेघवर्ण गहि हय वर आना। दिय वृषकेतु नृपति जियदाना॥
सहित पुत्र नृप धन लै आयउ। भद्रावति कोउ रहन न पायउ॥
सहस सुंदरी संग सुरेखा। भद्रावती आय तुम देखा॥
तुम द्रौपदी करहु शृंगारा। रनिवासहुको करहु सँभारा॥
सब सुलक्षणी हरिजन जाना। यौवनाश्व सँग रानी आना॥

द्रौपद्युवाच।

कहै द्रौपदी सुन धनुधरना। अभरन मोर कृष्णके चरना॥
रामनाम सोहै शृंगारा। निशिदिन चितमहँकरातिविचारा॥
जब बिछुरे मोहि नंद किशोरा। भूषण वसन कछू नहिं मोरा॥
रसना रामनाम नित कहौं। सर्व शृँगार कृष्ण हिय लहौं॥
विपति परे प्रभु हैं रखवारा। अलंकार सुख कृष्ण हमारा॥
राम सरोवर मैं जलकंदा। मैं कुमुदनि माधव भलचंदा॥
जब हम विमुख होहिं हरि चरना। निष्फल होत सबै आभरना॥
भीमसेन द्रौपदि समझाये। तबलग गृह गरुड़ासन आये॥
देखेउ भीम मनोहर भेशा। झारे चरण छोरि कर केशा॥
चरणकमल गहि अंकम लाये। समाचार सब कह समझाये॥
तासन कह हम युद्ध बखानहिं। अंतर्यामी सबघट जानहिं॥
जहँ जहँ विधिसों लीन तुरंगम। तहँ तहँ सदा रहे प्रभु संगम॥
भमि उतर हरिसों अस कीन्हा। तव प्रसाद प्रभु हयवर लीन्हा॥
भीम वचन सुनि सब गृह साजा। आये जहाँ धर्मके राजा॥
सुंदर श्याम मिले यदुराई। सन्मुख यौवनाश्वके जाई॥
पांडवसाज किये बहु बरना। वर्णि न जाय जहाँ हरिचरना॥
अगणित बाजे बहुत बजाये। तेहू आनि नगर नियराये॥
कुंजर घंट दुहूँ दिशि बाजा। कंपति धरणि देखि दलसाजा॥
एऊ गये वेउ चलि आये। इत उत भूप सबन शिर नाये॥
गजते उतरि चरण कहँ धाये। राय युधिष्ठिर कंठ लगाये॥
पुनि गजपुर कीजै पैसारा। संतत जहाँ कृष्ण रखवारा॥

चारहुँ दिशा देखि नियरावा । पारिजातके कुसुम सुहावा ॥
सदा रहै कस्तूरि कुरंगा । शीतल सुखद परम दुखभंगा ॥
नगर मनोहर देख्यो कैसा । स्वर्गलोक इन्द्रासन जैसा ॥
खंभ सहस कंचनके केरा । रत्न पगार नगर चहुँ फेरा ॥
मणिमय चौक वरणि नाहिं जाई । रच्यो विश्वकर्मा मनलाई ॥
बहुत वीर कुरुक्षेत्र सँहारा । देखा नगर न कोऊ मारा ॥
कस नहिं चैन होइ पुनि तहाँ । पुरुषोत्तम हरि हैं नित जहाँ ॥
निशिदिन सुरसरि सदा वहाई । मज्जन पान करत अघ जाई ॥
कहै युधिष्ठिर नृप सन बाता । तुम जनु मोर सहोदर भ्राता ॥
देखे कृष्ण पाप दुख हरना । महामनोहर पंकज चरना ॥

जैमिनिरुवाच ।

धनि धनि धन्य तुरंगम मोरा । जेहि मिस दरश मिलो प्रभुतोरा
धन्य भीम वृषकेतु कुमारा । कर्णसुवन गुण अमित अपारा ॥
तीनों वीर महारण धीरा । जूझत राखेउ मोर शरीरा ॥
इनहिं उऋण हम कवहूँ नाहीं । सेवहिं बहु प्रकार जगमाहीं ॥
यौवनाश्व राजा अस कहई । अर्जुन कृष्ण सखा एक रहई ॥
दास शिरोमणि हरि मनलाई । देखत जाकर पाप नशाई ॥
कुंति द्रौपदी दीन्ह चिन्हाई । रानि प्रभावति हृदय लगाई ॥
संग सहस सुंदरी सुरेखा । करि प्रणिपत्य द्रौपदी देखा ॥
राजा अर्जुन जाय चिन्हाये । यौवनाश्वको कंठ लगाये ॥
कह प्रणाम धनिभाग्य हमारा । कृष्णकृपा भा दरश तुम्हारा ॥
केहेउ पंथ तुम नीके आये । भये पुनीत दरश हम पाये ॥
तुमको नृप जानै हम ऐसे । सब महँ राय युधिष्ठिर जैसे ॥
पुनि सुवेग कहँ हृदय लगाये । मिलत प्रेम लोचन जल छाये ॥
पिता पुत्र जिय कीन्ह विचारा । पुनि वरणै वृषकेतु कुमारा ॥
भारत रणमहँ भई चिन्हाई । दरश कृष्णकर आन दिखाई ॥
सुख शरीर सेना भंडारा । हरि विनु निष्फल जन्म हमारा ॥

जेहि भगवंत न उर महँ आना। ते नर जानहु प्रेत समाना॥
मनसा वाचा जे हरि भजहीं। छिनपलपद अंबुज नहिं तजहीं॥
ब्रह्मादिक शंकर जेहि ध्यावहिं। ते पद तजि नर नरक सिधावहिं॥
जाकी निगम न जानै बाता। निर्मल चारि पदारथ दाता॥
संतसंग कैसे पद पावहिं। परशत तनुकी तपनि नशावहिं॥
गंगा अमृत दरश गोपाला। संतसंग काटेउ भव जाला॥
जन्म सफल अघ भा सब भंगा। को न तरेउ संतनके संगा॥
नृप जननी जो महा अपावन। लागत चरणरेणु भइ पावन॥
निरखत तुरँग पाप सब गयऊ। मिलत द्रौपदी आनँद भयऊ॥
कुतिहि अंकमालिका लाई। बहुत जन्मकर दुरति नशाई॥
इह प्रस्ताव कुमर वृषकेतू। कुंती मिलन चले करि हेतू॥
लागेउ चरण कुमर घन वरना। पकरे जाय जननिके चरना॥
दोउ कुमर कुंती उर लाये। मानहु दीन बहुत धन पाये॥
जस नर अंध भयो विनु नैना। मानस गूँगा बोलत वैना॥
भेटेउ कुमर द्रौपदिहि जाई। चंद्र चकोर मिलेउ जनु आई॥
निरखि धाय सब कहत बखाना। राजा सहित तुरंगम आना॥
चूमि वदन कीन्हीं मनहारी। कोमल तनु देखे चितधारी॥
भीमसेनको पुरवा संगा। यौवनाश्व कर लीन्ह तुरंगा॥
द्रौपादि मन आरति करि लीन्हा। कुँवरनको न्योछावरि कीन्हा॥
मिलत वार जस भा अवकाशा। आये कुमर युधिष्ठिर पासा॥
अर्जुन सहित कृष्ण दुख हरना। गहे सुजाय मनोहर चरना॥
प्रेम सहित नृप उर गहि लीन्हा। अर्जुन अंकमालिका दीन्हा॥
कमलनयन पुनि हृदय लगाये। दोनों वीर बहुत मन भाये॥
सरहे कृष्ण धनंजय राजा। तुम भल कीन्ह यज्ञकर साजा॥
कहसि भीम तुम्हरी मनुसाई। यौवनाश्व नृप कीन्ह बड़ाई॥
दोउ वीर मोहि वचन सुनावा। कृपा तुम्हारि सुयश हम पावा॥
काहे न सो नर करै मशाना। रक्षक जाके श्रीभगवाना॥

कर्त्ता हर्त्ता तुमहिं गोपाला । सदा हमार करहु प्रतिपाला ॥
सुनत वचन कृष्णहि सुख भयऊ । सब मिलि यौवनाश्वगृह गयऊ ॥
सवै नगर प्रभु कटक लिवाई । भीतर नगर उतारेउ जाई ॥
गजपुर नगर अमित सुख छावा । सब वृषकेतुहि देखन आवा ॥
करहिं अनन्द जीति नृप आना । देखि तुरंगम सबहि बखाना ॥
सुन्दर हय वरु अरु मनहरना । कहैं व धन्य कुमर घनवरना ॥
यौवनाश्व कहँ दीन्ह रसोई । गजपुर आनँद घर घर होई ॥
राय युधिष्ठिर भये अनन्दा । देखत गये सकल दुख द्वन्दा ॥
विप्रनको बहुतै धन दीन्हा । विधना सफल मनोरथ कीन्हा ॥
ठाँव ठाँव वहु बाजन बाजा । आये देश देशके राजा ॥
देखत तुरँग दुरति गइ भागी । कुमरनकी यात्रा तहँ लागी ॥
अश्वमेध जे कहैं पुराना । पुरुषोत्तम सोइ कीन्ह बखाना ॥
पांडवचरित सुनै जो कोई । तेहिको अश्वमेध फल होई ॥
भद्रावती विजय जु सुनाई । हरिकर चरित जु मनमें लाई ॥
ते नर सब तीरथ अस्नाना । दइ जनु गऊ सहस्रन दाना ॥
अश्वमेध जो चितमहँ धरई । बहुत जन्मकर कलमष हरई ॥
पुरुषोत्तम दासनकर दासा । तेहुभक्ति जनि करहु निरासा ॥
जहँ जहँ तुरँग जौन नृप धरहीं । हरिप्रसाद पुनि तहँ कछु करही ॥

दोहा—कथा विजय भद्रावती, कछु एक वर्णन कीन्ह ॥
पुरुषोत्तम जन तरन हित, कृष्णचरण मन दीन्ह॥२१॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि भद्रावतीविजयनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

जैमिनिरुवाच ।

जन्मेजय पूछहि करजोरी । जैमिनि इच्छा पुरवहु मोरी ॥
यौवनाश्व जो गजपुर छावा । आनि तुरंगम कीन्ह बधावा ॥
प्राण मोर हरिचरणन राता । मैं वलि बहुरि अनुसरहु बाता ॥
आदि अंत सब कथा सुनावहु । अर्जुनकी दिग्विजय लखावहु ॥

जैमिनिरुवाच ।

धन्य धन्य राजनके राजा । सुनिये अश्वमेधकर साजा ॥
हय आनेउ गजपुर सुख भयऊ । एक मास आनन्दित गयऊ ॥
प्रणवौं चरण कमल मनलाई । जेहिकी कृपा सकल सिधि पाई ॥
पुरुषोत्तम मतिहीन निराशी । रामप्रसाद कथा परकाशी ॥
हरिगुण उदधि मोरि मति थोरी । करहु सहाय कृपानिधि मोरी ॥
जैमिनि कहत जु महापुराना । गई कृपा तब कीन्ह बखाना ॥
येहि प्रस्ताव गयो इक मासा । यदुनंदन तब भयउ उदासा ॥
भाष्यों दीनदासहित लागी । राजापास बिदा प्रभु माँगी ॥
यज्ञवर्ष लागव कछु नाहीं । तबलगि हम द्वारावति जाहीं ॥
जहँ यदुवंश बसत सब वीरा । उग्रसेन राजा मतिधीरा ॥
यौवनाश्वकर राखब माना । न गयो तुरंग न होइहै जाना ॥
देवदत्त सब हेरत रहई । यज्ञतुरंगम सब कोइ चहई ॥
कृष्णकि बिदा सुनी जब काना । पांडव सब भये जनु गत प्राना ॥
प्रभुसों फिरि बोले नहिं कोई । शिरऊपर जो आज्ञा होई ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

चिंता जिनि मानहु तुम राजा । परिजन सहित करौ सब काजा ॥

दोहा—राजाकर संतोष करि, कृष्णविनय तब कीन्ह ॥
पुरुषोत्तम हित भक्तके, कथा कहै तब लीन्ह ॥ ३२ ॥

कृष्णचरण द्वारावति आये । बिछुरत कृष्ण परम दुख पाये ॥
तेहि अवसर तहँ आयउ व्यासा । राजहि भई जीवकी आसा ॥
जहँ तुरंग तहँ मंडप छावा । नृपति सिंहासन तहाँ बनावा ॥
राज सभा सोहत भइ ऐसे । सोहत मणि बिनु मंडप जैसे ॥
कृष्णवियोग रहे नहिं प्राना । व्यासदेव तब कह्यो पुराना ॥
मारुतयज्ञ करण मन जानी । वरुण धर्म सब कहेउ बखानी ॥
पतिव्रता अरु विधवा नारी । सकल सुधर्मी कराहिं सँभारी ॥
क्षत्रिन केर भाषि सब भेवा । कही पिता ठाकुरकी सेवा ॥

ब्रह्मज्ञान संन्यास बखाना । षट् दरशन कर कहेउ प्रमाना ॥
अतिथि धर्म सबहीं ते नीका । भगवत भक्तिकेर अतिलीका ॥
सुधर्म ते कमला नहिं जाई । धर्म सुयश रहै जगमें छाई ॥
धर्म छाँड़ि जे पाप कराहीं । जीवित नरक मुयेहु गति नाहीं ॥
राजा बहुरि गहे ऋषि चरना । व्यासदेव तुम तारन तरना ॥
तीरथ यज्ञ होम व्रत दाना । बड़े धर्म जे कहे पुराना ॥
सब ते धर्म नीक जो होई । कहिये धर्म कथा ऋषि सोई ॥

व्यास उवाच ।

कहै ऋषी सुन सुकृत न मूला । योग न यज्ञनाम सम तूला ॥
कहो दरश अनचारहु वरना । नर नारी पाँवर निस्तरना ॥
हैसब धर्म कृष्णकर नामा । आश्रम सो जु कहै गुणग्रामा ॥
ज्ञानी गुणी जु भक्ति विहीना । वर्षा भई गगन ऋतुहीना ॥
तरै सुराम नाम जो कहई । कृपा गोपाल चारिजग अहई ॥
श्वपचौ भक्त रामकर होई । सबते नीको सो नर सोई ॥
विप्रौ होय विमुख हरिनामा । श्वपचहुते धिग जीव निकामा ॥
निगम शास्त्र सब कहैं पुराना । राम विमुख धिग तिनकरध्याना ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन वर्णही, त्र्यम्बकपुरी प्रसाद ॥
सकल धर्म शिरमौर यह, रामनामसो स्वाद ॥३३॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि व्यासवाक्यंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

जैमिनिरुवाच ।

इहिविधि राजा दिवस गमावा । कथा पुराण व्यास समझावा ॥
पुनि मख समय आय नियराना । पठवहु कोउ आवैं भगवाना ॥
भलो अनंद होय तेहि दिना । हमहिं न सुधि एकै हरि बिना ॥
राजा भीमसेन बुलवाना । विनती करि द्वारका पठावा ॥
जाहु भीम आनहु हरिचरना । सब यदुवंशसहित दुख हरना ॥
देवि देवकी यशुमति माई । सतभामा रुक्मिणी सुहाई ॥

औरो सबै द्वारकावासी । आनव चरण समीप निवासी ॥
करि प्रणाम प्रस्थान जु कीन्हा । नृपके वचन शीश धरि लीन्हा ॥
पवनवेग भुज महा विशाला । पहुँचे तहाँ जहाँ गोपाला ॥
द्वारावती महोदधि तीरा । शकुन रूप जहँ श्यामशरीरा ॥
रोगी दुखी न देखिये मंदा । हृष्ट पुष्ट तनु सदा अनंदा ॥
वर्णिय कहा जहाँ हरिछावा । धरणी महँ वैकुंठ बसावा ॥
भीमसेन आये हरिद्वारा । सुन्दरश्याम उठे ज्योंनारा ॥
भोजन करन लागि यदुराई । प्रद्युमन सहित औ हलधर भाई ॥
कनकपत्र विश्वकर्मा कीन्हा । बिजना कनक चमर कर लीन्हा ॥
मातु देवकी भोजन आना । अस कवि को जो करहिं बखाना ॥
अगणित भये खीर पकवाना । नींबू अमिय सुधारस पाना ॥
धरणी वन जेते उपजावहिं । भोजन त्यों ज्योंनार बनावहिं ॥
जाकर मर्म कोउ नहिं जाना । सो भोजन किमि जाय बखाना ॥
रूप रेख कछु काहु न जाना । मुनि ताकर गुण कहै विधाना ।
नीर सुगंध जु पान करावों । जननी कहै और कछु लावों ॥
सतभामा सब देव वखानी । रुक्मिनि पाट बंधना रानी ॥
बिंदुमती जाम्बवती आई । चमर करैं चारों मन लाई ॥
अवरौ जे यदुनाथहि भावैं । भोजन करत बियारि ढुरावैं ॥
कंचनकी सोहै झनकारा । कवनिहुँ गावहिं मंगलचारा ॥
कवनहुँ कथा विचित्र सुनावहिं । पारजात की बात चलावहिं ॥
कवनहूँ नयन अनत नहिं फेरहिं । एकटक श्याममदन तनु हेरहिं ॥

दोहा-पुरुषोत्तम जन वर्णही, यहिविधि भोजन कीन्ह ॥
सतभामा तेहि अवसर, हरिसों कह्यो प्रवीन ॥३४॥

सतभामा कह सुनु यमनाहा । तेहि अंतर कृप यहु वनमाहा ॥
ओढ़े कंवल बछरन सेवा । ग्वालन सँग जे खात कलेवा ॥
कालिंदी तट गाय चरावहु । पात बजावहु वन वन धावहु ॥
ब्रजवासिन गोरज लपिटावहु । तुमसन गोरस वेचन पावहु ॥

मोसन स्वामी कहु सतिभाऊ । वह वनर्नाके किधौं यह राऊ ॥
सतभामा हँसि बात जनाई । मातु देवकी उठी रिसाई ॥
लाज न भई कहत असि बाता । वसुदेव पिता देवकी माता ॥
सोमवंशके तिलक गोपाला । हरे चित्र लहे संगम ग्वाला ॥
आदिराज बहुतै उनिछाजा । बोलत वचन भई नहिं लाजा ॥
सतभामा लजाय मुख फेरो । हरितन बिहँसि कटाक्षन हेरो ॥
इह प्रस्ताव सखी कोउ आई । पवनतनयकी बात चलाई ॥
दोहा-हरिभोजनकिमि वर्णिये, यहिविधि सबै जनाय ॥
पुरुषोत्तम जन द्वारही, द्वारे पान खवाय ॥ ३९ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि भीमद्वारकागमनं नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥

जैमिनिरुवाच ।

तेहि अवसर मारुतके पूता । सखाद्वार कछु करै अकूता ॥
की जननी देवकि मरि गई । कै सतभामा विनु घर भई ॥
परा अकाल अन्न सब गयऊ । मेघवृष्टि कबहूँ नहिं भयऊ ॥
पुत्र पौत्र विनु भा घर ऐसे । जेमहिं कृष्ण अकेले जैसे ॥
परदेशीकी कौन चलावै । हँसि हँसि फेनी आपुन खावै ॥
दीनदयालु दया जिय लाये । भीम तुरत रनवास बुलाये ॥
जै प्रभु चरणरेणु शिर लीन्हा । यदुनंदन गहि अंकम दीन्हा ॥
ताते सलिल पखारे पाय । पंचामृत भोजन करवाये ॥
पूँछी गजपुरकी कुशलाता । कुशल युधिष्ठिर चारो भ्राता ॥
प्राण मोर राखा जो चहहू । अर्जुन कुशल भलीविधि कहहू ॥
वनिता पुत्र मित्र अरु भाई । पंथ विना मोहि कछु न सुहाई ॥
भक्तवछल अस काहे न कहई । सेवक कहँ स्वामी नित चहई ॥
निकट भीम आपन बैठाये । भीमसेन उठि विनती लाये ॥
गजपुर गमन करहु यदुराई । तुम विन मख को करै सहाई ॥
निगम वचन बोले तब स्वामी । सब जानत हैं अंतर्यामी ॥

तुरत बेगि अनुचर बुलवाये । जाम्बवती सुत सब तहँ आये ॥
प्रद्युमन कुमर आये अनिरुद्धा । निशठ कुमर शठ महाप्रबुद्धा ॥
उद्धव कृतवर्मा हँकरावहु । नगर दुंदुभी ध्वनि करवावहु ॥
कोउ जनि रहौ चलौ सबकोई । लघु बड़ दुखी सुखी जन होई ॥
चारहुँ वर्ण चलहु करि साजा । पहुँचो जहाँ युधिष्ठिर राजा ॥
मातन संग चलें सब रानी । सेवक थाट बंधना जानी ॥
नगर द्वारका फेर दुहाई । सबकोउ साज करहु मनलाई ॥
अमित द्रव्य आपन सब लेहू । जाय युधिष्ठिरके मख देहू ॥
हरिकी आज्ञा परम दुहेला । निकसि निकसि बाहर सब भेला ॥
कृष्ण भँडार अहै धन जेता । गजपुरको पहुँचावहु तेता ॥
संकुल कलभ जु वृषभ तुरंगा । भरि भरि रत्न चले लै संगा ॥
कृतवर्मा आगे छत्र ताना । सबै चले आज्ञा भगवाना ॥
विप्रवृंद सब चले तुरंता । निकसे नगर कृपा भगवंता ॥
क्षत्रिय वैश्य शूद्र हैं जेते । दारा पुत्र कुटुंब समेते ॥
नीक महाजन कायथ बेरा । जड़िआ भरिया अरु कसहेरा ॥
रत्न पारखी चले सुनारा । सबहीं हाटै चले बजारा ॥
दिव्य वसन लै चले बजाजा । जानो आनि भूमिके राजा ॥
अन अनभाँति चले व्यापारी । चले जु बेचाहिं लौंग सुपारी ॥
सिद्ध जाति जे चले तुरंगा । बहुत बधाव चले हरि संगा ॥
बारी तेलि कुम्हार कहारा । नाऊ धोबी बढ़इ लुहारा ॥
धानुक चिक मोची मनिहारा । लौनि लोहिया और चमारा ॥
चाककुदेर चले चित्रकारी । कागजि सिकिली गरथनवारी ॥
त्रपथा बौड़ चले जरवन्धा । गुणिया राज चले सब धंधा ॥
करैं बहुत जानै को पारा । जाति जातिके मंगलचारा ॥
केवट पासिया भुँजि कलारा । अगणित चले गनै को पारा ॥
एक्कर अन्त एक नहिं पावहिं । चले बहुत जो बाद्य बजावहिं ॥
विश्वा जन सब चले सुरेपा । करि श्रृंगार अप्सरा विशेषा ॥

इंद्र वाद्य नट वाद्य बजावहिं । चले बहुत जे कला दिखावहिं ॥
गुणी अनेक चले हरि संगा । वैद्य गाड़रू बहुत बिहंगा ॥
गिरि पक्षी मरि जिनके हाथा । धरणि गयंद चले एक साथा ॥
हरिके निकट चले मधुगासी । रहेउ न कोउ द्वारका वासी ॥
दोहा–पुरुषोत्तम जन मानस, कृष्ण सबहिके प्रान ॥
चरणछाँड़ि कैसे रहैं, जिमि देही बिनु जान ॥३६॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि श्रीकृष्णकृतवर्माप्रस्थानंनाम दशमोऽध्यायः १०

सब लोगन कीनो प्रस्थाना । कृतवर्मा तहँ छत्तर ताना ॥
रथ चाढ़ि देखन चले गोपाला । संग भीम भुज महा विशाला ॥
सब प्रस्थान कृष्ण तब देखा । वर्णि न जाय जु कहिय विशेखा ॥
देखि भीम स्वामी सन कहा । तुम विन कोउ न द्वारका रहा ॥
देखि कटक आये प्रभु तहँवा । वसुदेव पिता देवकी जहँवा ॥
राजा अरु तुम रहिहौ जहिया । हम जैवें हस्तिनपुर तहिया ॥
बिछुरन शब्द सुना जब काना । तुम विनु कैसे राखौं प्राना ॥
वंदी छोरि दियो सुख भारा । दशरथ केसो हाल हमारा ॥
दुख समुद्र महँ राखेउ मोही । हम जीवहिं सुत देखत तोही ॥
धर्मरायको यज्ञ सुधारी । ऐहौं वेगि परम दुखहारी ॥
दिन दिन कथा सुधर्म चलावहु । सबसन दान पुण्य करवावहु ॥
हम अकेल अरु उदधि तुरंगा । धन्य देवकी जो तुम संगा ॥
कृपा महोदधि दीनदयाला । पुनि बोले प्रभु दीनकृपाला ॥
हलधर भार गहेउ जनु शेशा । उग्रसेन यहँ रहेउ नरेशा ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

वसुदेव पिता व्यथा जनि मानहु । आवौं वेगि सत्य जिय जानहु ॥
पिता आशिषा दीन अवंता । लाय प्रदक्षिण चलेउ तुरंता ॥
चली देवकी सब रनिवासा । मानहु चन्द्र कोटि परकासा ॥
कृतवर्मा कर बाजत बाजा । निकसे कुमर विविध विधि साजा॥

रथ शिविकाकर अंत न पावै । जो हारै सो बहुरि चढ़ावै ॥
सब जन सुखी दुखी नाहिं कोई । मारग भोजन कर सब कोई ॥
कृतवर्मा सबही संभारैं । बजैं निसान महाधुनि धारैं ॥
तेहि थल कबहुँ न क्षण दुख आवै । राम कृष्णकर यश जग गावै ॥
जहँ भगवान होयँ रुखवारा । तेहि थल धन्य जु संग सिधारा ॥
पुरुषोत्तम सबही समझावा । चलत वेद धुनि विप्र करावा ॥
याहि विधि होत पयान सुहावन । जहँ श्रीकृष्ण तहाँ सुखपावन ॥
विना पंख जहँ पाक्षि उड़ाही । जहँ सूखा तहँ जल भरि जाही ॥
उकठा कठ पल्लव अनुसरहीं । हरिकेचरित विविध विधि करहीं ॥
पातक हरै पातकिन केरा । दुखिया धन पावैं बहुतेरा ॥
ऊजर बसै वास अधिकाई । जोहि मग गमन करैं यदुराई ॥
प्रतिदिन सबकर होय पयाना । शनै शनै गजपुर नियराना ॥
ब्रजवासी कहँ बात जनाई । सुनि सब आवत हैं यदुराई ॥
जैसे मृतक पाव फिरि प्राना । कृष्ण आगमन सुख तस माना ॥
ब्रजजन चले करत आनंदा । जिमि चकोर लखि पूरण चंदा ॥
जहँ तहँ सुनत लोग उठि धाये । प्रेम विवश मुख वचन न आये ॥
मुरली वेणु गहे कर शृंगा । हरिपद कमल ग्वाल सब भृंगा ॥
कोउ गुंजाफल नीक बनावहि । कोउ नीक द्रुमपात बजावहि ॥
कंवल ओढ़ि लकुट कर लीने । कोउ घृत दधि अरु दूध प्रवीने ॥
कोउ अहीरी गावति आवहि । क्रीड़ा करहि प्रभुहि मन भावहि ॥
यहिविधि ब्रजवासी सब आये । नँदनंदन हँसि कंठ लगाये ॥
बालापनके संगी जाने । कोउन दही भात लै खाने ॥
पशु पक्षी आनँद भौ रुखा । मिले कृष्ण बिसरे सब दूखा ॥
बाल सखा हरिको सब धावैं । कीन्ह प्रीति प्रभु कंठ लगावैं ॥
कृष्ण कटक उतरयो सब तहाँ । मिले सबै ब्रजवासी जहाँ ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन कहत इमि, दुर्लभ दरश गोपाल ॥
घोषकथा जेहि सबसरी, प्रथम कथा सबचाल ॥३७॥

पूछत बात प्रात पुनि भयऊ । जानि न परी रैनि कित गयऊ ॥
कौनहुँ कहै श्याम व्रज आवहु । हमरे सँग तुम गाय चरावहु ॥
गोरस जित चाहो तित खाहू । रहो यहाँ कितहूँ जनि जाहू ॥
जे प्रभु श्री वृंदावन वासी । पाये हम न आज सुखरासी ॥
भरे अमित गज तुरँग अकूता । को बरणै भंडार बहूता ॥
नँदनंदन समझहु वे वाता । काकरि लागि हृदयमाहिं लाता ॥
मैं मतिहीन जान नहिं भेवा । द्विजपद चिह्न देवकर देवा ॥
जाकर अंत जान नहिं जाई । कृपा जानि सब करहिं ढिठाई ॥
कंठ भुजा गहि मिलत गोपाला । भक्तवत्सल सबकर प्रतिपाला ॥
बालसखा कीन्हीं मनुहारी । तेहि अवसर आई व्रजनारी ॥
आरति जत्नजटित कर थारा । मंगल गावत चलीं अपारा ॥
अमरमूरि पावहिं जिमि योगी । चाहत दर्शन श्याम वियोगी ॥
गृह सुत श्याम दुराति सब रहहीं । लाज छाँड़ि चरणन चित धरहीं ॥
डारहिं चरण छोरि कर केशा । चरणकमल पूजत जनु शेशा ॥
अड़सठि तीरथ करि जनु लयऊ । परशत सुख व्रजवासिन भयऊ ॥
कौनहुँ ताजि आवहीं मथानी । कौनहुँ गोमय रज लपटानी ॥
कौनहुँ कुसुममाल भलि कीन्हीं । कौनहुँ गुंजमालिका दीन्हीं ॥
कोउ एक आय चतुर श्रम हरही । मनभावती प्रीति चित धरही ॥
कौनो दधि माखन लै आवै । सुंदरश्याम देखि सुख पावै ॥
करुणानिधी कृपा तब कीन्हीं । अमृत दृष्टि सबनको दीन्हीं ॥
गई विपति उर भयो हुलासा । पंकज जैसे रविहि प्रकासा ॥
कैसे पाप रहै तेहिकेरा । जातन कमलनयन प्रभु हेरा ॥
व्रजवासिन बिनती अनुसारी । गोकुल पग अब धरहु मुरारी ॥
प्रेमवश्य सनकादिक जाना । सदा प्रेम वश हैं भगवाना ॥

दोहा—इतै उतै तट यमुनके, उतरेउ कटक अपार ॥
पुरुषोत्तम प्रभु शरणमें, गज तुरंग अतिभार ॥२८॥

नर नारी उर सुख भा सबहू । मानहु प्रभु विछुरे ना कबहू ॥

दिन द्वैचारि रहे यहि घोषा । छोटे बड़े कीन्ह संतोषा ॥
मिलत कृष्ण हम कहा बखानाहीं । वह सुख तो व्रजवासी जानहीं ॥
यहि अवसर सब लोग हँकारा । यदुवंशिनसन मति अनुसारा ॥
तुम दिन एक रहो सुस्ताहू । गोकुल सुख दीजो सब काहू ॥
मैं अकेल आगे तहँ जाऊँ । जहाँ युधिष्ठिर गजपुर गाऊँ ॥
तुम आवहु सब भीम समीपा । मैं जैहौं अर्जुन कुलदीपा ॥
जबलगि तनुकी तपति नशाई । सुमिरि हृदय गौतम ऋषिराई ॥
तबलग भीम धरै बल जीवा । जबलग पंथ गहै गांडीवा ॥
सावधान ह्वै आयो देशा । गजपुर नगर भयो परवेशा ॥
नर नारी सब करहिं शृँगारा । पुरी हस्तिना कीन्ह पसारा ॥
नीचहुके न्योते जो जाइहि । भूलि न कोऊ बात चलाइहि ॥
कहि अस वचन अग्रुसरे देवा । जाकर कोउ जानत नाहिं भेवा ॥
महावेग पंडवपुर गयऊ । नगरनिवासिन नवनिधि लयऊ ॥
विप्र वेद धुनि करहिं बहूता । वेद पुराण होहिं आकूता ॥
कहैं कृष्ण इनहू भल मानहु । दर्शन कृष्ण सत्य जिय जानहु ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

काहे धूम्रपान जिय धरहू । अर्जुन दरद न कस तुम करहू ॥
देव शिरोमणि यादवराई । जाकी संपति सब जग छाई ॥
पंथ दरश हम वे अनुरागी । तजि मनमर्ष अनल उठि लागी ॥
पुनि आगे संन्यासी रहही । कृष्णदरश विनु आन न चहही ॥
प्रभु पुनि उनहिं देखि करजोरा । बल अरु अचलरूप तैं मोरा ॥
अचल पताका शालग्रामा । चलि संन्यासी कथि गुण ग्रामा ॥
तपा तपोधन जनु संन्यासी । तजाहिं न भक्ति प्रेमकी फाँसी ॥
पुनि आगे जब चले मुरारी । चढ़ि धवला गृह देखहिं नारी ॥
बरषहिं पुष्प वृष्टि वनमाला । नयन ओट जनि होहु गोपाला ॥
सुन्दरश्याम चढ़े रथसोहा । देखत वीर सकल दिशि मोहा ॥
बन्दीजन सब अगमन आये । कंचन कलश भले तिन पाये ॥

नृत्य करत आवहिं तिनसंगा। इनहीं कीन्ह दैत्यकर भंगा॥
मोह समुद्र बँधेउ संसारा। औषधि रामनाम उजारा॥
बन्दीजन कस करहिं बखाना। दश अवतार कहे जु पुराना॥
तीरथ यज्ञ तपस्या मानाहिं। रामनाम महिमा गुण जानाहिं॥
रामनाम शंकर गुणगाहा। सुर नर मुनि रामहिं चितचाहा॥
राम रटत पतितौ निस्तरही। कोटि जन्मके पातक हरही॥
यहिविधि नगर कीन्ह पैसारा। बन्दीजन सब करहिं पुकारा॥
जब सब सुनेउ कृष्णकर आवन। जानौ भूमि हरी भइ सावन॥

दोहा–कमलनयन करुणायतन, रथ चढ़ि मोहनवेश॥
श्रीगोपाल गुण गावत, गजपुर कीन्ह प्रवेश॥३९॥

इति श्री महाभारते अश्वमेधपर्वणि कृष्णगजपुरप्रवेशनं नामएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

जन्मेजय उवाच।

जन्मेजय राजा करजोरा। जैमिनि कहहु मनोरथ मोरा॥
सुनत कथा कलमष सब गयऊ। जन्मेजयको आनँद भयऊ॥
जैमिनि ऋषिय नृपतिसन बोला। सावधान ह्वै सुनहु अडोला॥
यहि अवसर आये यदुराई। मन्त्रिन सहित गहे नृप पाई॥
जहाँ युधिष्ठिर यज्ञ करावाहिं। हरि आगम तहँ सबहि सुनावहिं॥
हरि आगमन सुनत सुख भयऊ। राजा उठि चरणन तर गयऊ॥
करि दंडवत गहेउ पग जाई। हरि नृपतिहि लिय कंठ लगाई॥
सिंहासन पर प्रभु बैठाये। धन्य भाग्य यदुनंदन आये॥
गंगाजल लै चरण पखारहिं। धूप दीप आरती उतारहिं॥
तन धन सब न्योछावरि करहीं। आये भले बहुरि पग परहीं॥
राय युधिष्ठिर पूछी बाता। है पुनि कुशल देवकी माता॥
यशुदा पुनि रोहणि संघाता। कहहु कृष्ण सबकी कुशलाता॥
कमलनयन फिरि वचन सुनाये। कुशल सबै तुम निवते आये॥
वसुदेव हलधर राखे फेरी। आये सबै द्वारका हेरी॥

भीमहि सकल सैन सौंपाई । कुशल सबै तुम निवते आई ॥
जौन अनंद भयो तेहि बेरा । आनँदहूने आनँद हेरा ॥
अर्जुन चरणकमल नित ध्यावहिं । विँहँसि कृष्ण तेहि कंठ लगावहिं ॥
सहदेव नकुल मिले गहि चरणा । कुंती द्रौपदिके दुख हरणा ॥
चारो वर्ण मिले गहि चरणा । सावधान कीन्हे दुख हरणा ॥
अर्जुन हरिकी पवन डुलावहिं । प्रभु गहि अंकमालिका लावहिं ॥
यहि अवसर नृप वचन प्रकाशा । सुनहुव पंथ शोक भा नाशा ॥
कुंतीसन अस जाय कहाऊ । तिनके आगे तुम सब जाऊ ॥
नरनारी सबही हँकरावहु । घर घर सजि करि सबहि चलावहु ॥
नगर कुलाहल बाजैं बाजा । नर नारी सब कीनेउ साजा ॥
राजा यौवनाश्व पग लीन्हों । यदुनंदन आयसु तब दीन्हों ॥
मिले कृष्ण सबहीको ऐसे । पायउ अमृत प्यासा जैसे ॥
परशत हरिपद सबहि चलावहिं । नगर दुंदुभी नाद बजावहिं ॥
गायन गावहिं मंगलचारा । नट नाटक सब नृत्य पसारा ॥
मागध सूत भये असवारा । बहुप्रकार तिन विरद उचारा ॥
रानि प्रभावति आई तहाँ । सखीसहित द्रौपदि है जहाँ ॥
रानी सबही वाउ डुलावहिं । मिलत परस्पर चीन्ह न आवहिं ॥
कुंती द्रौपदि मिली तुरंता । द्रौपदि चरण गहे आवंता ॥
सतभामा रुक्मिणी यशोदा । रोहणि मिलति परस्पर मोदा ॥
औरौ जे सब कृष्णहिं भावैं । तिनके चरण रेणु शिर लावैं ॥
जहँ जहँ भीर परी सब सही । भीम चरण राजाके गही ॥
माता सबै रहीं यक ठाँवा । पृथक पृथक सब शीश नवावा ॥
मिलति प्रभावति रानी कही । महारत्न चरणन धरि रही ॥
अनिरुध मदन सहित कृतवर्मा । पंथ मिलेउ माद्रीसुत धर्मा ॥
पांडव सबै मिले यदुवंशा । राजवंश सब मिले सुवंशा ॥
द्रौपदी रानी मिली सुजाई । यहि कारण भेंट यदुराई ॥

द्रौपद्युवाच ।

मैं दासी यदुनंदन केरी । सब यदुबंशिनकी हौं चेरी ॥
लाज उदधि बूड़ेउ भवजाला । मोहि बाहु हीनेउ गोपाला ॥
पंचाली जो अस्तुति करई । पुनि पुनि चरणकमल शिर धरई ॥
उतरेउ कटक गंगके तीरा । जाति जातिके न्योते बीरा ॥
राजमँदिर विश्वकर्मा कीन्हा । तहँ विश्राम देवकी दीन्हा ॥
सोई सहस सखी विश्रामा । उतरि रुक्मिणी अरु सतभामा ॥
छोटे बड़े कीन संभारा । सब काहू कीन्हों जेवनारा ॥

दोहा–राजाके मन बहुत सुख, घर घर मंगलचार ॥
पुरुषोत्तम जन तरन कहँ, रामचरित अनुसार ॥४०॥

मातन मिले भीम अति भइया । मिले परस्पर दिन द्वै गइया ॥
सतभामा संदेश पठावा । श्यामकर्ण देखन जो पावा ॥
माता कहेउ कृष्ण जब कहई । श्यामकर्ण दर्शन सब चहई ॥
नृपति कृष्ण सब आयसु दीन्हा । गोपी सबै संग करि लीन्हा ॥
राजा सब योधा बुलवाये । गज तुरंग सब पीठि चढ़ाये ॥
हित अनहित कोउ बिछुरि न पावै । तुरी तुरो सबही मन भावै ॥
उपरोहित बल धौम्य बुलाये । यदुबंशिनके संग पठाये ॥
ब्रह्मा वेद कीन्ह अनुसारा । सुन्दरि गावति मंगलचारा ॥
बिविध चतुर श्रम मधुकर भूला । माथे पारिजातके फूला ॥
चरचाहिं तुरँग चरित हरि गावहिं । कोउ देखहि कोउ देख न पावहिं॥
को गयंद चढ़ि रचसि सुरेखा । कोउ धवला गृह चढ़ि करि देखा॥
भई भीर कछु बरणि न जाई । तेहि अवसर प्रभु अवर बनाई ॥
एकहि एक बाजि सब लोगा । हरेउ तुरंगम भयो वियोगा ॥
वनिता सब मन्दिरको गई । नगर वियाकुल दशदिशि भई ॥
दैत्य नाम अनुशल्य प्रचंडा । लीन्हेसि तुरँग महाभुजदंडा ॥
तासु अनुज प्रभु कीन्ह सँहारा । दुर्योधन कर मित्र जुझारा ॥
भाई वैर सुमिरि तब आई । लीन तुरंगम पीठि चढ़ाई ॥
गर्जत कहै डरै नाहिं काहू । मारौं एकौ जियत न जाहू ॥

मार्ग भीम वृषकेतू धीरा । रहे तहाँ सब यादववीरा ॥
सबही नींद लीन है जाई । यौं यह चरित कीन्ह यदुराई ॥
बिह्वल वदन युधिष्ठिर राजा । आन करत आनै भा साजा ॥
माता पिता बन्धु गोपाला । तुम बिनु को करिहै प्रतिपाला ॥
चरित कृष्णकर महाअपारा । सब योधनकर गर्व प्रहारा ॥
अतिहि दुखित अरु लाज शरीरा । भयउ अधि मुख जे रणधीरा ॥
दानव कटक बिकट है जहँवा । गहेउ तुरंगम बाँधेसि तहँवा ॥
कहसि कृष्णकहँ अर्जुन भीमा । करत प्रचारत शंक न जीमा ॥
पांडव अरु यदुवंश कुमारा । भिन्न भिन्न करि सब ललकारा ॥
दोहा–गहि तुरंग रण गर्जेउ, सकल नगर अकुलान ।
पुरुषोत्तम जन गावही, हरिचरित्रको आन ॥ ४१ ॥
इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि तुरंगहरणं नाम द्वादशोऽध्यायः॥ १२ ॥

जन्मेजय उवाच ।

जैमिनि कहो कथा मनभावा । कैसे यज्ञ तुरंग छुड़ावा ॥
बिप्रीति बात कही नहिं जाई । गहेसि चरण मोहि कहौ बुझाई ॥
जैमिनि राजहि कथा सुनावा । कृष्णनगर बाजे बजवावा ॥
धर्मराय चिंता जनि मानहु । पैहौ तुरँग सत्य जिय जानहु ॥
सात्यकि कृतवर्मा दुखहरना । तुम नृप यौवनाश्व घनबर्ना ॥
सहदेव नकुल अवर रणधीरा । सूनो नगर न कीजै वीरा ॥
हम सँग भीम प्रद्युमन कुमारा । सर्वसाथ वृषकेतु जुझारा ॥
पंथ सहित हम लेव तुरंगा । दैअत दल कर करिहैं भंगा ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

तुम बिनु कृष्ण रहैं नाहिं प्राना । योधा काहु दीजै जाना ॥
राजा मत यदुनाथहि भावा । करपंकज गहि बाण उठावा ॥
प्रद्युमनकुमर उठे शिरनाई । लीन्हों बीरा शीश चढाई ॥
दारुण दैत्यहि तृणवर लेखत । आनउ तुरंग सबनके देखत ॥

उत्तम रथ चाढ़ि दिव्य हुलासा। जैसे पंकज रविहि प्रकासा ॥
पुनि करकमल गहेउ करवीरा। दूसर को लैहै रणधीरा ॥
पुनि वृषकेतु चरण गहि बोला। लीन्हेउ वीरा रणहि अडोला ॥
प्रद्युमन साथहि हमहिं सिधावहिं। दानव पकरि चरणतर लावहिं ॥
ब्राह्मण आन वर्ण जो धरई। श्राद्ध दिवस मैथुन जो करई ॥
पतिव्रता ऋतुकाल जु तजई। वेश्या दासी पित्र जु भजई ॥
ते पातक मैं पावौं देवा। जो प्रद्युमन रण तजिहौं सेवा ॥
लाय प्रदक्षिण रिपु संहरना। भये विदा गहि हरिके चरना ॥
बजी देव दुंदुभी अनंता। रथ चाढ़ि चले कुमर सामंता ॥
हाँक देत पैठे रणमाहाँ। ठाढ़ न हो दानव अवकाहा ॥
पुनि दानव अस बोलेउ वयना। फिरि नगरी न देखिहौं नयना ॥
तुम अनंग पुष्पहिके बाना। ज्ञानहीन कह करिय प्रज्ञाना ॥
पतिव्रता तपस्वी है जहँवा। कछू न जोर चलै जिय तहँवा ॥
सुंदरि कितहु होइ विननाहा। तजि संग्राम तहाँ वरु जाहा ॥
यह सुनि अनल क्रोध परजारा। बाणपंच प्रद्युमन सँहारा ॥
दानव शल्य महा परचंडा। प्रद्युमन बाण कीन्ह शतखंडा ॥
पुनि प्रद्युम्न बाण शतमेला। काटि बाण रण पैसि अकेला ॥
पुनि अनुशल्य बाण फटकारा। मूर्च्छित कुमर भ्रमत भुव पारा ॥
दैत्य जूझ जानै नहिं पाये। भ्रमत कृष्णके शरणहि आये ॥
दोहा–पुरुषोत्तम जन वर्णही, दानव अति बरियार ॥
मायायुद्ध न जानही, परे धरणि विकरार॥ ४२ ॥
उठु रठु शठ संग्राम दुहेला। तैं जानेउ द्वारावति खेला ॥
तजहु राजगृह होहु उदासी। खाहु कंद जैसे वनवासी ॥
रणमहि युद्ध करतहौ ऐसे। तब शंवर मारेउ तुम कैसे ॥
रुक्मिणि गर्भ जात वरु तबहू। लाज न हती भई अस अबहू ॥
क्रोधित देखे मदनगोपाला। कहे भीम फिरि वचन रसाला ॥
ऐसे शल्य दैत्यके बाना। जस यदुनंदन तुम रिसिआना ॥

तुम सुखिया परदुख कहा जानहु । प्रद्युमन महावीरके मानहु ॥
तुमहि अछत दानव किय पेला । ताकहँ पठवहु कुमर अकेला ॥
ताजि मूर्च्छा क्रोधित तव भयऊ । प्रद्युमन संग भीमके गयऊ ॥
कृष्ण वचन सुनि कुमर रिसाना । गज तुरंग रथ करत मशाना ॥
मकरध्वज मारे सब योधा । भीम हृदय उपजा तव क्रोधा ॥
गहि गयंद धरणी फटकारा । रथसों रथ लै किय ढेफारा ॥
जैसे कितहुँ होय भूचाला । तेहि विधि डोले दश दिगपाला ॥
दानव वीर महाबरियारा । तीनि कोटि दल महा जुझारा ॥
गये समाय कछुकरण जूझी । पुरुषोत्तम कछु परै न बूझी ॥
महावीर पुनि पुनि अस कहही । रणमहँ दरश कृष्णकर चहही ॥
भीमसेन अरु यादव नंदा । करहिं युद्ध मन होत अनंदा ॥
कथा विचित्र मर्म नहिं जाना । दानव युद्ध दुवौ मुरझाना ॥
पुनि ठाढे देखहिं जु मुरारी । दानव लेत दुहुँनको मारी ॥
यह प्रस्ताव चतुर्भुज धारी । भीम पुत्रकी लागि गुहारी ॥
प्रभुकर वाण पर रणमाहा । भीमपुत्रकी कीन्हीं छाहा ॥
दानव देखत दृष्टि निहारी । एतो हैं त्रिभुवन दुखहारी ॥
अवर वीरसों युद्ध न भावा । दानव दरश कृष्णकर पावा ॥
तेहि क्षण गुप्त भये यदुराई । दानव बात कहन नहिं पाई ॥
सोचै दैत्य जीय महँ अपने । कौन दोष मैं कीन्हों स्वपने ॥
मेरे देश अनीति विचारी । शूद हरी विप्रनकी नारी ॥
की कन्या धन जीवहिं ताता । कै रजसा सों होय सँघाता ॥
की चोरी होवै पटरानी । की विवाह बड़ कन्या जानी ॥
कै हरिभक्ति होय जागरना । कै हों विमुख भयो हरि शरना ॥
तबहि चतुर्भुज रणमहँ आये । को बड़ पाप न देखन पाये ॥
पूर्वजन्म मैं बड़ तप कीन्हा । हरि हर ब्रह्मा मोहि वर दीन्हा ॥
जो कछु सुकृत होय हम पाहा । बहुरिव दरश होय रणमाहा ॥

दोहा–दुखसुख देह विवर्जित, रणमहि दर्शनदीन्ह ॥
पुरुषोत्तम हरि सन्मुख, दैत्यबाण करलीन्ह॥ ४३ ॥

आये कृष्ण दास हित वाना । रणमहँ दानव बहुत रिसाना ॥
अब मैं युद्ध तुमहिं सों करहूँ । अब कछ बहुरि कराह न धरहूँ ॥
मैं अपने जिय यहै विचारो । तुमको पहले बाण प्रहारो ॥
बाण सात मेले गोपाला । अंतरदैत्य कीन्ह शरजाला ॥
पुनि सन्मुख गोविंदहि धावा । शक्ति प्रहारत कृष्ण जनावा ॥
दीनदयालु कीन्ह संतोषा । ब्रह्मबाण मूर्च्छित भा चोषा ॥
दारुण कटक कृष्ण पहँ धावा । पांडव सहित बहुत दुख पावा ॥
करै विलाप युधिष्ठिर राजा । यज्ञ बिगार भयउ बिनु काजा ॥
युगयुग लाज भई बड़ मोरी । मन हमरो विधि लीन्ह अजोरी ॥
दारुक रथ आनेउ प्रभु जहँवा । रुक्मिणि सतभामा गइ तहँवा ॥
द्वारका वासिन बड़ दुख माना । जननी सकल भईं बिनु प्राना ॥
तब मकरध्वज कह रिसआना । दैत्यशल्यको मर्म न जाना ॥
मृत्युकाल जाकहँ हरिचरणा । ताकहँ कहौ कवन आभरणा ॥
अजर अमर अविनाशी देहा । भये संतन प्रभु संत सनेहा ॥
उत्पति प्रलय करत क्षण माहा । वे प्रभु तीनि भुवनके नाहा ॥
भुवन तीनि तारिवेके कारन । धारि लीला संतन निस्तारन ॥
नर नारी लागे दुख मानन । योगेश्वर जानहिं प्रभु कारन ॥
सुमिरण हेत सकल मन लागे । यहि अन्तर यदुनन्दन जागे ॥
पुनि सब कटक भयउ आनन्दा । निकसेउ राहु गहेउ जनु चन्दा ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन वर्णही हरिचरित्रको जान ॥
निजलीला हरि जानही, दूसर लखैनआन ॥४४॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि कृष्णचरित्रवर्णननामत्रयोदशोऽध्यायः॥१३॥

जैमिनिरुवाच ।

तेहि अवसर पुनि देवगोपाला । धाये चक्र लीन्ह जनु काला ॥
दैत्यवंश जनु सैन गयन्दा । सिंहनाद तस यादवनन्दा ॥
कृष्ण तबहि क्रोधित अति धाये । कर्णपुत्र तब आगे आये ॥
गहिकर पद राखे भगवाना । तुमसन यमराजहु डर माना ॥
कमलनयन सन विनती कीन्हों । माँगि बिदा आगे पग दीन्हों ॥
मारे सात बाण शिरमाहा । बहुरि दैत्य जैहै अबकाहा ॥
रणमहँ जाय गर्जि भा ठाढ़ा । प्रलयकाल सम शर तेहि काढ़ा ॥
पुनि दानव प्रचंड रिसिआना । बीचहि काटे सातौ बाना ॥
पुनि दश शर दानव तन मारे । रथ सारथी कुमर महि डारे ॥
तब वृषकेतु चढ़े रथ आना । सुमिरि कृष्ण कृत शर संधाना ॥
दानव रथ सारथि विनु करो । कनकछत्र क्षणमें तेहि हरो ॥
तबलगि रथ दूसर आडाटी । रिपुकी भुजा कुमर तब काटी ॥
पुनि उठाय तेहि धरणि पछारा । त्राहि त्राहि तब दैत्य पुकारा ॥
धनिधनि कर्णपुत्र वरियारा । तुम समान कोउ नाहिं जुझारा ॥
कंचनकर्ण वरसि नित धारा । तुम सुत राखेउ प्राण हमारा ॥
कर्णपुत्र तब महादयाला । लै आये जहँ मदन गोपाला ॥
यहै दैत्य जेहि लीन्ह तुरंगा । निगम वचन तब कहेसि सुरंगा ॥
धन्य कर्णनन्दन रणधीरा । तुम समान दूसर नहिं वीरा ॥
यह अनुशल्य महादल पेला । गहि आनेउ रण कुमर अकेला ॥
नाद वेदध्वनि सुन्दर श्यामा । किय वृषकेतु सुदंड प्रणामा ॥
माता पिता बन्धु गुरु देवा । तुम तजि आन न जानहुँ सेवा ॥
महादयाउ पतित निस्तरना । अपराधिनको राखहु शरना ॥
तब दानव विनती बहुधारी । अवगुण क्षमिये देव मुरारी ॥
रखेसि प्राण वृषकेतु हमारा । आय करायो दरश तुम्हारा ॥
अधम योनि पछ मनु तब गयऊ । तजि संग्राम अनत तब भयऊ ॥

दोहा–दैत्य जीति रण आयऊ, तब वृषकेतु कुमार ॥
पुरुषोत्तम तेहि अवसरै, रामकथा अनुसार ॥४५॥

दानव भक्ति करै करजोरी । अब मैं प्रभु शरणागत तोरी ॥
नाना विधि सिरजहु संसारा । निगम न जानेउ मर्म तुम्हारा ॥
विश्वरूप पंडित सब बरणा । श्याम चतुर्भुज पंकज चरणा ॥
शंख रु चक्र गदा करधारी । गरुड़ारूढ़ भक्त हितकारी ॥
रूप नरेश वेष जगधारा । संतन लागि दशौं अवतारा ॥
गोकुलके अपवाद निवारी । करी दया कुब्जा निस्तारी ॥
द्रौपदि कर तुम राखेउ माना । विप्र दारिद्र हरेउ भगवाना ॥
अमित वनस्पति जाय न चीन्हा । तुलसी सब ऊपर प्रभु कीन्हा ॥
दानव हरिकर सुयश बखाना । पावन पतित सम्हारिय बाना ॥
कीन्ह अनाथनकर प्रतिपाला । मिले कृपा करि दीनदयाला ॥
टेकि लियो प्रभु दाहिन अंगा । सुन्दरश्याम चले लै संगा ॥
जनन सहित राजै मिलवाई । सब वीरनसन प्रीति कराई ॥
भीमसेन प्रद्युम्न कुमारा । दानव दल उन सब संहारा ॥
उनहू दैत्य मिलायउ जाई । कर्णपुत्रकी कीन्ह बड़ाई ॥
आनउ तुरँग मेध सब काजा । सुनि सुख लह्यो युधिष्ठिर राजा ॥
जौन प्रतिज्ञा कीन्ह कुमारा । गह आनेसि दानव बरियारा ॥
राजा कहेउ दैत्य सों बाता । पठवहु निवता तुम जिमि भ्राता ॥
वे अपने सब दैत्य बुलावहु । परिजन सहित नीवतें आवहु ॥
वर्णों सब वृषकेतु अजीता । घर घर गावहिं मंगलगीता ॥
आये तब यदुवंश कुमारा । नित्य नवीन होय जिवनारा ॥
राजसभा बैठे सब अहहीं । चंदन धूप दीप नित लहहीं ॥
रत्न अश्व रत्ननकर हारा । होइन लागि यज्ञ अनुसारा ॥

दोहा–हरिजन कबहुँ न हारही, पुरुषोत्तमसुविचार ॥
जेहिंराखैंयदुनंदन, तेहिको जीतजुझार ॥ ४६ ॥

विधि बहुभाँति भई पहुनाई। चैत्रमासकी पूनो आई॥
होम विधान व्यास अनुसारा। भई वेदधुनि मंगलचारा॥
लदे गयंद कंचन संयूता। धन बहु दीनेउ विप्र अकूता॥
बीससहस द्विजको करि दाना। पुनि गोविंदकर आयसु माना॥
आनि तुरँग पुनि पूजन कीन्हा। सब विधि मन संतोषहि चीन्हा॥
कुमकुम चंदन चर्चहि अंगा। शंख बजाय चतुर श्रम गंगा॥
बहु प्रकार फूलनके हारा। गीत नादकर भा झनकारा॥
मणि माणिक मुक्ता डरवावा। आस पास शुभ चमर बनावा॥
विष्णु प्रीति सबको किय दाना। अस पतिव्रत पुनि राजा ठाना॥
मध्य विष्णु अस बरकी धारा। राजा द्रौपदि रहै न नारा॥
भूमिशयन औ वल्कल बसना। संयमजीव राम हरि रसना॥
यहि अंतर अर्जुन हँकराये। गंगोदक मज्जन करवाये॥
नीके संग तुरंगके जावहु। वर्षदिवसमें तुम फिरि आवहु॥
कृष्ण युधिष्ठिर आज्ञा दीन्हीं। शिर चढ़ाय करि अर्जुन लीन्हीं॥
हीरा रत्न होय उजियारा। प्रति वर भा अति मंगलचारा॥
दधि दूर्वा अक्षत लै आवा। इंद्र नीलमणि महासुहावा॥
करगांडीव विषम गहि बाना। शोभित चमर छत्र शिरताना॥
दिव्य वसन पहरे नित रहई। रसना राम अखंडित कहई॥
यज्ञ तुरंग आय किय ठाढ़ा। मानहु चंद्र बिंबते काढ़ा॥
बाँधाऋषिन कनककर पाटा। व्यासवचनअस लिखा लिलाटा॥
यज्ञहेत नृप तजेउ तुरंगा। महावीर अर्जुन इहि संगा॥
जोहि जूझनकर पौरुष होई। है वर धर्म धरे नर सोई॥
यहै वचन लिखि दीन्ह ललाटा। विजय करनकर भा अनुपाटा॥
देहिं अशीश सबै नर नारी। कुशल पंथ नित होय तिहारी॥
उभय भाँति सब विधिहि मनावहिं। जैसे जीति पंथ घर आवहिं॥
सुमिरत कृष्ण दुरति संहरणा। पंथ गहे राजाके चरणा॥
गद्गद गिरा नृपति तब बोला। हरि सहाय रण होहु अडोला॥

करि प्रदक्षिणा आये तहँवा । जननी सब बैठी थीं जहँवा ॥

दोहा–पंथगमन सुनि गजपुर, परमदुखी सबलोग ॥
पुरुषोत्तमवरुमरन भल, सह्यो न जात वियोग ॥४७॥

अरुंधती अनुसुइया नारी । मिलि धृतराष्ट्र और गंधारी ॥
गहे चरण जहँ कुंती माता । अर्जुन सन पूँछी अस वाता ॥
वर्ष दिवस लगि फिरव तुरंगा । कोको विजय करव तुव संगा ॥

अर्जुन उवाच ।

कहासि पंथ सँग पुण्य तुम्हारा । कृष्ण कृपा प्रद्युम्न कुमारा ॥
यौवनाश्व आवत है संगा । अरु वृषकेतु विषम दल भंगा ॥
सब वीरन नायो तव शीशा । अति हित जननी दीन्ह अशीशा ॥
रुक्मिणि बहुरि कहे शुभ वचना । पंथके साथ करहु रण रचना ॥
पुनि वृषकेतु बिदा जब भयऊ । सहित देवकी आयसु दयऊ ॥
यहि अंतर कुंती फिरि बोली । सुनहु पुत्र रण महा अडोली ॥
बिनु जननी बिनु तात कुमारा । कर्ण पुत्रकी करहु सँभारा ॥
गद्गद् वचन आशिषा दीन्हा । नितदुखिया विधिना हम कीन्हा ॥
बिदा होत परशे यदुनाथा । पठवन चले पंथके साथा ॥
नंदिघोष रथके संग्रामा । होम धूम देखिय सब धामा ॥
गजरथ चढि सुंदर सब गावहिं । वर्षहिं सुमन महाझर लावहिं ॥
यहि अंतर वृषकेतु कुमारा । रामनाम नित प्राण अधारा ॥
पतिव्रता भद्रावति जहँवा । रत्नथार आरति पुनि तहँवा ॥
लैकर कुमर अग्र भई ठाढ़ी । प्रेम प्रवाह नयन जल बाढ़ी ॥
जियते जनि बिसरौ हरिदेवा । कुंतीकी करियो भलि सेवा ॥
धर्मरायकी आज्ञा मानहु । सुमिरत रहै सत्य जिय जानहु ॥
भद्रावति मति सुकृत अडोला । मृगनयनी मधुरे सुर बोला ॥
वचन स्वामि शिर ऊपर बाना । देखत चरण रहै तव प्राना ॥
विजय करो हो बहु रणधीरा । पितु कर नाम जगावहु वीरा ॥
प्रतिपालहु अर्जुन कर संगा । नीके रक्षहु यज्ञ तुरंगा ॥

कृपा गोविंद दरश पुनि पाउव । हमते कृष्ण कबहुँ सच पाउव ॥
कृष्ण कुमर कह कर्ण कुमारा । भद्रावति सन वचन हमारा ॥
तीनिहुँ भुवन करे कोउ पेला । सन्मुख रणमहँ रहौं अकेला ॥
कर्ण पुत्र बोलेउ परिमाना । पंथहि लागि देउँ मैं प्राना ॥
रामनाम जप निष्फल होई । पिंड गया कोउ तृप्ति न होई ॥
वेणीके कोउ मध्य नहाई । जो वृषकेतु विमुख रण जाई ॥
चंद्रवदन अरु नयन विशाला । कहति कुमरसों वचन रसाला ॥
नयन नीर मुख बोल न आवै । सुंदरि प्राण दशहु दिशि धावै ॥
विजयके हेतु कही उनि बाता । बिछुरनका दुख जानि विधाता ॥
कंचन रत्न भूमि गोदाना । विप्रनको दिय कीन्ह पयाना ॥
मिले जाय अर्जुन कहँ वीरा । बाजन बाजहिं अति रणधीरा ॥
अर्जुन कृष्ण बिदा करि लोगा । गजपुर घर घर भयो वियोगा ॥

दोहा--पुरुषोत्तम हरि बिछुरत, करिये कवन बखान ॥
फिरि फिरि पाछे देखते, अर्जुनकिय प्रस्थान॥४८॥

वंदौं विश्वंभरके चरना । दीनदयालु पतित निस्तरना ॥
पुरुषोत्तम दासनकर दासा । अर्जुन विजय कथा परकासा ॥
गजपुरते जब चलेउ कुमारा । छाँडत देश न लागी बारा ॥
गयो तुरंगम महा विदेशा । झारखंड विंध्याचल देशा ॥
नीके दक्षिण देश सुहावा । महिषावती पुरी महँ आवा ॥
निर्मल नदी नर्मदा वहई । राजा नीलध्वज तहँ रहई ॥
रत्न जटित कंचन चहुँ फेरा । तेहि विश्वकर्मा भयउ दरेरा ॥
द्वार द्वार दिखिये जु गयंदा । चारों वर्ण करैं आनंदा ॥
मृगनयनी कर यंत्र बजावहिं । नाद मधुर कोकिल स्वर गावहिं ॥
चंद्रवदन गति चलति मराला । भाल सुरंग पुष्पकी माला ॥
कवनहुँ खेलहिं पांससारी । फूलहिं फूल करहिं करमारी ॥
कोमल वदन मंजुली रानी । कहेउ कुँवरसन पवनहुँ पानी ॥
जल तुरंग गय उत्तम जहँवा । आएुन कुँवरि चली गई तहँवा ॥

करि जलपान सखिनके सँगा । देखेउ आवत महातुरंगा ॥
शोभित गजमुक्तनके हारा । बाजत चलत किंकिणी झारा ॥
तनु कुमकुम सुन्दरी चढावा । मानौ उतरि स्वर्गते आवा ॥
ताम्रवदन जस हंस शरीरा । पीतपूँछ लोचन जनु हीरा ॥
तब रानी सखियन सन कहा । धरहु तुरंग अनूपम महा ॥
सुन्दरि वचन सुनत उठिधावा । करगहि पत्र ललाट बचावा ॥
नृपति युधिष्ठिर केर तुरंगा । अर्जुन बीर अहै येहि संगा ॥
जाकहँ जूझन कर बल होई । है बर धर्म धरै नर सोई ॥
सुनत वचन बाढ़ा अहँकारा । मोते सबल जु कौन जुझारा ॥
दोहा—पत्र बाँचि जबतम कयउ, कह कवि कथा विचारि ॥
बाँधि तुरंगम बोलऊ, लागेउ नगर गुहारि ॥ ४९ ॥
इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि तुरंगमधरनोनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

जैमिनिरुवाच ।

इहि अंतर आये सब योधा । पंथ वृषकेतु करत जिय क्रोधा ॥
यौवनाश्व प्रद्युम्न कुमारा । सँग अनुशल्य दैत्य बरियारा ॥
छाँडु तुरंग कहे सब बैना । कुमरप्रवीर बनावत सैना ॥

प्रवीर उवाच ।

करि अपूर्व अब युद्ध डराऊँ । तौ क्षत्रियकर धर्म नशाऊँ ॥
जो बल होय तौ करहु लराई । हमसन घोड़ा लेहु छुड़ाई ॥
इतना सुनत पंथ रिसिआना । कोपि गहेउ करमें धनु बाना ॥
अर्जुनसों विनती अब करी । कर्णपुत्र आगे अनुसरी ॥
हाँक देत सन्मुख रण धाये । उतते कुँवर प्रवीरौ आये ॥
पंचबाण प्रवीर फटकारा । रथ सारथि वृषकेतु कुमारा ॥
सात बाण वृषकेतु प्रचंडा । रथ सारथी कीन्ह शतखंडा ॥
पुनि प्रवीर जोधा रिसिआना । वर्षन लगेउ अखंडित बाना ॥
पुनि वृषकेतु विषम शरमारा । कुँवर प्रवीर परेउ विकरारा ॥

फिर वृषकेतु विषम शर साधी। कुँवर प्रवीर लीन्ह रणबाँधी॥
हाहाकरत नगर सब धाये। राजा अनलसिंह लै आये॥
सुतवध देखि नरन महि नयना। जै कहैं हँस बोलत बयना॥
तीनि क्षौहिणी दल बरियारा। देखिय देशहु दिशा अँधियारा॥
छाँड़िदेहु तुम पुत्र हमारा। नाहित जरिहै हौ सब छारा॥
बाँधा पुत्र नृपति दुखमाना। सबकहँ मेलेउ दशदिशि बाना॥
माहिष्मती नृपति जोधाये। तब आगे है अर्जुन आये॥
रणमहँ सफल पंथके बाना। जस अघहरत नाम भगवाना॥
अमितबाण नृप कीन्ह प्रहारा। पंथ निकट एकौ नहिं पारा॥
ज्यों पुनि क्रोध धनंजय कीन्हा। रथ सारथी डारि महि दीन्हा॥
टूटि ध्वजा मूर्छितभा राजा। बहुरि सँभारि उठेउ करि साजा॥
पुनि रण धनुष बाण लै धावा। एक एक शर पंथ अड़ावा॥
कृष्णदूत सन यमकर दूता। तैसे निष्फल बाण बहूता॥
देखिसि जीय विचारि अबूला। येतो सबै असूझ अतूला॥
नीलध्वजकी दुहिता स्वाहा। तेहिते उहिके अनल विवाहा॥
राजा विनय कीन्ह करजोरी। वैसन्दर विनती सुन मोरी॥
रणमहँ बाँधि लीन्ह परवीरा। हमहूँ रणहि भई अतिभीरा॥
अब लागहु तुम मोरि गुहारी। जारि भस्म अरि कीजिय झारी॥
प्रज्वलित प्रलय अनल तब भयऊ। पंथ सैन ज्वाला तन दयऊ॥
चामर छत्र जरहिं सब गाता। प्रज्वलित अनल सबै संहाता॥
चौंक गये सबही रणधीरा। पंथसैन कोउ धरै न धीरा॥
वरुण बाण तब पंथ पँवारा। शीतल होत न लागी वारा॥
फिरि जो अग्नि जगी पुनि तहीं। अर्जुन विनय जोरि कर कहीं॥
तव मुख सर्वदेव परधाना। तुमहींलागि यज्ञ हम ठाना॥
राय युधिष्ठिर नित उठि सेवा। निशि दिन होम होत है देवा॥
नंदिघोष गांडीव सुसेवा। दीन्ह तुम्हार सबै यह भेवा॥
महा परम हित तुमहिं हमारा। तुम मारहु तौ कवन उबारा॥

निशिदिन होम गंगके तीरा । सुनि अस विनय अग्नि भा थीरा॥
अर्जुनको हरि संकट जानी । अंतरिक्ष आये सुखदानी ॥
ऊपर हो प्रभु रक्षा कीन्हीं । बल सब पावक कर हर लीन्हीं ॥
दोहा-बाल न बाँको ताहिको, जेहिराखै करतार ॥
पुरुषोत्तम अस भाषहीं, निगम वचनअनुसार ॥५०॥
जन्मेजय राजा मतिधीरा । पूछहिं जैमिनि धर्म शरीरा ॥
यह कौतुक मेरे मन आहा । सुना चहौं जस अनल बिवाहा ॥

जैमिनिरुवाच ।

नीलध्वजके ज्वाला रानी । स्वाहा कन्या सो जगजानी ॥
रूपवती धर्मिष्ठ सुरेषा । तीनि लोक मनमोहन वेषा ॥
अतिसुंदरि साँचे जनु ढारी । मातपितहि प्राणनते प्यारी ॥
नीलध्वज पूँछयो सब लोगा । स्वाहा भई विवाहन योगा ॥
राजा उर अति ही भा सोचा । पूछेसि बात सबै संकोचा ॥
स्वाहा विनय सुनहु तुम मोरी । कहु स्वाहा वर रुचि जो तोरी ॥
शूरवीर सुरराज कुमारा । आपन जियकर कहहु विचारा ॥
कटि केहरि बोलति पिकबयनी । बोली सकुचि पितासन बयनी ॥

स्वाहोवाच ।

मृत लोकहि नहिं वरों भुवाला । भा मनक्रोध महाजंजाला ॥
देवलोक देखहु वर कोई । तुमहिं लायक समधी जो होई ॥
सुनि स्वाहा विवाहकर साजू । कहैतौ इंद्र बुलावों आजू ॥
सुनहु पिता मोहि इंद्र न भावै । अतिगर्वंत दोष हिय लावै ॥
यज्ञ दान जो बहुविधि करई । अमरहेतु जिय कबहुँ न धरई ॥
निशिदिन कष्ट करै अतिभारी । आपन कहँ बड़राज विचारी ॥
पुनि कोउ तपा साध जिय जारै । तेहिको जाकर इन्द्र बिगारै ॥
वासव ज्ञान तबहि मैं चीन्हा । मुनिपत्नी सँग कुत्सित कीन्हा ॥
गौतम ऋषि तब दीन्हौ शापा । योनि सहस्र भई तेहि पापा ॥
हरि हरि रटेउ अखंडित बैना । योनि सहस्र भयउ पुनि नैना ॥

स्वर्गराज्य जिय रहै भुलाना। हरिकर मर्म उनहुँ नाहिं जाना॥
दोहा--हरिकरजन जो ताहिपुर, जहँकर अविचल राज॥
पुरुषोत्तम हरि चरणबिनु, इंद्रासन केहि काज॥५१॥
तेहि कारण मैं नाहिं न चहऊँ। याको कारण सुनु मैं कहऊँ॥
दुहिता मात पिता हित होई। विधि संयोग विवाहैं सोई॥
तेहिते दूसर जो चित धरई। रौरव नरक नारि सो परई॥
शिला भंग हो परशत देहा। अरु परिहरै गोविंद सनेहा॥
तेहिते मानुष सँग मन भंगा। निकसैं प्राण अनलके संगा॥
तेहिते दूसर ना चितलाऊ। जानति अहों अनलकरभाऊ॥
सबै देवमुख अनल प्रधाना। तासन मोर बहुत मनमाना॥
देव असुर अरु किन्नर नागा। सब तजि मोहि अनल मनलागा॥
जब स्वाहा अस वचन उचारे। नीलध्वज चकृत भये भारे॥
अवरौं नृपमंदिर जे रानी। सब मिलि स्वाहासों रिसिआनी॥
कवन वचन तुम नृपहि सुनाई। अग्नि कहत तुम नाहिं लजाई॥
भक्ष दरिद्र दाह दिन राता। वाहन मेष बहुत उत्पाता॥
धूम्रवर्ण रसना हैं साता। परशत होय भस्म सब गाता॥
जे ताकाहिं ते करहिं विचारी। नीचहु मन दौरावति नारी॥
जो वनिता पतिवरता होई। तीनों भुवन पूज्य है सोई॥
दोहा-पतिव्रता हरिजनहिये, दूसर चित न समाय॥
पुरुषोत्तम हरिजन हिये, रामै नाम सहाय॥५२॥
स्वाहा श्रवण परे अस वचना। लागी करन होमकी रचना॥
गंगा जाय कीन्ह अस्नाना। पहिरे शुभ्र महा परिधाना॥
उपवन में वेदी वनवाई। मुनिगण सहित अग्नि पुजवाई॥
मन विच स्वामि अग्नि मैं कीना। टेक न तजौं रहै मनलीना॥
चन्दन अगर धूप घृत क्षीरा। तिल तंदुल सब खाँड़ सुवीरा॥
कदलीहो सुगन्ध बहुभाँती। इहविधि होम होय दिनराती॥
अनल प्रसन्न भये उठि धाये। विप्ररूप हो नृप गृह आये॥

राजा बहुविधि कीन प्रणामा। आदर करि पूछेउ तेहि नामा॥
कस आये ऋषि तारन वरना। पूजेउ हर्षि पखारेउ चरना॥
लखियत कनक वर्ण सबदेहा। तुम्हरी दृष्टि शत्रुजरि खेहा॥
तुमसन अधिक हेतु हिय धरहूँ। आज्ञा देहु सो तुरतहि करहूँ॥

विप्र उवाच।

बोल्यो विप्र सुनहु मम काजा। स्वाहा कारण आयउँ राजा॥
गोत्र मोर शांडिल्य सुजाना। स्वाहा मोहि देहु नृप दाना॥

राजोवाच।

सुनिये विप्र कहौं मैं काहा। मानसकी इच्छा नहिं स्वाहा॥
कन्या अवर सुनो द्विज मोरे। करौं समर्पण सो मैं तोरे॥

विप्र उवाच।

सुनु राजा मन करो विचारा। विप्ररूप मैं अग्निकुमारा॥
स्वाहा सत्य भयो संतोषा। भेष फेरि मैं आयो चोषा॥
राजसभा जु अहै परधाना। विहँसे सब मन काहु न माना॥
सब मिलि नीलध्वज समझावा। अग्निक नाम लेत द्विज आवा॥
इनकी सबै परीक्षा लीजै। अग्नि छाँड़ि निजमुखते दीजै॥

दोहा-अस कन्या देखी सुनी, सबके काहू नकाउ॥
पुरुषोत्तम जे पतिव्रता, अनलप्रीति मनचाउ॥५३॥

अनल उवाच।

मुनिवरसों बोले परधाना। तुमकहँ अनल न काहू जाना॥
जो विवाह स्वाहा सँग चहहू। तो निजरूप अग्निकर लहहू॥
यह सुनि विप्र तेज जिय धारी। अनलज्वाल मुख तुरत निकारी॥
जरने लागे सभा प्रधाना। जिय कंपे सब लोग डराना॥
करि प्रणाम लये नृपसेवा। शीतल भे वैसन्दर देवा॥
उबरे जीव गये दुख फंदा। राजा हृदय भयो आनन्दा॥
स्वाहाकी मौसी इक आई। राजासों अस बात जनाई॥
इन्द्रजाल मुख अग्नि दिखाई। नटको करतब विप्र बनाई॥

नरपति बचन सुनत विहँसाई । गृहमें लेहु परीक्षा जाई ॥
मृगनयनी सब संग लिवाई । परखहिं विप्रहि घर बैठाई ॥
सब सुन्दरिन विनय अस कीन्हा । कहौ विप्र पावककर चीन्हा ॥
जो कन्या हमरी तुम चहहू । आपन अग्निरूप तुम लहहू ॥
यहै कहत निकसी मुख आगी । जरन तहाँ चित्रसारी लागी ॥
धौला गृह गोपुर सब जरे । राजमँदिर कोउ धीर न धरे ॥
वेणी भूषण कंचुकि सारी । जरत सकल धरणी लैडारी ॥
नग्न भईं सुन्दर पटरानी । त्राहि करत गृह जाय लुकानी ॥
राजसभा महँ परी पुकारी । धवलहु जरत और वर नारी ॥
राजा तुरत गये मनुजानी । सखिन सहित रोवहिं सब रानी ॥
राजा धाय चरण गहि लेवा । शीतल भै वैसन्दर देवा ॥
सुन रानी अबहूँ मनमाना । इन कहँ अग्निदेव करि जाना ॥
हमरे केह जु तुम पतियाहू । कहौ इन्द्रसन करौं बिवाहू ॥

राज्ञ्युवाच ।

तुम हमको परखनकहँ दीन्हा । परम कुलाहल भा तेहिं कीन्हा ॥
जो तुम विलम तनकहू करते । हम सब जरि तुमहू पुनि जरते ॥
साधु साधु नृप करिय विवाहा । विधिवत इनको दीजै स्वाहा ॥
नर नारी कीन्हेउ सब साजा । भये अनंद रानी अरु राजा ॥

दोहा–अति विचित्र हरिलीला, कैसेहु जानि न जाय ॥
कहै कवि असु तेज तजि, मिले मनुष्यनआय ॥५४॥

तेहि अवसर राजा किय साजा । अनल बुलाये बाजे बाजा ॥
यज्ञ कर रहे तहाँ प्रमानी । स्वाहा राजमंदिरहि आनी ॥
नृपति कहेउ कन्या कहँलेहू । वचन एक माँगे तुम देहू ॥
जो वैरी चाहँ कोउ देशा । हमहिं मेटि करि करै कलेशा ॥
ताको भस्म करौ तुम देवा । यह हमरी मानहु प्रभु सेवा ॥
नृपति वचन सुनि कहेसि प्रमाना । राजा कवन कहत हौ ज्ञाना ॥
जो हमसों तुम करत सगाई । कहौ तो इहाँ रहैं हम छाई ॥

यहै वचन बोलेउ परधाना । सब प्रकार नृपके मन माना ॥
राजा विनय करत करजोरी । अनलदेव विनती सुन मोरी ॥
हमरे नगर करहु तुम वासा । जारौ जनि कोउ नगर अवासा ॥
और हमार कहा नित धरहू । रिपु जो आव भस्म तेहि करहू ॥
इतने वचन नृपति जब कहे । वाचाबंध अनल हो रहे ॥
नृपति हीय तब भा संतोषा । तुरतहि विप्र बुलाये चोषा ॥
अग्नि टेकिकै कीन्ह बिवाहा । वर पावक औ दुलहिनि स्वाहा ॥
वर वेदी तब विप्र बनावा । बहुतभाँति बाजन बजवावा ॥
वेदध्वनि विप्रन अनुसारा । सुंदरि गावहिं मंगलचारा ॥
नीकी विधि आहुति तब दन्हिा । विधिवत पंच भाँवरी कीन्हा ॥
पूरण आहुति द्विज मनमाना । बहुविधि दीनेउ विप्रन दाना ॥
गज तुरंग धन रत्न भँडारा । दासो सहस दीन्ह इकबारा ॥
कनक तुरँग रथ बहुबिधि साजा । दै दायज आनंदित राजा ॥
तहाँ एक मंदिर बनवावा । राजा नगर अग्नि रहे छावा ॥
यहि विधि भयउ व्याहकर काजा । सो जानिय जन्मेजय राजा ॥
नीलध्वजसन वचन जु बोला । तेहि कारण रण भयउ अडोला ॥
महापुरुषकर यहै विचारा । प्राण जाय वर वचन न टारा ॥
जय कारण जैमिनि सुनवावा । कृष्ण सकल अर्जुन समझावा ॥
भंजहि गढ़हिं कराहिं प्रतिपाला । अगम चरित प्रभु दीन दयाला ॥
जाकी इच्छा आपु न करई । ते कैसे पावकमें जरई ॥
जबही अग्नि तेज जिय धरई । देखत कृष्णहि सब बल हरई ॥

दोहा–अतिदल करुणानाथ जेहि, पुरवहु मनकी आस ॥
कृष्णचरण पंकज भय, अति पुरुषोत्तमदास ॥५९ ॥

राजा बहुरि अनलसन भाखो । यहि दिन लगि तुमहिं हम राखो ॥
सुनत वचन पावक रिसलागी । बहुरि रिसाये उठि रण आगी ॥
तनु अचेत भे सबै कुमारा । नारायण शर पंच सँभारा ॥
राम कृष्ण कही अर्जुन धाये । अग्नि विमुख भा पिछमन आये ॥

दुःसह नारायणकर नामा । अग्नि जूडिकै कटक जुड़ाना ॥
अग्निदेव तव रहे लजाई । नारायण जनजीति न जाई ॥
रामरमंत्र सो मंत्र जानिये । हरि तजि आनहिये न आनिये ॥
अग्नि देव तव रहे लजाई । यह रणधीर कृष्ण बलदाई ॥

अर्जुन उवाच ।

अर्जुन मनमहँ शंका मानी । अनलदेव सन विनती ठानी ॥
अश्वमेध जो तुमही भावै । काहे राजा यज्ञ करावै ॥
पावकसों तव पंथ रिसाना । नारायण शर देखि डराना ॥
पावक पुनि निज मनहिं विचारी । पारथ रक्षा करहिं मुरारी ॥

अग्निरुवाच ।

अग्नि कहा सुन पंथ कुमारा । देहिं जिवाय जवन हम जारा ॥
त्रिविध ताप संसार जुडाना । नारायणकर नाम प्रधाना ॥
अर्जुन क्षमा कीन रणमाहीं । आये अनल नृपति है जाहीं ॥
कहेसि आनि राजासन बाता । बल हमरा सब पंथ निपाता ॥
हरिकर जन अर्जुन अतिवीरा । भक्त शिरोमणि बड़ रणधीरा ॥
नीलकेतु सुन मित्र हमारा । पंथहि मिलहु सहित परिवारा ॥
देहु तुरंग अजहुँ भल चहहू । अर्जुनकी सेवा नित रहहू ॥
महावीर अरु हरिकर हीता । हम उनसन कवहूँ नहिं जीता ॥
वज्रबाण वे जरत न जारे । गिरि सुमेरुते टरत न टारे ॥
अनल वचन राजा हित मानी । पूछेसि गृह ज्वाला बड़ रानी ॥
जींवन चहिये नाहिं भल मरना । दीजै तुरंग गहिय हरि चरना ॥
यह सुनि रानी उठी रिसाई । क्षत्रिय धर्म गमावहु जाई ॥
अबहीं धन है बहुत भँडारा । पुत्ररु पौत्र सकल परिवारा ॥
केतिक दिवस जियत तुम रहिहौ । सब राजनमें नाम हुवै हौ ॥
रानी राजहि क्रोध बढ़ावा । मंत्रहीन पुनि रणमहँ आवा ॥
वीर धनंजय अहै रिसाना । रत्न पंख कीन्हेउ संधाना ॥
नीलध्वज कर सैन वितारा । वरषै वाण अखंडित धारा ॥

पुत्र पौत्र सब रण महँ जूझा । रथ सारथि रण परे असूझा ॥
युद्ध करत तब गइ है साँझा । मूर्च्छित परो नृपति रण माँझा ॥
पुनि सारथि रथ आन चढ़ावा । वेगि राजमंदिर लै आवा ॥
गत मूर्च्छा राजा तव जागे । रानी साथ करन रिस लागे ॥
तैं दुर्मति दै रणहि पठावा । जे उबरे ते सबै नसावा ॥
अग्निदेवकर कहा न कीन्हा । तेरे कहे अस्त्र हम लीन्हा ॥
ताको काज न कौनउ होई । त्रिया सीख जो चितमहँ धरई ॥

दोहा–अर्जुन भक्त कृष्णके, तेहि को जीतै पार ॥
पुरुषोत्तम सो अविचल, जाके हरि आधार॥ ५६ ॥

यहि अंतर नीलध्वज राजा । करने लाग मिलनकर साजा ॥
यज्ञ वाजि आगे करि लीन्हा । कंचनरत्न गयंदन दीन्हा ॥
पाटंबर अनेक लै आवा । गोकुल चरित सुंदरिन गावा ॥
आपुनि गहेसि पंथके चरना । करहु कृपा दुःसह अरिदलना ॥
अस राजा तुम चितमें धरऊँ । आज्ञा देहु जोइ सोइ करऊँ ॥
आनि मिले कीन्ही मनुहारी । अर्जुनवीर दीन अँकवारी ॥
आपुन मिलि सब वीर मिलाये । अति आनन्द नृपन उर छाये ॥
अर्जुन नीलध्वज सन कही । तुमरी कृपा वडाई जही ॥
अव तुम हमरी करहु सहाऊ । दीजिये पूर्ण यज्ञ करवाई ॥
नीलध्वज तुम यहै विचारहु । हम जो कहैं सो उरमहँ धारहु ॥
गजपुर पठवहु सब भंडारा । तुम प्रतिपालहु संग हमारा ॥
राजभंडार अहै धन जेता । गजपुरको पठवावहु तेता ॥
भायन पास गई नृपनारी । उन सन्मुख जा कीन्ह गुहारी ॥
क्रोधित रुदित खोल दिय केशा । टके चरण विधवके भेशा ॥
अर्जुन आय नगर कर छारा । पुत्र कुटुंब सहित सब मारा ॥
जो तुम हो अति प्रीतम मोरा । अर्जुन शिर काटो वरजोरा ॥
अर्जुन नाम सुनेउ जब काना । योधा तुरत प्रवीर रिसाना ॥
भक्तशिरोमणि कोउ न मारै । युद्ध करत रण कबहुँ न हारै ॥

जब भाइन कीन्हेउ मन भंगा। गइ ज्वाला जहँ निर्मल गंगा॥
रोपनि चिंता कीन्ह अंदोरा। दीन तुमार हतेउ सुत मोरा॥
पुत्र सुमिरिकै रुदन कराई। गंगाकहँ दोषन पुनि लाई॥
भागीरथी प्रगट हो आई। कहि मारा कहि मोहिं बुझाई॥
बहुत पुत्र लहै हेतु हमारा। कहु मैं जारि करौं तेहि क्षारा॥
ज्वाला कहै सुनौहो माता। पुत्र मोर अब पंथ निपाता॥
सुत संताप धरणिमें परयो। तब गंगा कहँ दूषणधरयो॥
छटए मास पुत्रके हाथा। धरणी परै पंथकर माथा॥
सुनत शाप उर भा संतोषा। ज्वालाचली अनलते चोषा॥
हरिकर चरित को वरणै पारा। विधिकर लिखा टरै नाहिं टारा॥

दोहा–सुन्दर श्याम सरोदक, पुरुषोत्तम जन मीन॥
बिछुरतही अति तलफै, रहै राम आधीन॥ ५७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि गंगाशापनो नाम पंचदशोऽध्यायः॥ १९॥

जैमिनिरुवाच।

पुनि दक्षिणको चलेउ तुरंगा। सकलवीर लागे तेहि संगा॥
दुर्गदेश कीन्हों परवेशा। झारखंड विंध्याचल देशा॥
हरिहर रटत चले रणधीरा। भक्त शिरोमणि अर्जुन वीरा॥
जहँ जहँ कटक जाहि सामंता। विषम युद्ध तहँ होय अनंता॥
गिरि गह्वर कानन अँधियारा। तहँ नभपंथ होय उजियारा॥
योजन एक शिला सारंगा। उठेउ पंथ तेहि श्रमित तुरंगा॥
शिला मर्म काहू नाहिं जाना। छुवतहि हय वर भयउ पषाना॥
चकित भये सब करहिं करोरा। यज्ञ तुरँग जनु भयउ चितेरा॥
सबही आय पंथसन कह्यो। यज्ञतुरंग पत्थर हो रह्यो॥
चकित चित्त सब करहिं विचारा। निशि पंकज मुख सकल निहारा॥
अर्जुन कहेउ शिला सब धावहु। पाहनते वेगर करवावहु॥

बहुत जतन कीन्हे आकूता । सकल वीर भये श्रमित बहूता ॥
जस जल माँझ अनल नहिं जरई । पाहनसों अस्तर का करई ॥
चलै न तुरँग हृदय दुख भयऊ । हे विधि वाम चरित का करऊ ॥
शोच विचार बहुत करि देखा । हय वर देखत भयउ अलेखा ॥
ऊपर शिखर बैठि द्रुम छाहाँ । ऋषिआश्रम देखेउ वनमाहाँ ॥
ताल तमाल रसाल रु केरा । विटप विशाल नारियरफेरा ॥
सब तरुपर फल अमियसमाना । महा सरोदक परम निदाना ॥
तेहि वनमाहिं जीवकी रीती । व्याल नकुल सँग बहुतै प्रीती ॥
सुरभी वाघ एक सँग रहहीं । मूष मंजार केलि नित करहीं ॥
सिंह गयंद खेलि एक संगा । कोउ काहूकर करै न भंगा ॥
सौभन ऋषिय करैं तप ताहाँ । नवौ निद्धि उपजैं वन माहाँ ॥
पंथ वृषकेतु प्रद्युम्न कुमारा । यौवनाश्व सात्यकि धनु धारा ॥
ऋषिको अग्निहोत्र कर नेमा । प्रात जाहि समधै बन क्षेमा ॥
पाती पुष्प समिधके काजा । देखत वन महि फिरत विराजा ॥
अर्जुन उनको पूछत भयऊ । याहि आश्रम तपस्वी कितगयऊ ॥
परम ऋषीश्वर जगकर मीता । हम तुमसन मानहिं बड़ि प्रीता ॥
पंथ कहेउ तुम दया बढ़ावहु । गुरु अपने कर दरश करावहु ॥
ऋषिने लीन्हे संग लिवाई । मुनिकर दरश कीन्ह बन जाई ॥
चारि वेद वेदांत विचारहिं । निशिदिनहरिहर गिरा उचारहिं ॥
पूजा भेंट बहुत विधि लीन्हा । दंड प्रणाम भली विधि कीन्हा ॥

ऋषिरुवाच ।

बोले ऋषी कहो वर वीरा । इत आये कह वीर शरीरा ॥

अर्जुन उवाच ।

अर्जुन वेगि कही असि बाता । राय युधिष्ठिरके हम भ्राता ॥
अर्जुन नाम अहै हय संगा । पाहन भो अब यज्ञ तुरंगा ॥
भा कुरुक्षेत्र गोत्र सब मारा । तेहि कारण हयमेध पसारा ॥

राजा गहै तो करैं लराई । पाहन भयो न नैक बसाई ॥
सौभन ऋषि अर्जुन सन कहही । तुम सम मूरख जग नहिं अहही ॥
तुम तो कहत कृष्णके दासा । अश्वमेध कित करहु निरासा ॥
दरश कृष्णकर पावै कोई । कोटि यज्ञफल तत्क्षण होई ॥
पार्थ तुम्हेंको मारनहारा । करहिं गोविंद सृष्टि सँहारा ॥
ते तुमरे निशिदिन रहैं संगा । जन्म कोटिके पातक भंगा ॥
अर्जुन कहा सुनहु मुनि ज्ञाना । रोपेउ यज्ञ कृपा भगवाना ॥
अब ऋषि सुनहु होति बड़िलाजा । तजेउ यज्ञ अरु भयउ अकाजा ॥
तुम्हरी कृपा जु मिलहि तुरंगा । उपजाति भक्ति संतके संगा ॥
कहै ऋषिय सब झूँठी माया । पुत्र कलत्र पंथ द्रुम छाया ॥
एकौ है स्थिर नहिं संसारा । सब तजि कीजिये राम अधारा ॥
अश्वमेध चहैं कोटिन कीजै । तुल्य न राम नामके लीजै ॥
चरणकमल सेवहु भगवाना । अश्वमेधका करहु अयाना ॥
छाँडि कल्पतरु बिषवन रहहू । चिंतामणि तजि काँचहि गहहू ॥
जे नर देह श्रवै दशद्वारा । तौ पुनि तजै न राम सम्हारा ॥
कथा प्रभाव कहत सब मीला । काहु न लखी कृष्णकी लीला ॥
तुमहूँ कीन्ह भक्ति मन जानी । जो गोविंदकी आज्ञा मानी ॥
अपनो सबै बनाव बनायो । तुमसन अश्वमेध करवायो ॥
पंथ कहा सुन दीनदयाला । तुम्हरी कृपा मिलैं गोपाला ॥
शिला कवन कारण समझइये । औ केहि भाँति यज्ञहय पइये ॥

ऋषिरुवाच ।

सुनहु पंथ मैं कहौं बिचारी । यह है शिला विप्रकी नारी ॥
ऋषि उद्यालक बसते तहहीं । चंडी नाम घरनिघर जहहीं ॥
अतिकरकसा कलह जिय धरई । पतिकर कहा कबहुँ नहिं करई ॥
होम जाप कछु होन न पावै । भाँति भाँतिसे नारि सतावै ॥
बहुत उपाय ऋषिन करि देखा । स्वामी वचन कबहुँ नहिं लेखा ॥
जो भोजन माँगे अरगाई । फोरे धरती लेहि अड़ाई ॥

घर स्वामी तब बाहर जावै । बाहर स्वामी तौ घर आवै ॥
जो माँगे तो नाहिं कराई । देखि अतिथि घर छाँड़ि पराई ॥
ऋषि वनगये समुद्रके काजा । अग्निहोत्र कीबेकी लाजा ॥
सुनेउ ऋषिय कौंडिन्य प्रवीना । घरकी कलह भये हम क्षीना ॥
कह्यो ऋषिय जानि करहु कलेशा । लागे श्रवन करन उपदेशा ॥
पिता श्राद्ध तुम करन जो चहहू । उलटी बात सबै गह कहहू ॥
दै प्रबोध तब ऋषी सिधाये । उद्यालक मुनि आश्रम आये ॥
ऋषि बैठे आसन पर आई । चंडी तुरत दूरि उठि धाई ॥
तबही ऋषि कीन्हीं असबाधा । ये तौ हम नहिं करन शराधा ॥
सुनत बचन चंडी रिसिआनी । मैं शराध करिहौं मनजानी ॥
निबतेउ विप्र वेद परवानी । भोजन करत कीन्ह मनजानी ॥
जे बातैं ऋषि वर्जि पठाई । चण्डी दुगुन कीन्ह मनलाई ॥
एकौ बात न कीन्ही बाधा । उद्यालक सुख भयो अगाधा ॥
पित्तर तृपत भांडके काजा । ऋषिके हृदय भई अतिलाजा ॥
भोजन दान श्राद्ध वड़ भैया । उलटी बात विसरि ऋषिगैया ॥
कहेसि पिंड लै मेलहु गंगा । नारि करकसा भा चित भंगा ॥
स्वामी वचन सुनत नहिं भावा । पिंड चंड़िका धूरि अड़ावा ॥
धाय पिंड कर लीन्ह उठाई । दुखि तामस हिय गयो समाई ॥
दीन शाप तब भई पषाना । बहुत काल गये मर्म न जाना ॥
महाभक्त परशै तव अंगा । नारि तरै अरु मिलै तुरंगा ॥
सुनत अनन्द भयउ धनुधरना । चलेउ तुरत गहेउ ऋषि चरना ॥
आये पंथ कथा समुझाई । सन्त दरशते सब सिधि पाई ॥
छुवत पंथ सब जीव उधारे । पशु पक्षी सब भये सुखारे ॥
ऋषिपत्नी तव चढ़ी विमाना । पायो तुरँग सबन सुखमाना ॥
पति तौ तहाँ महासुख पावहिं । जेहि थल चरण सन्तके आवहिं ॥
अति हरि भक्त महाधनुधारी । हरि रटि विप्रघरनि निस्तारी ॥
सकल कटक मन भयो अनन्दा । वीरनके मेटिगे दुखद्वन्दा ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन चातक, रामस्वाति जलपान ॥
अवर न काहू लेखिये, तुव बल श्रीभगवान॥५८॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि शिलोद्धारणोनाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

चलेउ तुरँग पुनि बाजे बाजा। गये जहाँ हंसध्वज राजा॥
पुरी चंद्रिका निर्मल देशा। चारों वर्ण मनोहर वेशा॥
तात मात जस बालक पालै। तैसेहि नृपति प्रजा प्रतिपालै॥
होम जाप नित वेद पुराना। रामछाँडि जानहिं नाहिं आना॥
घर घर राजभवन सम देखा। नारि सबै पद्मिनिके वेखा॥
रोगी दुखी न देखिय लोगा। मानहु इंद्रासन सम भोगा॥
यज्ञ तुरँग तहँ पहुँचो जाई। दूतन नृपसन बात जनाई॥
ऐसो हय यहि देश न आवा। चंद्रबिंब अस चमर बनावा॥
कंचनपाट लिख्यो कछु भाला। अतिसुंदर गजमोतिन माला॥
नृपति निकट लै आव तुरंगा। बाचेउ पत्र कहेउ परसंगा॥
भूप युधिष्ठिर केर तुरंगा। अर्जुन वीर अहै यहि संगा॥
जेहि जूझनकर पौरुष होई। हय वर धर्म धरै वर सोई॥
राजा कहेउ कहाँ तुम पावा। देखिय हय जियकरिय वधावा॥
क्षत्रिय धर्म जीव इनि बोला। अर्जुनसन हम भिरब अडोला॥
जहँ अर्जुन तहँ रहै गोपाला। सदा करहिं जनकर प्रतिपाला॥
धर्मदृष्टि अरु भयउ बुढाई। देखब भरि नयनन यदुराई॥
इहि अवसर मंत्री बुलवावा। घर घर नगरवधाव बजावा॥
आज्ञा दीन्ह करहु रणसाजा। चढ़त अहै हंसध्वज राजा॥
सेनापतिसों कहि समझाई। दारुण गज रथ साजहु जाई॥
डोंडी पिटी नगर किय साजा। युद्ध अनंद सबै मन छाजा॥
धनु पायक बहु चले अनंता। सहसन चले शूर सामंता॥
दश दशरथ एकवीर जुझारा। अस्सी सहस लक्ष असवारा॥
रामभक्त अरु नितके दाता। परदाराकी कहत न बाता॥

हरि रसना सबसों प्रिय बोलहिं । युद्ध करत रण कबहुँ न डोलहिं ॥
सकल सुखद सुंदर सुखपाला । सौंपहिं धनु पुनि बचन रसाला ॥
चंद्रशयन चंद्रोदय दाता । चंद्रकेतु राजा कर भ्राता ॥
सुदर परमभक्त रणधीरा । नृपके पांच पुत्र बरबीरा ॥
सुवनरु सूर नरेश्वर जाला । सुरथ सुधन्वा वे रण काला ॥
सुत कलत्र सब रणपति योधा । चढ़े क्रोध संग्राम विरोधा ॥
नगर दुंदुभी नाद करावा । जहँ अर्जुन तहँ कटक चलावा ॥
तेहि दिन राजा विप्र जिमाये । सकल वीर रणमाहिं पठाये ॥
निकसी सैन महाबलवंता । अगणित क्षौहिणि जानि न अंता ॥
आई सैन महा बलवीरा । जाके देखत रहै न धीरा ॥
दुहूँ अनीसन भयउ सभेरा । लोग तहाँ सबलहि करि हेरा ॥
वीरन सिंहनाद रण कियऊ । दुहुँदिशि युद्ध भयानक भयऊ ॥
गज तुरंग सब होहिं मशाना । सहे न जायँ पंथके बाना ॥
वृषभध्वजकर विषम करेरा । सब योधन रणते मुख फेरा ॥
कोउ डरात करते सँधाना । हरिको अंत न काहू जाना ॥
जौन वीर संग्रामहि जाई । तिनकहँ सब सुंदरी रिसाई ॥
जोहिंके निकट कृष्णकर चरना । धन्य भाग्य पाइय जो मरना ॥
चाढ़ि तुरंग रण सहौ न भीरा । कौतिक दिवस जियहु वर वीरा ॥

दोहा-साधुसंग दारिद्र भल, नहिं असाधु सँगराज ॥
पुरुषोत्तम हरिचरणरत, मरिये तौ बड़ काज ॥५९॥

चाढि धवलागृह सुंदरि जोवहिं । बहुरहु बीर बहुत रण सोवहिं ॥
अनतहु ताजि तनु रहै न धीरा । स्वामीकाज सहौं रणभीरा ॥
होय सुयश भेंटिय हरिचरना । धाये वीर जानि जिय मरना ॥
भये विमुख रण सबै लजाहीं । बहुरहिं ना रण अधिक डराहीं ॥
विचली सैन नगरमहँ आई । राजासन सब बात जनाई ॥
रहेउ न जाय बूझि अनुमाना । श्रावणघन सम वर्षैं बाना ॥
मानहु प्रलयकाल नियराना । सहे न जायँ पंथके बाना ॥

हंसध्वज बोले अति कोपी । मारौं पंथहि बाण न रोपी ॥
बजे बाजने हने निसाना । वीरखेत नृप कीन्ह पयाना ॥
राजा सबकहँ आज्ञा करई । नगर माँझ कोउ वीर न रहई ॥
राजा मंत्री मंत्र दृढ़ावा । रणमहँ तेल कड़ाह चढ़ावा ॥
जे रण माँगे हृदय डराहीं । मेलहु तिनहिं भस्म है जाहीं ॥
भ्रात मित्र सुत सेवक होई । जारौं बिरमि रहै जो कोई ॥
शंखलिखितको भा उपचारा । भरि कराह तेहि तेल पजारा ॥
दुर्गम आज्ञा नगर जनावा । निकसि वीर सब बाहर आवा ॥
जहँ उतरे हंसध्वज राजा । छोटे बड़े चले करि साजा ॥
पुत्र सुधन्वा जो रणधीरा । मातहि मिलन चलेउ वरवीरा ॥
तेहिकर चरण कही असि बाता । आनहु जीति धनंजय माता ॥
जननी कहेउ जीति घर आवहु । पंथ कृष्णकहँ हमहिं दिखावहु ॥
रैनि दिवस हरि हरि उच्चरना । धन्य भाग्य भेंटिय हरिचरना ॥
माता सुत कहँ दीन्ह अशीशा । तुम सहाय देखिय जगदीशा ॥
सुरभी बालवच्छ जनु धावै । तैसहि दास कृष्णको भावै ॥
जहाँ पंथ तहँ यादवराई । करहु युद्ध जेहि होय बड़ाई ॥
पुत्र सुधन्वा पुनि अस बोला । तुम पुण्यन रण महा अडोला ॥
उदर तुम्हारे जन्मेउ आई । कृष्ण पंथ सन जूझहुँ जाई ॥
जो रण तजि निजगृह भजि जाऊँ । रामविमुख सद्गति नहिं पाऊँ ॥
मातहि चले प्रदक्षिण लाई । तेहि अवसर भगिनी तहँ आई ॥
बारबार वर कुसुम चढावै । कंठमाल सुंदरि पहरावै ॥
जहाँ पंथ तहँ हैं यदुराई । करहु युद्ध जेहि होय बड़ाई ॥
कहै कुँवर सुन भगिनी मोरी । नहिं रण हँसी करैहौं तोरी ॥
वचन तुम्हार करौं परमाना । पंथै जीतौं कै देउँ प्राना ॥

दोहा—पुरुषोत्तम जन वर्णही, दास सुधन्वा भाउ ॥
पतिव्रता जहँ वसति रहि, तहँ अब धारेउ पाउ ॥६०॥

हंसगामिनी हिमकर बरना । पुष्प अंजली टेकेसि चरना ॥
मृगनयनी सोहै आभरना । कोकिल कंठ सुकोमल चरना ॥
पाटंबर सब कुसुम डसावा । जहँ तेहि सेज कुँवर तहँ आवा ॥
पोते जहाँ अर्गजा चीता । तहाँ रहै आरती समीता ॥
सानि कपूर तूल किय बाती । रत्नथार बरु देइ मन थाती ॥
चर्चहि चंदन करत बतासा । पक्षिचकोर चंद्र परकासा ॥
कहै प्रभावति बचन रसाला । देखो मुख जेहि रटहु गोपाला ॥
मैं ऋतुवंती करि सुस्नाना । गोद पसारिलेहुँ सुत दाना ॥
मैं पतिव्रता अनत नहिं हेरा । देखउँ बदन नाहिं केहु केरा ॥
निशिवासर संयमसों रहौं । ऋतुके समय तुम्हें पति चहौं ॥
सुनिके कीजै वचन प्रमाना । संतति हेतु देहु रति दाना ॥
बोलो कुँवर प्रभावति सुनहू । तुम आपन मनमें अस गुनहू ॥
अवसर कवन जु करहु शृँगारा । आन बात मैं आन पसारा ॥
पंथ कृष्ण दरशन संग्रामा । होय दोष कीन्हें विश्रामा ॥
कहत प्रभावति वचन सुनाई । संतति होय धरौ जिय लाई ॥
कहै कुँवर हम फिरि पुनि आवा । पंथ कृष्णकर दरशन पावा ॥
देखे विना कृष्ण भगवंता । कैसे ऐहौ तुम प्रिय कंता ॥
कहे कुमर जो होय न आवन । माँगहु वृथा मोह कर जावन ॥
कहै कुँवरि चातक गृहिरावै । स्वाति जाय तो कवन जियावै ॥
सागरसीप रहै नित प्यासा । पुरवै विधि स्वाती जल आसा ॥
पतिव्रता पुनि केहि तनु हेरै । प्राणनाथ जब तेहि मुख फेरै ॥
सृष्टि करत तेहि हँसै न कोई । संतति शुक नारद के होई ॥
रहिबो तो रणते मुख फेरो । हँसे लोग परदारा हेरो ॥
कहै सुधन्वा सुनि प्रिय नारी । बजैं दुंदुभी होय पुकारी ॥
राजा तेल कराह प्रजारा । पाछे रहै होय जरिछारा ॥

दोहा—एक सुंदरि अरु विमुखरण, दोनों नीक न होय ॥
कुँवर जहाँ रण महि जुरै, तहाँ रहै मुख जोय ॥ ६१ ॥

कहै कुवँरि जनि करहु निदाना। ऋतुकर भंग न सुनेउ पुराना॥
पतिव्रताहि जो ऋतु तजि जाई। तेहि मारी जनु कपिला गाई॥
मोसन स्वामि कहौ सतिभाऊ। तुमसन पूछौं धर्मक न्याऊ॥
हरिदिन श्राद्ध करै जो कोई। तेहि दिन नारि ऋतुमती होई॥
हो व्रतभंग पापके फंदा। विनु भोजन नहिं पित्रअनंदा॥
कुँवर सुधन्वा कहै विचारा। तीनहुँ धर्म करै अनुसारा॥
सुनहु प्रिये निर्णय चितलाई। एकादशी तजी नहिं जाई॥
जौन पुरुषको धर्मकि वाधा। प्राण जाहिं परि धर्म सुसाधा॥
अर्द्धनिशा लगि ऋतु नहिं वाधा। आनवार लै करिये श्राधा॥
कहसि कुँवर यह ऋतुनखियाहा। दै ऋतु विजय करौ मम नाहा॥
एक सुंदरि अरु वचन रसाला। गाहि हिय मेली मोहनजाला॥
कंठ भुजा गहि रहीं सयानी। मानहु द्रुमवेली लपटानी॥
चित्रसारि जहँ सखिन वनावा। करगहि कुँवर सेज पौढ़ावा॥
कवच कील काढ़ी महि धरी। कुमरि सेज रति क्रीड़ा करी॥
सुखसंतोष भयो आधाना। विधना दीन्हेउ संतति दाना॥
शशिवदनी संतोषित कीन्हा। मज्जन करै कुमर तब लीन्हा॥
मृगनयनी पुनि करि सुस्नाना। पायस भोजन दीन्हउ आना॥
रथ चाढ़ि कुमर चलेउ रणसाजा। जे पछमानि तेहि शोधहि राजा॥
सेनापति नृप बूझि बुलाई। केतिक सेन कहौ समुझाई॥

मंत्र्युवाच।

चारों वर्ण पौणि छत्तीसा। सब कोउ आव सुनहु क्षितिईशा॥
पुत्र तुम्हारे द्वै रणधीरा। आयउ नहीं सुधन्वा वीरा॥
सुनत दुंदुभी सब कोउ आवा। कुमर हेतु नृप दूत पठावा॥
आज्ञाभंग विमुख रण होई। पुत्र हमार सुधन्वा सोई॥
पंथ गोविंद दरश सुनि भागा। पाछे पुत्र कर्ण कहँ लागा॥
कर मुद्गल गहि दूत पठावा। केश गहे धरि पैदल लावा॥
हे प्रभु विमुख न्याव नहिं पारा। आनहु वेगि जारि करौ क्षारा॥

आये दूत जहाँ चित्रसारी । कीन्हे घात देखि बर नारी ॥
दुख चिंता जिय कुमरि रिसानी । चोट सही नृप आज्ञा मानी ॥
प्रभावती कहँ भा संतोषा । चले कुमर उठि रण महि चोषा ॥
राजा दारुण दूत पठावा । योजन तीनि पयादेहि लावा ॥
कीन्ह प्रणाम लाज जिय माना । देखत राजा बहुत रिसाना ॥
राजा कहेउ कुपुत्र हमारा । मेटेउ वचन न कीन्ह सँभारा ॥
सुनि राजा चरणन तर आयउ । मैं मंदिर सुंदरि बिरमायउ ॥
कह नृप वैरिउ वंश हमारा । यहि अवसर कहा कीन्ह पसारा ॥
भामिनि कहे रहे गृह जाई । त्यागेउ संयुग लाज गँवाई ॥
बाल विचार धर्म धिग तोरा । तजे कृष्ण दरशन पन मोरा ॥
शंखलिखितसन कह पठवावा । लै मेलहु जहँ तेल चढ़ावा ॥
शंखलिखित जहँ रहे प्रधाना । दूतन कुमर तुरत तहँ आना ॥
राउ कहेउ जनि न्याउ विचारहु । आज्ञा मेटि रहेउ एहि जारहु ॥

दोहा–वचन रहै पुरुषोत्तम, अंतर है नहिं देह ॥
वचन लागि हंसध्वज, छाँड़ेउ पुत्र सनेह ॥ ६२ ॥

शंख लिखित यहि कह पठवाई । दूतहु नृप कहँ लेहु बुलाई ॥
दूतन जाय संदेश सुनावा । जहाँ कड़ाह तुरत नृप आवा ॥
शंख लिखित दोनहुँ अस भाखा । धनधन राउ सुकृत तुम राखा ॥
कश्यप ऋषिय यहै मनमाना । सत्य लागि हरिचंद्र विकाना ॥
राजा बचन उनहुँ भल मानी । रोहिताश्व सुत शैब्या रानी ॥
सत्य रह्यो भइ बहुत बड़ाई । सद्गति पुत्र करै नहिं पाई ॥
वचन लागि दशरथ प्रण कीन्हा । आपन मरि रामहिं वन दीन्हा ॥
भये विमुख रण कहा न मानहिं । तिनकहँ नृपति मृतकसम जानहिं ॥
राखिये अस नहिं अवर विचारहु । ये तो वेगि तेलमहँ जारहु ॥
राजा कहै सुनो तुम बाता । जो बूझिय सो करहु लिखाता ॥
सुमति कहा सुन राजकुमारा । तुमही लागि कड़ाह प्रजारा ॥
सत्य सुकृत अपने जिय जानहु । परहु कराह न विलम लगावहु ॥

सुधन्वोवाच ।

हो मन मगन सुधन्वा कहही । नृपके वचन न हम परिहरहीं ॥
ऋषि जमदग्नि कहा सुत कीन्हा । परशुराम जननी शिर लीन्हा ॥
पिता वचन रघुपति परकासा । छोड़ि राज्य कीन्हेउ वनवासा ॥
पुत्र वचन अस सुना पुराना । तात वचन सुनि करै न आना ॥
तुरत सुमति सुस्नान करावा । दिव्य वसन कुमरहि पहरावा ॥
तुलसीकी पहरी गर माला । सुमिरेउ रामनाम गोपाला ॥
प्रज्वलित तेल भ्रमै चहुँ फेरा । आजु जन्मकर भयउ निवेरा ॥

जैमिनिरुवाच ।

अब सुनिये जन्मेजय राजा । परत कराह भयो अस साजा ॥
चहुँदिशि फैल गयो अति सोगा । त्राहि त्राहि गुहरावैं लोगा ॥
राम कहत नर दशदिशि धावहिं । हे विधि कुमर जरन नहिं पावहिं॥
हे हरि ज्यों प्रह्लाद उबारा । राखि भक्त हिरनाकुश मारा ॥
ध्रुवको दियो अनूपम ठाँवा । कीरति जासु सकल जग गावा ॥
पशु पक्षी गोकुलके वासी । सब कीन्हे वैकुंठ निवासी ॥
धर हरिके कबहूँ नहिं चाला । तात वचन नीके प्रतिपाला ॥
कुमर मृत्यु सुनि दुख भा आजू । करन न पावा रणमहँ साजू ॥
सहे न रण अर्जुनके वाना । पायउ नाहिं दरश भगवाना ॥
हरिकर जन अरु महाजुझारा । जरहि कहा जस चोर कुम्हारा ॥
राम नाम सब करहिं प्रधाना । राजा नीक कीन्ह नहिं ज्ञाना ॥
सब करजोरि कृष्णसन भाखै । तुम ताजि अन्य कुमरको राखै ॥
भीषम द्रोण न बोले जहँवा । राखी द्रुपदसुता प्रभु तहँवा ॥
सुस्तुति कीन्ह कुमर मन जानी । रसना हरिकर सुयश बखानी ॥
जैमिनि कहै सु कैसे दहई । रक्षक जासु नन्दसुत अहई ॥
परत कराह कुँवर सम तूला । मानहु वनमें पंकज फूला ॥
कुंडल मुकुट तेलमहँ देखा । मानो चंद्रबिंबकी रेखा ॥
लोग रुदन करि धरणी परे । भयउ अलेख कुमर पर जरे ॥

कृष्ण चरण जहँ पंथ जुझारा। मरतेउ जूझि कुमर को जारा॥
निकसेउ कुमर मनौ अर्विदा। उग्र होय निकस्यो जिमि चंदा॥
सबै कटकमें भयो हुलासा। शंख लिखित मन भयो उदासा॥
औषधि मूरि कुमर कछु जाना। कीधौं देखौ तेल जुड़ाना॥
कै काहू पाखंड बनावा। पंकजफूल निकसि जनु आवा॥
शंख लिखित मन बुधि यह आई। मेलेउ फल नरियल कर जाई॥
उछरयो फल तब लाग लिलाटा। शंख लिखित कर फूट कपाटा॥
परकर मंद करै जो कोई। ताकर भला कबहुँ नहिं होई॥
दोहा–जाके मन त्रिभुवनपति, ताकर युग युग लीक॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, रहे कुमर वर टीक॥ ६३॥
इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि सुधन्वासत्यकथनं नाम सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

जैमिनिरुवाच।

पूछे जन्मेजय बड़ राजा। हे मुनि बहुरि भयो कस साजा॥
निकसि कराह कुमर का कियऊ। कवन प्रकार समरमें गयऊ॥
बोले ऋषि नृप सुनहु अकूता। निकसि तेलते लरेउ बहूता॥
हरि हरि करत कुमर रण आवा। शंख लिखित मनमें पछितावा॥
जबही गहे कुमरने चरना। शंख लिखित तब याचै मरना॥
हम पापिन नहिं कीन्ह विचारा। धर्म शरीर कराही जारा॥
विप्ररूप हम हैं चंडारा। सो किमि जरै जो राम उबारा॥
धन्य सुधन्वा वीर सुगाढ़ा। मानो कंचन कासिकै काढ़ा॥
कहै कुमर मैं दास तुम्हारा। अपने मन जानि करहु विचारा॥
शंख लिखित तुम जानि दुख मानहु। मोको तुम अपनो जन जानहु॥
तुम तो नीक कीन्ह मन मोरा। अब काहूकर नाहिं निहोरा॥
शंख लिखित भेटेउ उर लाई। आनेउ राजा निकट बुलाई॥
धाय सुधन्वा पकरे पाऊ। गहि भुज लिय लगाय उर राऊ॥
मिलत वीर तनु भयो पुनीता। निरखतही सबकर दुख बीता॥
चूमि वदन कीन्ही मनुहारी। परिजन सकल मिले सुख भारी॥

अर्जुन कृष्ण अहैं एक संगा। कीन्ह युद्ध नृप गहेउ तुरंगा ॥
शंख लिखित राजा सन कहे। चरण सुधन्वा नृपके गहे ॥
नृपति पुत्रको अंकम लावा। मानो मृतक प्राण फिरि आवा ॥
ओको अस बूझियै न भाई। जारेउ पुत्रहि तेल चढ़ाई ॥
अपने सत्य बचे तुम बीरा। कृष्णकृपा तुम पुण्यशरीरा ॥
कुमर सुधन्वा नृपसन भाखा। तुम्हरे पुण्य आजु हम राखा ॥
सुतको धर्म परम शुचि अहई। तात वचनको पाले रहई ॥
तुम दुख मानहु जिय जनि राजा। आज्ञा देहु करौं रण साजा ॥
शंखलिखित कह जनि रिसियाहू। जिय अवगुण लावहु जनि काहू ॥
इन तौ राखा वचन तुम्हारा। सत्य रहा अरु सुयश हमारा ॥
आज्ञा भंग करै जो कोई। जियते राज वधै जनु सोई ॥
करहु कृपा दै मोहित मोरा। रणमहँ नाम जगावहुँ तोरा ॥
हंसध्वज करिकै संतोषा। रथ सारथी आनि तब चोषा ॥

दोहा–रथ चढ़ि वीर जाहु रण, राजा बीरा दीन्ह ॥
पुरुषोत्तम तब कुमरने, शिर चढ़ाय निज लीन्ह ॥ ६४ ॥

इहि अंतर रथ चढ़े कुमारा। रत्नजटित कंचनके हारा ॥
ऊंची ध्वज अरु चक्र सुहावा। मानो उतरि स्वर्गते आवा ॥
चंदन चर्चित कुमकुम गाता। कंठ चमर सोहत शुभ जाता ॥
बाजत किंकिणिजाल अकूता। चढ़े कुमर गहि अस्त्र बहूता ॥
महारथिन उपजेउ अति क्रोधा। वीर अजीत सबै रण योधा ॥
अति सुगंध तनु सबै चढ़ावा। सोब जानि जेहि देखन पावा ॥
तुरँग गयंद मर्म नहिं जाना। जिनकी कृपा न देखिय भाना ॥
रथकर चक्र विषम घहराई। ज्यों घन सिंधु सहे नहिं जाई ॥
एकहि एक सुनै नहिं बाता। चारों दिशि जनु वज्रअघाता ॥
दुहूँ अनीसन भयउ सभेरा। सुरथ सुधन्वा कुमर वरेरा ॥
चंद्रकेतु वीरध्वज वीरा। बजहिं निसान चढ़े रणधीरा ॥
अवरौ सबै होत जे राजा। चढ़े कुमर रण बाजन बाजा ॥

अष्टधातु बाजे बजवावा । तमकाहिं मारू सुनत सुहावा ॥
बाजन बाजहिं गोमुखभेरी । ढोल बजावत ताल मंजेरी ॥
तेते शिखिरिणि बाजन बाजहिं । तरणिबिंब जनु छत्र विराजहिं ॥
कालरूप सब करहिं केरा । दुहूँ अनीसन भयो सभेरा ॥
मानो वज्रशिला घहराई । इहिविधि दुवौ अनी चलि आई ॥
इहि अन्तर अर्जुन फिरि बोला । कवन कुमर रण अहै अडोला ॥
यौवनाश्व नृप सहित तुरंगा । चढ़े कुमार रिपुन दल भंगा ॥
सात्यक कृतवर्मा रणधीरा । शल्यदैत्य नीलध्वज बीरा ॥
प्रद्युमन कुमर तुरत उठि धाये । वृषभध्वज सन्मुख ह्वै आये ॥
दोहा-सबके चरण टेकि करि, आपुन अगमन होइ ॥
पुरुषोत्तम वृषकेतु सम, उपमा वरि न कोइ ॥ ६९ ॥
जैसे कृष्णभक्ति परमाना । अंत्यजकी शंका नहिं माना ॥
कर्ण पुत्र तस रणहि अडोला । हंसध्वजको चलेउ न डोला ॥
रथ सारथी ध्वजा बनवावा । तेहि दिन वीर सुधन्वा आवा ॥
यह तौ रथ न पंथकर होई । वृषभध्वज आवा रण सोई ॥
रथ तजि उभय रणहि चढ़ गयऊ। जनु रवि बिंब दुवौ रण बढ़ऊ ॥
कुमर सुधन्वा पूँछी बाता । को तुम कुमर तातको माता ॥

वृषकेतुरुवाच ।

कह वृषकेतु राम आधारा । ऋषि कश्यपते वंश हमारा ॥
दिनमणिपिता अहै हम हेतू । कर्णपुत्र हम हैं वृषकेतू ॥

सुधन्वोवाच ।

मधुच्छन्द सुनिवर रणधीरा । हंसध्वज नन्दन वरवीरा ॥
नाम सुधन्वा हरिहर कहई । निशि दिन हम संग्रामहि चहई ॥
तिमिर जाय जिमि रविहि प्रकाशा। देखत हमहि होय रिपु नाशा ॥
देखहु अब पुरुषारथ मोरा । रणमहँ हतौं गर्व सब तोरा ॥
पुनि वृषभध्वज बोलेउ वैना । तुमहिं मारि मारौं सब सैना ॥
जाकी रुचि पूजा अब मेरी । जब देखब अगमन रथ तोरी ॥

उपजा क्रोध कीन्ह संधाना। वर्षण लागे रणमहँ बाना॥
सिंहनाद दोनों शर संधा। खसहि तुरो जनु कंध कबंधा॥
बाणहि बाण भयो संभेरा। दिनमणि मंडित देखिये बेरा॥
तब वृषकेतु महापरचंडा। कीन्ह सुधन्वा रथ शतखंडा॥
ध्वजा छत्र रथ सारथि पीरा। है गो विरथ सुधन्वा वीरा॥
पैदल मारु मारु कर धावा। तब सारथि रथ आन चढ़ावा॥
रथ चढ़ि बहुरि कीन्ह रणसाजा। कोप सुधन्वा सब दल राजा॥
मारयो वृषकेतु हि शर खरो। रथ सारथी ध्वजा विनु करो॥
तब वृषकेतु धनुष कर लीन्हा। तूल अनल सम पर दल कीन्हा॥
कुमर सुधन्वा शर संधाना। काटेउ तुरत शत्रु धनु बाना॥
लगेउ बाण उरभा विकरारा। कछु मूर्च्छित कछु रहेउ सँभारा॥
कुमर आन रथ चढ़न न पाये। तब लागि छेकि दशौंदिशि आये॥
विरथ भयो जवनी दिशि धावै। एको वीर निकट नहिं आवै॥
धाये नृपति कटक चहुँ फेरा। वर्षे सब आयुध एक बेरा॥
तोमर शक्ति भिंडिपालासा। बहु मुद्गल कुंतल अरु पासा॥
परशु बाँक वरकेतु करारा। खड्ग त्रिशूल विषम जे धारा॥
वर्षत अस्त्र शंख ना धरई। मानहु कुसुम माल शिर परई॥
वीरसिंह रण अहै अडोला। रसना राम अखंडित बोला॥
यहि अन्तर सारथि भल धावा। कर्ण पुत्रके आगे लावा॥
चढ़ि रथ बहुरि कीन्ह संधाना। जनु निहारते निकसेउ भाना॥
हंसध्वज नृपसहित डराई। ये अति वीर जीति नहिं जाई॥
विरथहु भये विना धनु बाना। तदपि न कोउ निकट नियराना॥

दोहा–विरथ वीर धनु बाण बिनु, कोउ नियरे नहिं जाय॥
पुरुषोत्तमको जानिहै, बहुरि चढ़े रथ आय॥ ८८॥

तब वृषकेतु बहुरि शर लीन्हा। भयउ भयावन जाय न चीन्हा॥
हंसध्वजकी सैन विदारी। बाण पंच सुधन्वा मारी॥
निष्फल भयउ घाउ नहिं लागा। कुमर सुधन्वा तेहि क्षण जागा॥

पुनि मारे वृषकेतु हि बाना । सारथि रथ पुनि कीन्ह मशाना ॥
बहुतक युद्ध भयो तेहि काला । देखत विस्मय सबै भुवाला ॥
कर्णपुत्र पुनि पाछे मेला । धाये प्रदुमन कुमर अकेला ॥
ठाढ़ न हो अब कहासि प्रचारी । मारे पंच बाण सँभारी ॥
तुमसन यज्ञ तुरंग छुडाऊँ । मारि शरन यमपंथ पठाऊँ ॥
बहुरि सुधन्वा सन्मुख भयऊ । काटि बाण निष्फल सब गयऊ ॥
प्रदुमन कुमर बाण फटकारा । एक एक नहिं रहेउ सँभारा ॥
भो अति युद्ध विचित्र अरूझी । कुँवर सुधन्वा मनमहँ बूझी ॥
ये तो आय गोविंद कुमारा । सबल वीर सब विषम जुझारा ॥
दारुण युद्ध होन फिरि लागी । दोनों कुमर प्रलय जस आगी ॥
क्रोधित ह्वै तब धाव सुधन्वा । विनु धनु बाण कीन प्रदुमुन्वा ॥
धनुष काटि जब चलेउ कुमारा । प्रदुमन महारथी पुनि मारा ॥
चढेउ आनरथ बहुरि रिसाई । मारब युद्ध जियत नहिं जाई ॥
विषम बाण करि बहुरे सम्हारा । रथ सारथि प्रदुमन कर मारा ॥
मूर्च्छित भयउ कुमर प्रदुमन्या । बहुरि आन रथ चढ़ेउ सुधन्या ॥
याहि अंतर कृतवर्मा धावा । आपनि सैन कुमर तब लावा ॥
प्रदुमन कह सुस्तो बैसाई । मेलेउ दश शर रणमहँ जाई ॥
काटे बाण हते सब वीरा । उरमें गई सुधन्वा पीरा ॥
उठे सुधन्वा रणहि प्रचंडा । रथ सारथी कीन शतखंडा ॥
कृतवर्मा रथ चढ़न न पावा । यहि अंतर अनुशल्य जु धावा ॥
मारेसि विरथ कीन्ह रणधीरा । मूर्च्छित भयउ सुधन्वा वीरा ॥
रणमाँहि दानव गर्जन लागा । विलम न भयउ सुधन्वा जागा ॥
कालचक्र जनु रथ विकरारा । मारेउ दैत्य धरणिपर डारा ॥
हाहाकार होत रण माहाँ । कंध कबंध परे जहँ ताहाँ ॥
अर्जुन अर्जुन सबै कहाई । देखो, रक्त नदी घहराई ॥
कंक मांस भयो उदर अहारा । गज तुरंग शिर ऊँच करारा ॥
उदित पारि कछु जान न जाई । भूत वेताल रहे तहँ छाई ॥

गावहि योगिनि मंगला चारा । भोजन जेमहिं गिद्ध सियारा ॥
काक परोसहिं निज निज भाँती । भेष भयावन नाना जाती ॥
नर गज अश्व बराबरि पेलहिं । कबहुँ कबहुँ चौगानहि खेलहिं ॥
दोहा–कहै कवि चरित रामकर, काहू परत न बूझ ॥
व्यासदेवपै जानही, तेहि अवसर कर जूझ ॥६७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि सुधन्वायुद्धवर्णनंनाम अष्टादशोऽध्यायः १८॥

रणमाहिं मूर्च्छित कोऊ जागा । गर्जन बहुरि सुधन्वा लागा ॥
जहाँ पंथ तहँ आयउ वीरा । आये सात्यकि अति रणधीरा ॥
विषम बाण सारथि उर मारा । रथ समेत धरणी पर डारा ॥
ध्वजा सारथी रथ शतखंडा । भयउ सुधन्वा वीर प्रचंडा ॥
पैदर विषम गदा लै धावा । सात्यकिको रथ मारि खसावा ॥
दोनों चढ़े बहुरि रथ आना । गज सारथि रथ कीन्ह मशाना ॥
देखिय रविरथ मंडल छाहा । चलव बहुरि तरु रुधिर प्रवाहा ॥
देखहिं दल दोनों समतूला । जनु वसंत टेसू वन फूला ॥
वीर सुधन्वा शक्ति सँभारी । सात्यकि सहित बहुरि रथ मारी ॥
परे मूर्च्छि सात्यकि अरु सूता । पुनि रण बहुत भयउ आकूता ॥
सात्यकि धरणी खसै न पाये । हाय हाय करि अर्जुन धाये ॥
सात्यकिको तब लीन्ह छुड़ाई । मारहु कुमरहि जियत न जाई ॥
अर्जुन कहै ठाढ़ हो वीरा । तैं रण सही आज बड़ि पीरा ॥
मूर्च्छित तैं योधा सब कीन्हा । जनु इंद्रादिक शंबर लीन्हा ॥
तब कुरुक्षेत्र भयउ अनसूझा । कालशंख जेहिसों हम जूझा ॥
द्रोण कर्ण भीषमसे जहँवा । युद्ध न भयो विषम अस तहँवा ॥

सुधन्वोवाच ।

सुनहु पंथ अस कहै कुमारा । तहँ प्रभु है सारथी तुम्हारा ॥
तब जीतेउ दुर्योधन राजा । जब गोविंद कीन्ह रथ साजा ॥
अर्जुन जिय विचारि तुम देखहु । हरि जीते आपन करि लेखहु ॥

बहुरि सुधन्वा बोले बैना। तुमहि मारि मारौं सब सैना॥
लेहौं रंग सहित सब साजा। कराहिं यज्ञ हंसध्वज राजा॥
तुम तो आजु करौ संग्रामा। देखहिं सकल सुरे. सुधामा॥
कृष्ण सहाय करैं तुव जबहूँ। तजि संग्राम न भाजौं तबहूँ॥

जैमिनिरुवाच।

जैमिनि कहै सुनो तुम राजा। क्रोधित उभय बहुरि रण साजा॥
रत्नकोंक सब बाण सँभारा। अर्जुनवीर सुधन्वा मारा॥
बहुरि सुधन्वा उठेउ रिसाना। तिलसम किये पंथके बाना॥
दशशर विषम कुमर तब लीन्हा। दारुण घाउ पंथ शिर कीन्हा॥
पंथ बाण तब कीन्ह मशाना। क्रोधित गहेउ अनल संधाना॥
रथ सारथी चले तब भागी। सैन सबै जारन पुनि लागी॥
बर्षन लागि अनल शरधारा। अर्जुन क्रोध सहै को पारा॥
बाणवृष्टि संग्राम दुहेला। कुमर सुधन्वा रहेउ अकेला॥

दोहा-अग्निबाण अति दारुण, सुरपुर सबै डरान॥
पुरुषोत्तम रण देखत, रहे खैंचि रथ भान॥ ६८॥

जरत अग्नि कोउ बाँध न धीरा। राखा शरहि सुधन्वा वीरा॥
सुनतै क्रोध कुमर कर नाना। दारुण जलधि बाण सन्धाना॥
अद्भुत वृष्टि होन तब लागी। रणमहिं जरत वितानतु आगी॥
अति दारुण दामिनि दमकाई। वर्षै शिला सही नहिं जाई॥
परेउ तुषार प्रचंड बहूता। पंथ सैन दल भयउ अकूता॥
बोलेउ चातक मोर प्रचारा। वासर साँझ भयउ अँधियारा॥
बाजन बाजहिं सुनहि निसाना। भीजे पंख चलहिं नाहिं बाना॥
रथ सारथी बहुत तहँ बहे। शोभाहीन भये सब रहे॥
वर्षै मेघ सुधन्वा तहँवा। पंथसैन सब बहिरहि जहँवा॥
रैनि परस्पर जाय न चीन्हा। अर्जुन बाण पवनवर लीन्हा॥
अतिहि प्रचंड वात अनुसरी। कुमरध्वजा धरणी खसि परी॥
मेघघटा दशदिशि गइ फूटी। पवन अघात चक्र गये टूटी॥

रथ अति भ्रमै रहै नाहिं धीरा । चकृत भयउ सुधन्वा वीरा ॥
इहिअंतर सुमिरे भगवाना । अर्जुनकर काटेउ धनु बाना ॥
बिनु धनुबाण धनंजय भयऊ । सारथि खसि धरणी मह गयउ ॥
वीर सुधन्वा महाप्रचंडा । अर्जुन बाण कीन्ह शतखंडा ॥
कीन्ह सुधन्वा युद्ध अपारा । त्राहि त्राहि करि पंथ पुकारा ॥
सुमिरे कृष्णचरण अरविन्दा । मोर सारथी तुमहिं गोविन्दा ॥
तुम प्रभु कीन्ह यज्ञकर साजा । हमैं कहा तुमही कहँ लाजा ॥
व्यापेउ दुःख धनंजय केरा । भक्तवच्छल आये तेहि बेरा ॥
कहै सुधन्वा निशिदिन ध्याऊं । इहि अवसर दर्शन जो पाऊं ॥
दुहूं संतकर राखेउ माना । चरित अगम आये भगवाना ॥
अर्जुन चरण टेकि कर लीन्हा । मनसा कुमर वंदना कीन्हा ॥
कहै सुधन्वा मो हित कारन । आये कृष्ण भले निस्तारन ॥
युग युग युद्ध करत अति बीते । बिना गोविंद कवन मोहि जीते ॥
अंतदिवस आये भुजचारी । भई प्रतिज्ञा सफल हमारी ॥
सुमिरि कृष्ण रणमाहिं अडोला । क्रोधित बहुरि पंथ सन बोला ॥
जब सारथि हरि भये तुम्हारा । पौरुष देखहु पंथ हमारा ॥
तुमको रन पछमन मैं करऊं । शिर हरिके चरणन तर धरऊं ॥
पुनि अर्जुन बोले रिसिआई । मारौं आजु गोविंद दुहाई ॥
कुमर कहै मैं परौं अघोरा । जो निष्फल शर करौं न तोरा ॥

दोहा—उभय वीर रणधीर पुनि, दोनौं हरिकर दास ॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, रामचरणकी आस ॥ ६९ ॥

अर्जुन रथ बैठे भगवाना । बहुरण दोउ कीन्ह संधाना ॥
पंथ बाणसे दारुण मेला । बाणहि बाण कुमर सब ठेला ॥
हंसकेतु नंदन रण मंथा । मारेसि कृष्ण सहित रणपंथा ॥
अर्जुनको नाहिं रह्यो सँभारा । भ्रमे लाग रथ चक्र कुम्हारा ॥
कहैं गोविंद वचन मम सुनहू । पौरुष कुमर देखु अर्जुनहू ॥
कियहु प्रतिज्ञा बिनहि विचारा । सो बिनु कवन सुधन्वा मारा ॥

हरिकर जन पुनि महाजुझारा । कबहूं नाहिं लखी परदारा ॥
ऐसा व्रत हम तुम नाहिं कीन्हा । शिशुपनते हरि पद मन दीन्हा ॥
धर्मशरीर सबै कुलतारब । बहुत कष्ट करि तो हम मारब ॥
अर्जुन कहा सुनहु गोपाला । आनौं बाँधि याहि शरजाला ॥
मेले बिमल बाण अर्जुनवा । बीचहि काटे सबै सुधन्वा ॥
अर्जुन कहँ लागेउ रण भारी । करहु सहाय गोवर्द्धनधारी ॥
दारुण बाण कुमरके परहीं । आवत रथ धीरज नहिं धरहीं ॥
जैसे तब गोकुल प्रतिपाला । तैसे राखहु कृष्णदयाला ॥
पुनि अर्जुन शर लीन्ह तुरंता । काल अनल सम चले धवंता ॥
गिरिवरधर जु पन्थ उपजावा । सो सहाय सुर सकल पठावा ॥
गण गंधर्व देव परधाना । प्रलय अनलसम लीन्हेउ बाना ॥
वामनरूप सुकृत जो कीन्हा । पंथ बाणके सँग हरि दीन्हा ॥
वीर सुधन्वा रण अनुरागी । पुण्यदेह हरिपंथहि लागी ॥
प्रभुप्रसाद मैं कबहुं न हारौं । सहौं बाण पंथहि पुनि मारौं ॥
करौं प्रतिज्ञा शंक न मानौं । हरितजि आनहिं तृणवत जानौं ॥
धनि अर्जुन जे भक्ति गोपाला । आपन सुकृत देइ प्रतिपाला ॥
दारुणबान गगन क्षयलागा । देवविमान दशोंदिशि भागा ॥
मृत्युलोक पुनि सबै डराना । काधौं करहि प्रलय को बाना ॥
अनल शिखा जनु दुहुँदिशि धाई । तीनि लोक शंका उपजाई ॥

दोहा—विज्जुछटा जनु कोटिन, परीं कुमर शिर आइ ॥
काटेउ बाण सुधन्वा, जय जय सबै कहाइ ॥ ७० ॥

अर्जुन उर दारुण दुख माना । दीन्हेउ डारि धनुष अरु बाना ॥
छीनेउ बहुरि बहुत शरफंदा । हंसध्वज कहँ भयउ अनंदा ॥
दारुण युद्ध सुधन्वा कियऊ । तेहि क्षण भूमि कंप अति भयऊ ॥
कह्यो कृष्ण बूझहु अनुमाना । अब जिनि पंथ करहु संधाना ॥
पाञ्चजन्य गोविंद बजावा । अर्जुन देवदत्त गुहरावा ॥
पंथ कटक कोउ धरै न धीरा । वचन सुनत मन भा अति थीरा ॥

कहै पंथ जिय भयो अलेखा । अस प्रचंड हम कहूँ न देखा ॥
अर्जुन सहित कृष्ण इनि जीता । धन्य सुधन्वा हरिकर मीता ॥
तीनहु भुवन कीर्ति चलि गई । नीकी सफल प्रतिज्ञा भई ॥
रामचरण संतत हरिसेवा । तरसहिं सब देखनहित देवा ॥
अर्जुन कहै इहाँ हम मरिहैं । धौंकस यज्ञ युधिष्ठिर करिहैं ॥
विपति हरण प्रभु दीनदयाला । दास दुःख नित दुखित गोपाला ॥
कहैं पंथसन धरहु न धीरा । करो यज्ञ मारो यह वीरा ॥
पूरेउ पांचजन्य भगवाना । अर्जुन लेहु धनुष अरु बाना ॥
कमलनयनकी आज्ञा पाई । लीन्ह धनंजय धनुष चढ़ाई ॥
जैमिनि जन्मेजयसन कहहीं । पंथ सुधन्वहि मारन चहहीं ॥
कुमर सुधन्वहि यह जिय भावै । प्रभु चरणन तर मृत्यु सजावै ॥
जीवन सुकृत राम अवतारा । सौंपि सबै कर बाण सम्हारा ॥
जानत अहौं सुनहु यदुराई । करो सदा तुम पंथ सहाई ॥
आयउ भले जगत निस्तारन । मारहु मोहि धनंजय कारन ॥
रसना राम नाम अब धारौं । अर्जुनकी परतिज्ञा टारौं ॥
कहै पंथ सुनु राजकुमारा । तुमसम वीर न है संसारा ॥
हरिजन काहि विगवावै कोई । भवन पाप बड़ तिनकहँ होई ॥
दिन दिन यहै पाप मैं पाऊँ । सहित मुकुट शिर जो न खसाऊँ ॥
कहैं कुमर रिसवन जो होई । मरन नीक टीका जग सोई ॥
करौं पाप तेहि पाप पराऊं । जो रण तजि पछमन मैं जाऊँ ॥
दुःसह पंथ कीन्ह सन्धाना । पावक प्रकट चलेउ जनु बाना ॥
चन्द्र सूर्य जे गगन सुहावा । पंथबाणते पंथ न पावा ॥
भा अँधियार लगे सब भाजन । बाण अघात सुनिय नहिं बाजन ॥
आपन बाण जाहि प्रभु मारै । सोकि बधै जेहि आप उबारै ॥
अर्जुन बाण भयउ जनु जारव । जननी तात कुमर सुख सारव ॥
प्रभावती कहँ रह पछितावा । मैं हरिचरन न देखन पावा ॥
जाके नाम तरै संसारा । सो पुनि मारैं भाग्य हमारा ॥

सुनहु वचन रणसिंह हमारा । तुम्हरी कृपा काटि शर जारा ॥
जरत बाण जस वज्र प्रचंडा । काटेउ बाण भयो शतखंडा ॥
पुनि उनयो आवा घहराई । राम वचन निष्फल नाहिं जाई ॥
प्रलयकाल जनु दशदिशि जरो । कुमर माथ धरणी खसि परो ॥
हाहाकार दशौं दिशि भारी । सरवर नीर सूख जनु सारी ॥
परिजन जीव कमल कुम्हिलाना । मानहु चंद्र सुधा बिलगाना ॥
आधा बाण भयउ शतखंडा । आधा कुमर शीश कृत खंडा ॥
केशव राम सप्र आभरना । परे कुमर जहँ हरिके चरना ॥
असुर पक्षि अरु किन्नर नागा । कालचक्र सन कोउ न भागा ॥
हरिकर चरित न जानै कोई । ततसम पीर दुहुँनकी होई ॥
इनसन है कछु उनसन काजा । शूर न सोचिय सुनि हो राजा ॥
दीनदयालु भक्त निज चीन्हा । परमधाम तेहि कहँ प्रभु दीन्हा ॥
जेहिकी महिमा वेद न जाना । तेहि निज धाम दीन्ह भगवाना ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि सुधन्वावधो नाम एकोनविंशतमोऽध्यायः ॥ १९ ॥

जैमिनिरुवाच ।

कृष्ण चरण तर शिर बैसावा । कुमर कवंध सौंह होइ धावा ॥
बहु प्रकार पुनि करै प्रहारा । हयगयंद धरणी लै मारा ॥
रथ सारथी सैन भयभीता । कुमर कवंध जाय नहिं जीता ॥
अस कोउ भयउ न अस कोउ होऊ । जस रण युद्ध सुधन्वा भयऊ ॥
परेउ कवंध चरण हरिसेवा । पुष्प वृष्टि वर्षहिं सब देवा ॥
माथ कुमर प्रभु लीन्ह उठाई । रसना राम नृसिंह कहाई ॥
इह अंतर प्रभु वदन पसारा । भयउ चतुर्भुज रूप कुमारा ॥
ज्योतिहि ज्योति मिलिगई सोई । राम कहत रामै नर होई ॥
जनयहँ कीन्हेउ परम सनेहा । कृष्ण कुमरकी एकै देहा ॥
हरि कर जन अरु परम जुझारा । अर्जुन कहँ जिनि करहु प्रहारा ॥
पुरुषोत्तम जन कहा वखानहिं । वहु चरित्र भगवंतहि जानहिं ॥

कृष्ण देव रथ माथ चढ़ाई। हंसध्वज गृह लयउ लिवाई॥
रत्न जटित कुंडल भल काना। शिरमणि मुकुट किरणि जनु भना॥
हंसध्वज शिर कर पर लीन्हा। हमरे काज पुत्र जिय दीन्हा॥
झरे नीर राजाके नयना। मोसन पुत्र कहौ कछु वयना॥
कहै नृपति कह कीन्ह तुम्हारा। कस छाँड़हु सुत संग हमारा॥
बहुत विलाप करत है ताता। मैं बलि पुत्र कहौ कछु बाता॥
तुमरो जीव तेल कर जारा। तेहिते रहेउ रिसाय कुमारा॥
तात सनेह तजौ कस वीरा। कहो कुमर किमि रहै शरीरा॥
अपनी सफल प्रतिज्ञा कीन्हा। जिय हरिकी न्यौछावरि दीन्हा॥
कुमरि प्रभावति जब विरमाये। हम जारे कछु जान न पाये॥
सुत लिलाट पुर नृपति लिलाटा। चूमत बदन हृदय जनु फाटा॥
पुनि सब मिलि करि नृपति उठावा। शोक समुद्र थाह नहिं पावा॥
धीर न करै अधिक संतापा। परे लकुट इव भरि संतापा॥
उठहु न पुत्र करहु रिपु भंगा। अर्जुनको पुनि लेहु तुरंगा॥
अर्जुन अरु वृषकेतु कुमारा। कहसि ठाढ हो विषम जुझारा॥
उठहु पुत्र कर लो धनु वाना। तोषो बहुरि श्रीभगवाना॥
जननी वचन सत्य सुत कीन्हा। रणमहि लोह कृष्णसन लीन्हा॥
सुत बहु भाग्य रहेउ घर वैसा। माता करई बहुरिव कैसा॥
विघनासन माँगे जो पाऊँ। प्राण कुमरके संग पठाऊँ॥
दशरथ मरि सुत वनहि पठावा। कस मम प्राण निकसि नहिं जावा॥
मोकारण रण कीन्ह मशाना। जूझत पाँउ न पछरख जाना॥
मोसन बहुरि न बोलेउ वयना। पुनि सुत कबहि देखिहौं नयना॥
सुमिरि सुमिरि गुण निजसुत केरा। करत विलाप नृपति हरवेरा॥
दोहा—सुमिरि सुमिरि गुण कुमरके, मरहि न जीवै तात॥
वज्रशालते कठिन अति, पुत्रशोक आघात॥७१॥

सुरथ उवाच।

कहत सुरथ नृप नयन न खोवहु। झूँठी बात लागि मति रोवहु॥

वृथा अहै जीवन दिन चारी। यह तो नट पेषन फुलवारी ॥
कालचक्र कर विषम अहूता। बहुत मुये पुनि मरहिं बहूता ॥
यह जस तरुवर पक्षि बसेरा। वहवी नदी जाय जिमि वेरा ॥
ऐसे यह सब है संसारा। कौन तात को पुत्र तुम्हारा ॥
जो कहुँ अहै सो भा हरि लीन्हा। रोवहु कहा छीन शिर लीन्हा ॥
करहु ज्ञान जिय राम विचारहु। राजा आपन काज सँभारहु ॥
नीक जन्म हरि बिनु नर खोवै। कादर होइ सुरण चढ़ि रोवैं ॥
कहै नृपति सुन सुरथ विचारी। नहिं विसरति मोहि वहु उनिहारी॥
अर्जुन संग विषम रण कीन्हा। जीव कृष्ण चरणन तर दीन्हा ॥
जियत मोर पछिताव न जाई। जारि तेल रण दीन्ह पठाई ॥
घाय विषम लागे सब गाता। निकसत प्राण कहि न कछु बाता॥
ताप मोर कहि देउ निहोरा। कहि हरि लीन्ह सुधन्वा मोरा ॥
देखहु सुरथ भाइकर माथा। कुंडल मुकुट तरुणजन साथा ॥

सुरथ उवाच।

सुनत नृपतिमन उठेउ रिसाई। जहँ हरि तहँ शिर दीन्ह पठाई ॥
कृष्णदेव शिर शिव कहँ दीन्हा। माला मेरु मुंड लै कीन्हा ॥
अतिदुर्लभ हरिभक्त कुमारा। आपुन तरि कोटिन कुल तारा ॥
अर्जुन विजयकथा गुण गाई। कुमर सुधन्वा सुयश सुनाई ॥
तहँ अनेक तीरथ जनु कीन्हा। काशी कोटिन कंचन दीन्हा ॥
हरिचरित्र ऋषि व्यास बखाना। तेहि जानहु सब सुनेउ पुराना ॥
सुरथ पिताकर शोक नशावा। लीन्ह धनुष रण विषम जु आवा॥
सहित कृष्ण अर्जुन रण गाजा। देखहु आजु युद्धकर साजा ॥
यामें भाय वैर अब लेऊँ। कै शिर हरि चरणन तर देऊँ ॥
भ्राता मरा सुधन्वा मोरा। अब देखौं क्षत्रिय वल तोरा ॥

दोहा-गहि धनुबान कुमर तब, राजहि दै संतोष ॥
पुरुषोत्तम तेहि अवसर, सुरथ चढेउ रण चोष ॥७२॥

सिंहनाद भल शंख बजावा। जहँ रह पंथ सुरथ तहँ आवा॥
स्वर्गभूमि रण बहुरि डराना। सुर नर नाग लोक अकुलाना॥
ठाढ़ होव अब जैहै काहाँ। जहाँ सुधन्वा पठवहुँ ताहाँ॥
माधव कपट बनिज तुम कीन्हा। मुक्ता दै बदरी फल लीन्हा॥
जैसे कोउ बालक बौरावै। रत्न लेय लालच पै आवै॥
तैसे कीन्ह कृष्ण तुम बाता। सुकृत देय करि कुमर निपाता॥
लीन्हेउ पुण्य दीन्ह जो दाना। वीर बहुत व्यापेउ उर ज्ञाना॥
पुण्य तुम्हार लीन्ह रण भोला। जीत बदल रण कुमर अडोला॥
भक्तवत्सल उर क्रोध न आवै। जनकर कहा प्रभुहि सुठि भावै॥
जब सुधि करै सुधन्वा वीरा। तब तब उपजै क्रोध शरीरा॥
हरि अर्जुन सन कहेउ बुझाई। भ्रात वियोग भिरहि बरिआई॥
महाभक्त सुकृत यहि पाहीं। आजु अनाथ करै रणमाहीं॥
अर्जुन सन बोले भगवाना। यहिसन तुम जनि करहु सँधाना॥
प्रभुसों पंथ विनय असिधारी। बहुत हमारि आपदा टारी॥
कवन अनाथ करिय यह वीरा। सुनत बचन कह अर्जुनधीरा॥
कहैं कृष्ण सुन पंथ कुमारा। यहि रण करब सबै क्षयकारा॥
सुरथ समीप तुमाहिं बल थोरा। कहसि धनंजय सुनु प्रभु मोरा॥
धीर सुधन्वा वीर हराये। एकक अन्त एक नहिं पाये॥
तो मैं आपन सुकृत दीन्हा। बहुतै कष्ट कुमर शिर लीन्हा॥
पुण्यहीन जाकर तनु होई। काहेको जनमै जग सोई॥
तस्कर बाघ सर्प भय भारी। गाढ़े पुण्य करत रखवारी॥
यहि अन्तर प्रद्युम्न बुलावा। संग वीर बहु रणहि पठावा॥
कृष्ण कहेउ अर्जुन कहँ भीरा। पुत्रहुते जनकी बाढ़ि पीरा॥
कृष्ण धनंजय अनुमति कीन्हा। योजन तीनि छाँड़ि भुव दीन्हा॥

दोहा—धन्य भाग्य हैं पंथके, जेहि जुगवाहिं गोपाल॥
पुरुषोत्तम शरणागतहि, सदा करत प्रतिपाल॥७३॥

कीन्ह क्रोध रथ सुरथ कुमारा । मारौं सबै न लावौं वारा ॥
अर्जुन कृष्ण कीन्ह पाखंडा । मारौं सकल करौं शतखंडा ॥
हरि बालक छाँड़े रणमाहाँ । आपुन उभय गये छिपि काहाँ ॥
सैन कहै सुनि राजकुमारा । वृथा कहति तैं कवन जुझारा ॥
हमसन युद्ध करव तुम आई । पाछे अर्जुन अरु यदुराई ॥
सुनतै सुरथ बहुत रिसिलागी । छाँडे बाण जरसि जस आगी ॥
काहुहि नाहिं रही सँभारा । निमिष माहिं सब दलहि विदारा ॥
हाहाकार सकल रण भयऊ । राजा तुरँग धरणि मिलि गयऊ ॥
विचली सैन गई भजि ताहाँ । याजन तीनि पंथ रहजाहाँ ॥
त्राहि त्राहि रण सब गुहरावहिं । यदुपतिके पाछे सब आवहिं ॥
प्रभुसन पंथ विनय अवधारी । ठाढ़ कहा हरि करौ गुहारी ॥
आज्ञा दीन्हीं श्रीभगवाना । लीन्ह धनंजय कर धनुवाना ॥
दृष्टि परे अर्जुन रण जहवाँ । ठाढ होव जैहै अब कहवाँ ॥
अकसर मारेउ भाय हमारा । दिय सुकृत नहिं कियो विचारा ॥
यहि अन्तर अर्जुन अस कहही । वीर धीर धरि संकट सहही ॥
तमकेउ कुमर कहसि हो ठाढ़ा । बाण सहस्र तुरत तेहि काढ़ा ॥
काटेसि धनुष ध्वजा अरु बाना । गजरथ सारथि करचो मशाना ॥
वरषे सब आयुध एक वेरा । करहि दाप धाये चहुँ फेरा ॥
कृष्ण कहा अर्जुन धरि धीरा । भाइ वियोग बड़ो यहि वीरा ॥
तब हम गये तुमहिं लै भागी । देखहु प्रलयकाल जनु आगी ॥
हरिसन पंथ कहसि रिसि आई । मारौं सुरथहि जियत न जाई ॥
नाथ कृपा हम बहुत निपाता । या बपुरेकी केतिक बाता ॥
जाकर भय गोविंद निवारैं । पुरुषोत्तम सो कैसे हारैं ॥
मेले बाण पंथ चालि धावा । सुरथ कुमर रथ गगन उड़ावा ॥
अंतरिक्ष ह्वै कियो सँधाना । जहँ रह पंथ कृष्ण भगवाना ॥
भूमि परत रथ गगन उबारहु । कृष्ण कहैं अब पंथ सँभारहु ॥
दुःसह बाण सहे रणधीरा । भ्रमै लाग रथ रहै न थीरा ॥

पूज्य अपूज्य न कछु विचारौ । हरि हर सहित पंथ परिहारौ ॥
क्रोधित शंख ध्वनी प्रभु करी । गगनहुते धरणी खसि परी ॥
कृष्ण कहा सुन अर्जुन वीरा । सुरथहि विरथ करहु रणधीरा ॥
महाअडोल कुमर रिसिआना । ध्वजा सहित रण कीन्ह मशाना ॥
सुरथ आन रथ चढ़न न पाये । पैदर वज्र गदा लै धाये ॥
यहि अन्तर हनुमंत रिसाना । कुँवर बहोरि कीन्ह संधाना ॥
लागत वज्र भयानक भयऊ । रथ कंपत धरणी मिलि गयऊ ॥
तब गोविंद प्रेम जिय बाढ़ा । रथ धरणीते तत्क्षण काढ़ा ॥
पंथ कृष्ण अरु शिव हनुमंता । गनै न काहू रणमैंमंता ॥

दोहा-मेरु उदधि अरु गजपुरै, तहँ तहँ पंथ पराहु ॥
भाय वियोगी सुरथमैं, गाहि मारौं जहँ जाहु॥७४॥

परे वचन अर्जुनके काना । छाँडिसि शर जे वज्र समाना ॥
मूर्च्छित रण भा सुरथकुमारा । पुनि सँभारि उठि लगी न वारा ॥
चढ़े आन रथ करत अनंदा । गहि सब अस्त्र विषम शरफंदा ॥
करहु प्रतिज्ञा सो मैं टारौं । सहित सारथी तुमकहँ मारौं ॥
अर्जुन कहेउ प्रतिज्ञा टारब । कृष्णकृपाते कबहुं न हारब ॥
रणमाहिं देखत नृपति जुझारा । आजु शीश मैं हरौं तुम्हारा ॥
सुरथ बीर अपनो प्रण करई । गर्जत रणमाहिं शंक न धरई ॥
सुकृतहीन होइ मम देहा । जो रण तजौं गोविंद सनेहा ॥
करी प्रतिज्ञा बाण अड़ावा । महावीर सन्मुख सो धावा ॥
अर्जुन तन नहिं रही संभारा । कुमर सुरथ जब बाण प्रहारा ॥
हरि हर सुमिरि बहुरि रथ साजा । होत युद्ध देखहिं सब राजा ॥
व्यासै कहेउ व्यासमुनि जानै । अवर कहै कवि कौन बखानै ॥
सुरथ जबहिं रथ चढ़ै न धावै । मारत पंथहि विलम न लावै ॥
अष्टोत्तरशत रथ चढि धावा । छीनि सबै रथ पंथ खसावा ॥
कुमर सुरथ भा निष्फल बाना । सुमिरे पिता रामकर ध्याना ॥
कृपासिंधु जाकी दीठि होई । ताकी छाँह न चापै कोई ॥

शोक हरण गोविंद सँभारे। मानस कहा विधातहि मारे॥
नर तरिबे हित कथा बढ़ाई। सृष्टि संहारण हैं यदुराई॥
विरथ भयो जो राजकुमारा। पंथ धनुष कीन्हेसि द्वै फारा॥
अर्जुन चंद्रबाण पुनि मारी। दहनी भुजा काट महि डारी॥
कुंकुम लेपन महा शृँगारा। टूटेउ मनहु रक्त द्रुम डारा॥
सन्मुख पंथ परा रण आई। जनु अकाशते दामिनि धाई॥
रणमहि दारुण सुरथकुमारा। वामभुजा पुनि गदा प्रहारा॥
क्रोधित हो कीन्हेउ शिर घाया। मारे पंथ सहित यदुराया॥
मूर्च्छित भये सहित हनुमंता। मारेसि रथी सहस मैमंता॥
द्वैसहस्र रथ धरणी डारे। तुरँग सहस दश काटि निवारे॥
गदा गहै जो रणमाहिं धावै। एकौ वीर निकट नहिं आवै॥
ठाढ होउ रण अर्जुन वीरा। अवरौ जवन नृपति रणधीरा॥
गदा घाउ कोउ सहै न पारै। पुनि पुनि अर्जुन वीर प्रचारै॥
तुरत हि पंथ सुमिरि यदुनाथा। छीनी बहुरि गदा अरु हाथा॥
हस्त विना भा सुरथकुमारा। तबहूँ रणमहि पंथ प्रचारा॥
अब संभार पंथ रणधीरा। भल पालत हैं रण यदुवीरा॥
कहि अस वचन बहुरि रणधावा। जहाँ पंथ तहँ गर्जत आवा॥
आवत योधा सबै डराने। जनु सन्मुख यम आय तुलाने॥
नव शर साधि पंथ फटकारा। काटि जंघ कीन्ही दोइ फारा॥
रणमहिं लोटत धाव कुमारा। कृष्ण कहै याहि महाजुझारा॥
लोटत देखिय वज्र समाना। बहुरि पंथ शर कीन्ह संधाना॥
कुंडल मुकुट चंद्र जनु ताथा। नयन विशाल मनोहर माथा॥
काट्यो शीश चरणतर परो। उठ्यो कवंध बहुरि रिस भर्यो॥
जबही कृष्ण चक्र करि काटा। उझलि लागि गा पंथ लिलाटा॥
ऐसी करी सुरथ रणकरणी। पंथौ मूर्च्छि परे रणधरणी॥
निर्भय जानि कीन्ह शर ओटा। लागेउ वज्र शिला जनु चोटा॥

दोहा-पुरुषोत्तम गोविंदकर, चरित बूझि नहिं जाय ॥
कुमर शीश हरि चरणतर,रटना राम लगाय॥७५॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि सुरथयुद्धवर्णनं नाम विंशोध्याय: ॥ २० ॥

जैमिनिरुवाच ।

इहि अंतर यदुनंदन आये। मूर्च्छित अर्जुन तुरत उठाये ॥
ताकर विघ्न होइ कहु कैसे। जहाँ गोविंद रहैं नित वैसे ॥
महादयालु मुनिन यश गावा। कुमरशीश पंथहि दिखरावा ॥
भ्रात वियोग महापरचंडा। वरणि न जाइ सुरथ भुजदंडा ॥
कीन्ह प्रतिज्ञा सो फुर कीन्हा। जूझत रणहि न पग फिर दीन्हा ॥
हस्तकमल पर शीश रहाई। रसना राम राम रटलाई ॥
कहै पंथ सुनु संतनहीता। तुमरी कृपा सुरथ हम जीता ॥
अर्जुन शीश हाथ करि लीन्हा। सुस्तुति करि न्यौछावरि दीन्हा ॥
धन्य कुमर धनि जननी ताता। होइ कबंध युद्ध आघाता ॥
पुनि पुनि अर्जुन करै बड़ाई। देखत शीश पाप जरि जाई ॥
अस एकौ होते रण ताहिया। हम कुरुक्षेत्र कीन्ह हो जहिया ॥
दारुण रथ चढ़ि सबहि विदारत। गज रथ वधत कबहुँ नहिं हारत ॥
बहुरि शीश हरिकर बैसावा। उहि अवसर प्रभु गरुड बुलावा ॥
विनता सुत टेके हरिचरना। का आज्ञा संतननिस्तरना ॥
कहै कृष्ण जनि विलम कराहू। सुरथ शीश वेणी लैजाहू ॥
तीरथराज प्रयाग बखाना। कश्यपसुतसे कह भगवाना ॥
विनतासुत प्रभुसों अस भाखा। कस न शीश चरणन तर राखा ॥
यमुनानदी सरयु अति गंगा। भयउ पुनीत चरण धरसंगा ॥
करौ कृपा तो फेरि कहाहू। चरण छांड़ि कहँइहि लै जाहू ॥
फिरि बोले प्रभु कलमष भंगा। सुनहु खगेश महातम गंगा ॥
जेहिकर अस्थि गंगके माहाँ। वसि वैंकुठ कल्पतरु छाहाँ ॥
वेणी मृत्यु अर्धजल पावै। वसि वैंकुठ बहुरि नहिं आवै ॥

कश्यपतनय कहेउ कर जोरी । कमलनयन विनती सुन मोरी ॥
यहिकर शीश चरण तर रहेऊ । आपु तरे कोटिक कुल तरेऊ ॥
राम रटत निकसै जो प्राणा । मुक्ति होय जस सुनेउ पुराना ॥
गंगा चरणकमल ते आई । निगम वचन अस मेटि न जाई ॥
कहेसि कृष्ण सुन अंडजराया । तोसन वचन कहौं सतिभाया ॥
अतिपवित्र यहि दुरति न लागा । लै पवित्र तुम करहु प्रयागा ॥
निशिदिन तीरथ तरसत रहई । तेऊ दरश संतकर चहई ॥
फिरि बोले नहिं गरुड़ लजाना । नाय माथ लै शीश उड़ाना ॥
गगनहि गगन गरुड़ जब जाई । शिरकी महादेव सुधि पाई ॥
वृषभरूढ़ गण गंधरब पासा । उमा सहित सोहत कैलासा ॥
गहि त्रिशूल दारिद्र विदारा । जगतगुरू अरु सृष्टि संहारा ॥
ब्रह्मादिक अब ध्यावैं जाही । हरि हर भेद अभेद न आही ॥
पार्वती अस वचन सुनाई । सुरथ शीश देखहु शिव जाई ॥
कश्यपसुत लै जात प्रयागा । आनहु शीश विलम्ब न लागा ॥
शिव भृंगीसन कहेउ रिसाई । आनहु शीश सुरथकर जाई ॥
अर्जुन साथ विषम रण कीन्हा । शिर हरिके चरणनतर दीन्हा ॥
कुमर सुधन्वा नयन विशाला । उनको मेरु मुंड शिवमाला ॥
कुंडल मुकुट सहित जो पाऊँ । अति पवित्र माला बनवाऊँ ॥
जो दाता अरु धर्म शरीरा । कृतविज्ञान होइ रणधीरा ॥
रामभक्त इंद्रियजित होई । शिवकर अलंकार नर सोई ॥
महाभक्त रण सुरथकुमारा । आनहु भूषण करहु हमारा ॥

दोहा—महादेवके वचन लै, भृंगी चले रिसाय ॥
भक्तिहेतु पुरुषोत्तमहि, हरिकर चरित कहाय ॥७६॥

भृंगी वचन गरुड़सन कहि है । देहु शीश शंकरमन चहिहै ॥
गरुड़ सुनो विनती यह मोरी । बलकै लेहौं शीश अजोरी ॥
उरग न हैं जो तुमहि डराई । कटिहौं पंख शीश लै जाई ॥
गरुड़ रिसान सुनत इहबाता । दारुण पंख कीन्ह असिघाता ॥

तीर्थराज कहँ चले पराई । भृंगी पवन बतास बहाई ॥
शिवगण सकल लाज जिय माना । वह तो वाहन श्रीभगवाना ॥
जाके पंखनकेर बतासा । यहि अवसर पहुँचे कैलासा ॥
उमा वचन दुःखित अति भयऊ । शंकर कलाहीन है गयऊ ॥
पन्नग भोजन गरुड़ प्रचंडा । मारौं आजु करौं शतखंडा ॥
वृद्ध वृषभ अति अहै तुम्हारा । गंग जटा पुनि पन्नग भारा ॥
कर त्रिशूल अस्त्र यो षडंगा । गजकर चर्म भस्म सब अंगा ॥
पार्वती किय सकल पसारा । भयो क्रोध वृषभहि हंकारा ॥
आज्ञा दीन जाहु गण तहँवा । गरुड़ सुरथ औ शिरहै जहँवा ॥
आनहु वेगि उमाहि दिखरावहु । पौरुष करहु सबल है धावहु ॥
पवन वेग नंदी गण धाये । जहाँ गरुड़ तहँ तमकत आये ॥
वृषनंदीकी प्रबल सुस्वासा । गरुड़ पंखबल भयो निरासा ॥
सुनु खगनाथ सत्य मम बाता । तूल उड़ाय पवन आघाता ॥
विन तनया कह दुःसह भयऊ । तजेउ न शीश भ्रमत वर गयऊ॥
गरुड़ कहै आज्ञा प्रभु टरई । करौं युद्ध तो शिर खसि परई ॥
वन पर्वत सब नदी अपारा । गवनेउ गरुड़ उदधिके पारा ॥
सत्यलोक वैकुंठ विशाला ।फिरेउ पवन जिमि दिश बहु चाला।
जहँ तहँ माथ लीन्ह खग धावन । तहँ तहँ लोक होहिं सब पावन ॥
हरि हर यह उपाय जन कीन्हा । लोक लोक पावन मन दीन्हा ॥
फिरतै फिरत गरुड़ तहँ आवा । सुमिरि वचन जहँ कृष्ण पठावा ॥
तजेउ माथ जहँ अहै प्रयागा । जलते नंदीगण लै भागा ॥
शीश पवित्र शंभुकहँ दीन्हा । उमा अनंद बहुत बिधि कीन्हा ॥
महापवित्र कुमर कर शीशा । माला मेरु कीन्ह जगदीशा ॥
जहाँ प्रभू तहँ खगपति आये । समाचार सब प्रभुहि सुनाये ॥

दोहा-सुरथ शीशहरभूषण, गरुड़ कहै समझाय ॥
प्रभुचरित्र पुरुषोत्तम, सुनत दुरित जरि जाय ॥७७॥

जैमिनि कह जनमेजय राजा । सुनिये जवन भयो पुनि साजा ॥
जूझि परेउ जब सुरथकुमारा । नृप हंसध्वज अस सँभारा ॥
सुत वियोग हमहूं अब मरिहैं । सुरथ बिना हम जी का करिहैं ॥
कटक बिना रण राउ रिसाना । भयउ असूझ मर्म नाहिं जाना ॥
डोली वसुधा स्वर्ग पताला । जब राजा त्यागो शरजाला ॥
दारुण बाण बहुत्त भइ भीरा । पंथ शयन कोउ धरै न धीरा ॥
कमलनयन बुधि एक बनाई । देखेसि रणमाहिं नृपति रिसाई ॥
भये चतुर्भुज श्रीभगवाना । आये तहँ जहँ नृप रण ठाना ॥
शंख चक्र गद पद्म जु धरे । देखत रूप नृपति भुव परे ॥
सुस्तुति करत गहे पग जाई । कमलनयन प्रभु लीन्ह उठाई ॥
राजाहि कृष्ण अंकमें लायउ । पुत्र सुरथकर शोक छुड़ायउ ॥
चरण कमल पर अस मति बाढ़ी। राजहि विपति विसरि गइ गाढ़ी॥
उत्तरेउ कटक कीन्ह प्रभु सामा । दुहूं अनीको भा विश्रामा ॥
अचरज बात करै जो कोई । तापर हरि दयालु अति होई ॥
करहिं सृष्टि हरि तब रखवारा । जब चाहिय तब करैं सँहारा ॥
इन्द्रजाल नटवर जस कीन्हा । नाच नचाय सोई अति बीना ॥
करहिं गोविंद जबहि जो भावै । कहूँ वैर कहुँ प्रीति बढावै ॥
हरि चरित्र को वरणै पारा । जीतेउ कवन कवन कहु हारा ॥
कृष्ण कहैं राजा सुन बाता । तुम अर्जुन पुनि हेत संघाता ॥
देहु तुरँग नृप प्रीति बढ़ावहु । गजपुरको सब धन पहुँचावहु ॥
हम अब जाहिं युधिष्ठिर पासा । तुम अर्जुन करहू मख आसा ॥
कृष्णदेव अर्जुन बुलवाये । हंसध्वजके कंठ लगाये ॥
गरुड़ पास अमृत वरसावा । जे मूर्च्छित ते सबै जगावा ॥
दुहूं अनीकर बाजन बाजा । संग भये हंसध्वज राजा ॥
सौंपि पंथ कहँ कृष्ण सिधाये । जहँ रह धर्मतनय तह आये ॥
राजा कहँ संतोष करावा । समाचार प्रभु सबै सुनावा ॥
सुरथ सुधन्वा हरिपद वासा । वचन सुनत नृप मनाहिं हुलासा ॥

तजेउ शोक मन हर्ष प्रकाशा। निशिदिन राम चरणकी आशा ॥
सब वीरनके चरण पखारा। होन लागि अमृत ज्यवनारा ॥
भाव भक्ति सबहीकर कीन्हा। कृष्ण वचन शिर ऊपर लीन्हा ॥
धन गजपुरको दीन्ह पठाई। दिवसहि पाँच करी पहुनाई ॥
कहहु ताहि जीतैको पारा। जाके कृष्ण सदा रखवारा ॥

दोहा–सुत वियोग नृप बिसरेउ,अर्जुन भये अनंद ॥
कहत विप्र पुरुषोत्तम, सुनत हरत दुखफंद॥७८ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि हंसध्वजागमनं नाम एकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

प्रणवौं रामचरित जहँ भयऊ। वर्णौं बहुरि जहाँ हय गयऊ ॥
पुरीचंद्रते चलेउ तुरंगा। राजा हंसध्वज भये संगा ॥
पंथ प्रद्युम्न सुवेग कुमारा। यौवनाश्व वृषकेतु जुझारा ॥
सँग अनुशल्य महाबलवंता। सात्यकि कृतवर्मा सामंता ॥
नाना दिशिको पुनि हय गयऊ। बहुरि तुरंगम उतमुख भयऊ ॥
वारी पलवा देश सुहावा। देश भयावन जानि न पावा ॥
पंकजवन सरवर चहुँपासा। यज्ञ तुरंगम भयउ पियासा ॥
जल पीवत विधि कीन्ह अलेखा। नयउ तुरंग तुरंगिनि भेखा ॥
देखि कुमर सब चकृत भयऊ। बहुरि तुरंग अवर सर गयऊ ॥
पुनि गोविंद कछु अबर बनावा। परशत नीर बाघ है धावा ॥
देखत बाघ भयावन भागे। पंथ जवि दुख मानन लागे ॥
कासन बूझिय पुनि यह बाता। कवन देश लै आव विधाता ॥

जन्मेजय उवाच।

जन्मेजय तब लगे विचारन। जैमिनि मोहि कहौ सब कारन ॥
कवने हेतु तुरंगिनि भयऊ। कैसे बाघ भीमवन भयऊ ॥
पुनि कवनी विधि भयउ तुरंगा। मोहि समझावहु सबै प्रसंगा ॥

जैमिनिरुवाच ।

हरिकर चरित रैनि दिन गाऊँ । सुन राजा कारण समझाऊँ ॥
महा गहन सरवर जल भरयो । तेहि वन पार्वती तप करयो ॥
शिवशिव रटहिं रैनि दिन जागी । करहिं महातप रुद्रहि लागी ॥
दैत्य एक बहुवेष बनावा । जहँ तप करै उमा तहँ आवा ॥
कहेसि कि आप कहा तप करहू । हमरे गृह आवहु जनि डरहू ॥
सुंदरि जो माँगौ सो देऊँ । हाथ उठाय देउँ सो लेऊँ ॥
यह सुनि उमा बहुत रिसि लागी । भयो भस्म निकसी मुख आगी ॥
पार्वती कह भा संतापा । वन सरवरको दीन्हेउ शापा ॥
नीर सरोदक परशै जोई । तुरत पुरुषते नारी होई ॥
उमाशाप नाहिं जाय बहोरी । ताकारण हयवर भा घोरी ॥

दोहा–जैमिनि कहै सुनौ नृप, जो मुनि भाषेउ व्यास ॥
पुरुषोत्तम मतिहीनअति, रामकृपा कछु भास ॥७९॥

जैमिनि कहै जगत निस्तारन । सुनिये नृपति कथा अब कारन ॥
पूरव पहले सतयुग माहीं । बालयती एक हो तेहि ठाहीं ॥
जेतिक तीरथ धरती माहा । मज्जन कीन्ह तहाँ सब ठाहा ॥
दहिनावर्त भूमिकी दीन्हा । भ्रमतहि भ्रमत सरोदक चीन्हा ॥
नीकी विधि कीन्हो असनाना । जपन लगेउ पुनि श्रीभगवाना ॥
दारुण भल तहँ ग्राह गहीरा । गहेउ चरण भयो दुःख शरीरा ॥
हरिकी दया तीरही आयो । बहुत कष्ट करि चरण छुड़ायो ॥
दीन्हेउ शाप क्रोध करि सोई । यह जल छुवत बाघ सो होई ॥
संत शाप गोविंद न टारा । सुन राजा यह वाघ विचारा ॥
ऋषिसन जोरि हाथ नृप कहेऊ । कवनी भाँति तुरंगम भयऊ ॥
राजासन मुनि कहैं बखाना । देखत बाघ सवन भय माना ॥
देश भयावन जानि न जाई । यह आशंका बूझिय काई ॥
हमरे रक्षक श्री गोपाला । सदा कराहिं जनकर प्रतिपाला ॥
अर्जुन सहित हरिहि अवराधा । रामनाम ते रहै न बाधा ॥

राखा शरण संतके मीता । तुमरी कृपा सुयोधन जीता ॥
जहँ जहँ गाढ़ परी मोहि आई । तहँ तहँ राखि लीन्ह यदुराई ॥
अब प्रभु आय परयो बड़ काजा । हमैं कहा तुमहीको लाजा ॥
जब यह भयो अश्वकर साजा । किमि मख करैं युधिष्ठिर राजा ॥
अस्तुति करत विलम्ब न भयऊ । सिंहते बहुरि तुरंगम भयऊ ॥
देखि तुरंग भयो आनंदा । विकसे सबै कुसुम जिमि चंदा ॥
जेहिपर कृपा करी गोपाला । सो कैसे फँसिहै भ्रमजाला ॥
विविधभाँति बाजन बजवावा । भामिनिराज तुरंगम आवा ॥
अतिस्वरूप नवयौवन रहई । कराहिं राज सब पुरुषहि चहई ॥
मोहन बाण रहे उन पाहीं । सुंदर अमर पुरुष मरिजाहीं ॥
अर्जुनवीर देश तेहि आयउ । देखत कुमर मोह जिय पायउ ॥
कवनहुँ नृत्य करहि भल गावहि । कवनहुँ ताल मृदंग बजावहि ॥
सुर नर मोहत बोलत बैना । देखिये जनु मन्मथकी सैना ॥
अर्जुन कहै करहु मनधीरा । विषफल जनि मोहो बरवीरा ॥
इनहि लागि यहि थल जो मरिहौ । जैहै तुरँग बहुत दुख करिहौ ॥
बात कहत लागी नहिं वारा । आय तहाँ सुंदर असवारा ॥
कमलवर्ण मोतिनकी माला । बहुविधि भूषण नयनविशाला ॥
हावभाव मोहन शर लीन्हा । चामरबंद धनुष कर दीन्हा ॥
यज्ञतुरंग गहसि तब जाई । जहँ स्वामिनि तहँ गई लिवाई ॥
रानी कहे कहाँ तुम पावा । ऐसा हय यहि देश न आवा ॥
तुमरे कहे तुरंगम आना । जो आज्ञा सो कराहिं प्रमाना ॥
रानीकह बाँधौ घुरसारा । करहु पंथसन युद्ध विचारा ॥
बाँधि तुरंग कीन्ह रणसाजा । लीन्ह अस्त्र रणबाजे बाजा ॥

दोहा–कुमरन सहित धनंजय, मानेसि जिय अंदोह ॥
देखि स्वये भव दुःसहै, लीन्ह सुंदरिन लोह॥ ८० ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि स्त्रीराज्यागमनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

जैमिनिरुवाच ।

चंद्रवदन छांडी इकलक्षा । पंथ सौंह मिलि करै कटक्षा ॥
पीन स्तनी मोहनी नयना । सबै वास बोलहिं पिकवयना ॥
गजगामिनी चढ़ीं एकलाखा । लैवे हय कहसी मनमाखा ॥
कहेसि पंथसन युद्ध विधाना । पहले हमरे लोचन वाना ॥
सबै वीररण पंथ समेता । नयन बाणते रहेउ न चेता ॥
हँसी करहिं नहिं जूझहिं बीरा । मोहनफाँस बँधे रणधीरा ॥
वृषकेतुहि नहिं मोहनलागा । सकल वीर विहँसे गुण भागा ॥
पुनि रानी अर्जुनसन बोला । करिहौं लै सेवक बिन मोला ॥
कहालै करिहौ यज्ञकुमारा । अधर सुधारस लेहु हमारा ॥
अस सुख अर्जुन देहैं तोही । जो नाहिं देखि सुना नहिं होही ॥
कहै पंथ कामिनि कामंता । तुमरे संगहि मरब खुंता ॥
है है मखविध्वंस हमारा । जेहि कारण हम यज्ञ पसारा ॥
कहेसि प्रमीला सुनहु कुमारा । है है मरना दुहूँ प्रकारा ॥
रहौ बहुत्र बासर महि भरहू । जूझौ तुरत युद्ध जो करहू ॥
विविध भाँति करि भोग कुमारा । शरण लागि हम रहैं तुमारा ॥
जब करिहौ हमसों रणसाजा । मरिहौ जूझ होइ बड़ि लाजा ॥
भोग करत होइहि जो मरना । कोउ न हँसिहै सुनि धनु धरना ॥
मरन चाहि भल जीवन आसा । हमसँग कीजै भोगविलासा ॥
बोलहिं वचन मदनकी गाढ़ी । रणमहिं पंथहि चिंता बाढ़ी ॥
सूपनखा कर कीन्हेउ घाता । सुमिरे मन लछमनके भ्राता ॥
सुमिरत पंथहि लागि न बारा । भामिनि बाण कीन्ह परिहारा ॥
बाण सात अर्जुन फटकारा । सुंदरि शर सहस्र अनुसारा ॥
अर्ज्जुनको रथ तोपेउ बाना । मोहनबाण कीन्ह संधाना ॥
छीनेसि गुण भा विरथ शरीरा । हमसन जियत न जैहो बीरा ॥
क्रोधित पंथ भये सुनि वचना । प्रलय बाणकी कीन्हीं रचना ॥
इहि अन्तर भा वचन अकासा । तजेउ बाण जिय भयउ उदासा ॥

मत अर्जुन ऐसा जिय धरहू। सुंदरि वध जानि रणमहँ करहू ॥
वर्ष सहसदश जूझहु वीरा। तदपि न रण जीतहु सुन वीरा ॥
जो राखा चाहसि तनु प्राना। बरु सुंदरि छाँडउ धनवाना ॥
गगन वचन सुनि पंथकुमारा। कीन्ह हेत मन तजेउ विकारा ॥
युद्धभूमि अति नयन विशाला। अर्जुनकहँ मेली जयमाला॥
कीन्ह प्रीति बोली अस वयना। गजपुर हमाहिं दिखावउ नयना ॥
आ पुनि देखहु नगर हमारा। यज्ञ अश्व हम देहिं तुम्हारा ॥
हमकहँ दरश कृष्ण दिखरावहु। कोष सहित कंचन पहुँचावहु ॥
गये अर्जुन सुंदरि पुर जहँवा। यज्ञ तुरंगम पायउ तहँवा ॥
सुंदरि सकल सर्व रस लीन्हा। अर्थ भँडार गयंदन दीन्हा ॥
रानी सँग कोउ दीन पठाई। गजपुरको लै चली लिवाई ॥
सुंदरि गजपुर कीन्ह प्रवेशा। अर्जुन चले बहुरि परदेशा ॥
लीन्ह तुरंग कीन्ह प्रस्थाना। गये तेहि देश सुना नहिं काना ॥
तेहि दिशि बहुरि तुरो अनुसरिया। जीवजंतु कछु रूखन परिया ॥
नर नारी गज तुरंग अपारा। गो मृग पाक्षिकरनि फरिडारा ॥
उपजहिं बहुत होत परभाता। वासर मध्य तरुण सब गाता ॥
संध्याकाल वृद्ध ह्वै जाहीं। अर्द्धनिशा पुनि सबै विलाहीं ॥
राम छाँडि को जानै पारा। यहिविधि दिनप्रति सृष्टि सँहारा॥
विस्मय पंथ भये तेहि देशा। अवरौ देखेउ अन अन वेशा ॥
जवन देश गा हय नियरावा। शूपकर्ण भुव लोटत आवा ॥
एकलोचन अरु एक एक चरना। हय मुख सबै भयावन वरना ॥
आगे बहुरि तुरंगम जाई। तीनि नेत्र नर तहँ रहाई ॥
चरण तीनि दीरघ अतिनासा। खर मुख सबै भयावन वासा ॥
आयउ तुरँग दैत्यके देशा। विषमपुरी भयावन भेशा ॥

दोहा-तीनि कोटि निशिचरन बस, जियहिं चिरंजीकाल॥
पुरुषोत्तम तहँ पंथ गये, राखाहिं मदनगोपाल॥ ८१ ॥

उपरोहित ब्रह्मराक्षस धावा। तेहि वनमाहिं तुरी धरि लावा ॥
बाँचेउ पत्र कहत समुझाई। सुनतहि भीषम उठेउ रिसाई ॥
जानेसि मनमहँ पंथ तुरंगा। करहु बेगि पांडवदल भंगा ॥
महापूज्य दैत्यन कहँ देहू। मानसकी नस दीन्ह जनेहू ॥
नरशिर ग्रंथि कीन्ह मुंडमाला। कर जयपत्र सुअधिक विशाला ॥
गज तुरंग शिर पहिरे हारा। शूंड़ि श्रवणकर कीन्ह शृंगारा ॥
कुंजर पीठ दन्त धालीन्हो। आये रूप भयावन कीन्हो ॥
कहसि बकासुर तात हमारा। ताहिये इनके भाथन मारा ॥
अब नरमेध करहु तुम राजा। अर्जुन मारि लेहुँ सब साजा ॥
मैं आचारज यज्ञ करावौं। और ब्रह्मराक्षस लै आवौं ॥
निर्वृतकर चौमास अहारा। सुरापानके रहसि अधारा ॥
तिन तपस्विन अस रुधिर पियावहु। नृप हमार तुम प्राण जुड़ावहु ॥
ब्रह्मराक्षस बहुकाल निराशा। रहे तुरंग नृप पुजवहु आशा ॥
नर आमिष कहँ तरसत प्राना। तपस्वी भये रहे बिनु प्राना ॥
रावण यज्ञमेध भल कीन्हा। आमिष ब्रह्मराक्षसन दीन्हा ॥
ता दिनते नहिं बहुरि अघाना। अब नृप तृप्ति करहु तब जाना ॥
कह भीषम तुम पिता हमारा। पंथहि मारि करो ज्योनारा ॥
इच्छा भोजन तात सुनावहु। धौं करनहु भीषम सुखपावहु ॥
कहसि पुरोहित वचन सुनाऊँ। मन नर माँस मुदी जो पाऊँ ॥
यज्ञ तुरँग कर पावौं शीशा। तृप्त होहुँ तुहि देहुँ अशीशा ॥
कंध कबंध सहसदश पाऊं। मैं अघाउँ वनितहि लै आऊं ॥
ब्रह्मराक्षसके सुनि अस वचना। भीषम कीन्ह यज्ञकी रचना ॥
वेदी कारि मंडप लै छावा। सुरापान अरु रुधिर मँगावा ॥
तीन कोटि राक्षस बरियारा। हनुमत देखि न रही संभारा ॥
सकल दैत्य बोले गुहराई। जो भल चहौ तो जाहु पराई ॥
इह वनचर रघुपतिकर धावन। दैत्य मारि मारयो जिन रावन ॥
हमहूँ वेहि अवसर रहे तहिया। रावण नाश कीन्ह इन जहिया ॥

बाद छुडाय जानकी आनी । ता दिनते हम शंका मानी ॥
हमरो कहा सत्य तुम जानहु । तेहिसन युद्ध कबहुँ जनि ठानहु ॥
दोहा-जैमिनि दुर्मति संतहरि, अस कवि दास कहंत ॥
राक्षस अवर तमकि कही,हम मारब हनुमंत॥८२॥
पवनतनय भारी बलवंता । दानव दलन विषम सामंता ॥
कृष्ण चरण दीरघ पुनि ग्रीवा । लंबोदर देखत बलसीवा ॥
जो विचलै अवरहि डरपावै । युद्धनिकट सो कबहुँ न आवै ॥
रावणकथा कहा जियधरहू । हमहि मिलहु भोजन नर करहू ॥
योजन लगि लगि स्तन प्राना । मारत पर्वत होहिं मशाना ॥
हनुमत पंथ वधब हम चोखे । जनि डराहु लंकाके धोखे ॥
रामचंद्र कर वड़ो प्रतापा । रावण गयउ जानकी शापा ॥
सैन तमीचर सन्मुख धाई । लंबस्तनी अगोचर आई ॥
जहँ लागे इस्तनकी चोटा । नर गज तुरँग धरणि महँ लोटा ॥
पंथै पंथ कहै सब कोई । रणमें कोउ न सन्मुख होई ॥
इस्तन धाय सबहिके लागा । कोउ परा कोउ रण तजि भागा ॥
जेहिजेहि दिशा दैत्यनी धावहिं । नर योधा रण चढन न पावहिं ॥
तेहि अवसर भीषम तब बोला । अर्जुन सुनियत महा अडोला ॥
दैत्य बकासुर तात हमारा । तहाँ तुम्हारे भाइन मारा ॥
तुमसन तात वैर अब लेऊँ । रुधिर मांस ब्रह्मराक्षस देऊँ ॥
अस कहि दैत्य बाण फटकारा । मुद्गर परशु द्रुमन असुरारा ॥
घायल भये बहुत रणधीरा । होनै लागि पंथतनु पीरा ॥
रथी सारथी भयउ मशाना । तेहि अवसर हनुमंत रिसाना ॥
लये लपेटि लँगूरहि जबही । धरणिमाहिं लै मारेसि सब्बही ॥
धजी धजी तनभो विनु प्राना । मुक्तकेश सब दैत्य डराना ॥
पर्वत कंदर माहिं लुकाहीं । भजै दैत्य दशहूं दिशि माहीं ॥
पंथहु बहुरि बात शर साजा । जूझेउ असुर दुखित भये राजा ॥
तब भीषम जिय शोच विचारी । माया युद्ध असुर विस्तारी ॥

चहुँदिशि मेघ उमाड़ि जनु आये । दामिनि दमकति नभमें धाये ॥
सिंह बाघ सबही घहराई । भये भयावन जानि न जाई ॥
बहु संचित भै सैन करेरा । बहु उत्पात दैत्य तहँवेरा ॥
तहाँ संत है निशिचर वैसा । गंगातीर महामुनि जैसा ॥
देखि धनंजय ऋषि अस्थाना । दारुण रणमाहि जीव डराना ॥
ऋषिकहँ अर्जुन वचन सुनावा । यहाँ कहव ऋषिको अस्थावा ॥
सुनहु पंथ मैं तुमसन कहऊँ । दैत्यनके डर वनमहँ रहऊँ ॥
हमरे संग तुमहुँ वन रहऊ । विद्या पढ़हु जवन सुख चहऊ ॥

अर्जुन उवाच ।

सो गुण तुम मोसन अनुसरहू । जेहि वल नाहिं दैत्यनसों डरहू ॥
दैत्य कहेउ करिये वनवासा । तो विद्या पावहु हम पासा ॥
बात कहत अनुमान विचारा । तेहि क्षण पंथ दैत्यकहँ मारा ॥
वधि भीषम निष्कंटक कीन्हा । कंचनरत्न सकल हरि लीन्हा ॥

दोहा–पुरुषोत्तम हरि कृपासे, भयो असुरकर भंग ॥
अर्जुन भये अनंद अति, आगे चलेउ तुरंग ॥ ८३ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि मणिपुरप्रवेशनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

जैमिनिरुवाच ।

प्रणवौं हरि दयालुके चरना । महाकृपालु अखंडित वरना ॥
त्र्यंबकपुरी हरी परसादा । पायउ राम नामकर स्वादा ॥
करुणासागर करुणा कियऊ । वरणों जहाँ तुरंगम गयऊ ॥
मणिपुर नगर मनोहर वेशा । बभ्रुवाह तहाँ रहै नरेशा ॥
सत्यवन्त मानुष तनुधारी । पतिव्रता व्रत बन्धन नारी ॥
वेदशास्त्र भगवन्त वखानहिं । वसहिं विप्र जे रामहिं जानहिं ॥
महापुरुष जे अवरौं रहईं । इंद्रियाजित परदार न चहईं ॥
महाकाय सब वीर असूझा । दैत्य संग माँगहि नित जूझा ॥
कंचनरत्न देहिं बहु दाना । तृणवर लेखहिं रणमाहिं प्राना ॥

दानयुद्ध महँ कबहुँ न डोलहिं। सब पंडित सुकृतसन बोलहिं॥
रत्नजटित सब कनकपगारा। सुखी सबै नित मंगलचारा॥
राम प्रसाद भक्ति परछंदा। दूसर जन वैकुंठ अनन्दा॥
कल्पवृक्ष अमरावति संगा। तहँ पुनि पहुँचेउ यज्ञ तुरंगा॥
हंसध्वज कहँ पंथ पुछायहु। अब हम कवन देशकहँ आयहु॥
कह कारण हंसध्वज वीरा। सावधान है सुनु रणधीरा॥
मणिपुर नृप बभ्रु है नाऊ। जेहिकी मैं वंदीनि तर हाऊ॥
शकट सहस्र रत्न लै आऊ। बसन देश अपने तब पाऊ॥
जवैन वर्ष कनक नाहिं पावै। तो नृप हमसन देश छुड़ावै॥
निशिदिन हरिहर करहि बखाना। नाम सुबुद्धि महापरधाना॥
यहिकर क्रोध सहै नहिं कोई। तबही कुशल यज्ञ जब होई॥
जब यह पकरै तुरंग तुम्हारा। होय दुःख जिय करहु विचारा॥
पंथ कहै सुन केतु मराला। यत्न करै नहिं करउ गोपाला॥
यत्न करै अश्वमेध नशाई। होव सोई जो विधिकहँ भाई॥
वचन कहत सबही जिय जाना। पंथ शीशपर गृध्र उड़ाना॥
सब चकृत ह्वै कराहिं विचारा। ह्वैहै मृत्यु नाहिं संभारा॥
सो होउब जो रजा गुसाईं। भति कोउ सोच करौ मन भाई॥
दोहा–योधा सब सम्मानि करैं, कहै कविदास विचार॥
सेवक लीन्ह तुरंग धरि, नृपसन कीन्ह गुहार॥८४॥
इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि मणिपुरआगमनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः॥२४॥

जैमिनि कहै नगर हय आवा। देखन सबै छोट बड़ धावा॥
मिलकै बीर तुरँग सब धरो। हय अस नाहिं पृथिवी अवतरो॥
कनक पत्र अस लिखा लिलारा। वसुधन अर्जुन है रखवारा॥
यज्ञतुरंग युधिष्ठिर केरा। छाँडि दीन्ह पुहुमी चहुँफेरा॥
वीर सहस मिलि एकै संगा। जहाँ नृपति तहँ आनि तुरंगा॥
निशिनृपसभा सिंहासन बैसा। आवा तुरंग चन्द्रमा जैसा॥

चन्दन चार्चित महासुहावा। चहुँदिशि मणि मुक्ता निरमावा॥
कंचन रत्न जटित पटसारा। सभा विचित्र वरणे को पारा॥
तेहि थल तुरंग सवन गहिआना। खम्भ सहस दश कनक प्रमाना॥
नानावर्ण सभा परकाशा। देखतही पूजै सब आशा॥
हंस मयूर परेवहि सारी। कोकिल शुक मृगराज प्रचारी॥
रत्नजटित खग गुणिन बनाये। जनकसजीव शरीर रचाये॥
उत कंचनके नाना खंबा। जो जैसा तैसेहि अवलम्बा॥
गज तुरंग सब गढ़ि बनवाई। जाति जीव बिनु पंख उड़ाई॥
भृंग भृगी पुनि जिय बहु भेखा। सुन्दर सब कंचनमणिरेखा॥
हरितमणिन पटसार बनावा। जानौ मानसरोदक आवा॥
मीन ग्राह जल भुप्त जु जीवा। रत्नजटित जनु अहै सजीवा॥
कंचन रत्न दिव्य चहुँ पासा। मानहु सूरज कोटि प्रकासा॥
मणिजल कमल कुंद कस देखा। मानहु स्वर्ग चन्द्रमा लेखा॥
कस्तूरी कुमकुमा कपूरा। पोतत गंध गगनलग जूरा॥
अर्गज रहै सदा चहुँ फेरा। देव विमानन होत सँभेरा॥
वर्णा सब संसादित चरना। सुनि जन्मेजय जस कछु वरना॥
सभा विचित्र वरणि नहिं जाई। सुर नर नाग रहे तहँ छाई॥
तेहि मधि तुरँग कीन्ह लै ठाढा। मानों चंद्रबिंबते काढ़ा॥
मूर्च्छित चकित सभाके लोगा। कहहिं तुरंगम राजहि योगा॥
राजा कह कहाँ तुम पावा। ऐसा हय इह देश न आवा॥
बाँचि पत्र पुनि सबहि सुनावा। सुनतहि राजा शीश डुलावा॥
युद्ध लालसा पूजति आजू। लैबे सब वीरनकर साजू॥
अर्जुन नाम सुनत सुख लागा। देखिथै चरण होइ बड़ भागा॥
हारिही अर्जुन पिता हमारा। मोहि जननी सब कहँ व्यवहारा॥
तीरथ यात्रा आये जहाँ। चित्रांगदा व्याही पुनि तहाँ॥
तब मोहि विधि दीन्हों गर्भवासा। पुनि मैं गयउँ युधिष्ठिर पासा॥
मोकहँराज बहुत विधि दीन्हा। कह सुबुद्धि अब सुतकर चीन्हा॥

दोहा–जो मैं चरण गहौं तौ, क्षत्रिय धर्म नशाय॥
पुरुषोत्तम कहै पितासन,युद्ध करो नहिं जाय॥८९॥
राजहिं मति संकट लखि भारी। तब सुबुद्धिने गिरा उचारी॥
सुनि नृप जीव करै मति भरमा। पिता पुत्रकर सुनहु जु धरमा॥
पिता सुकृत अरु पिता गोपाला। पिता करै शिशुते प्रतिपाला॥
पितुकर नाम जगावै कोई। कोटि यज्ञ तीरथ फल होई॥
जे सुत तात करहिं मन भंगा। हत्या कोटि चढ़ै तेहि अंगा॥
सुनु राजा तैं वचन हमारा। जो अर्जुन है पिता तुम्हारा॥
लेहु तुरंग गहौ चलि चरणा। बैठहु जाय पंथकी शरणा॥
उन्हेंहि लाय मणिपुर पधरावहु। तुम तुरंगके गुहनै धावहु॥
भयो युद्ध अर्जुन है हारा। यह जु मंत्र तुम सुनहु हमारा॥
मणिपुर पंथ करहिं अब राजू। तुम नृप करहु मिलनकर साजू॥
मंत्री मंत्र कहा समझाई। मिले तातसन होइ बड़ाई॥
राजा मंत्र सुना जब काना। मिलन मंत्र पुनि मनमहँ ठाना॥
नृप पुनि सब कहँ आज्ञा दीन्ही। नगर निवासिन शिरधरि लीन्ही॥
निज निज धर्म द्रव्य सब लेहू। अर्जुनकी न्यवछावरि देहू॥
हमरे है भंडार धनु जेता। सहित पाटंबर पठऊँ तेता॥
यज्ञ तुरंग लीन्ह कर आगे। वेद ध्वनि द्विज करन सुलागे॥
पुरके लोग करहिं सब साजू। पंथ चरण देखहिं हम आजू॥
चंदन बहु कपूर कस्तूरी। सुगँध अरगजा रहि भरिपूरी॥
शकट आदि लिय पुनि भंडारा। माते हस्ती चले सवारा॥
चहुँ दिशि बाजन बहु विधि बाजा। नर नारी सब मंगल साजा॥
नगर नारि सब करहिं अनंदा। पहुँचे तहँ जहँ पांडव नंदा॥
अगर धूप शोभित वरनारी। दधि दूर्वा अरु कंचन थारी॥
प्रद्युमन यौवनाश्व रणधीरा। शल्य दैत्य नीलध्वज वीरा॥
वृषभध्वज हंसध्वज जहाँ। गजते उतरेउ पंथज तहाँ॥
द्वारपास पहुँचे सब वीरा। पैदर उतरि चले रणधीरा॥

नव निधि भेट रत्न भंडारा । पंथके चरण केश सनुडारा ॥
पुष्प वृष्टि मुक्ताहल लावा । वर्षहिं सुंदरि हरि यश गावा ॥
बभ्रुवाहन वन्दन कीन्हा । धन असंख्य न्योछावरि दीन्हा ॥
पुनि तेहि कुमर कही असि वाता । होहु कृपालु पंथमो ताता ॥
तीरथ यात्रा आये जाहिया । द्वै विवाह कीनेउ मत तहिया ॥
उलुपी नागसुता जो कीन्ही । चित्रांगदा गंधर्वन दीन्ही ॥
ताहते जन्म भयो है मोरा । नाम बभ्रुवाहन सुत तोरा ॥
गयउ वीर मोहि ताजि आधाना । अवरो मर्म कछू नाहिं जाना ॥
अनजाने मैं गहेउँ तुरंगा । क्षमा करहु राखहु मोहि संगा ॥
पुनि पुनि कुमर रेणु शिर लीन्हा । अर्जुनवीर सभा नाहिं दीन्हा ॥
कृष्णतनय वीरन कहि वाता । कस यह तनय कहौ कस ताता ॥
हित बोलहु संभाषण देहू । करगहि सुतहि अंकमें लेहू ॥
सुतका नाम सुना जब काना । अर्जुनवीर बहुत रिसिआना ॥
मारेसि लात कनककर थारा । बभ्रुवाहके लागि लिलारा ॥
पुनि उरमाँझ मारि एक लाता । पंथ रिसाय कही असि वाता ॥
बभ्रुवाह नाहिं पुत्र हमारा । जीवकुंद अरु नटिनि कुमारा ॥
लाज गमाई इह परसंगा । विन जूझे लै मिलेउ तुरंगा ॥
नाहिं घायल तव भयउ शरीरा । नहिं रणमाँझ सही बड़ि पीरा ॥
पुत्र हमार अहै अहवरना । विमुखकीन्ह भीषम गुरु करना ॥
पुत्र सुभद्रा कर हरहीता । चक्रव्यूह सवही रणजीता ॥
दीन्हे प्राण युधिष्ठिर लागी । तू जंबुक जा होउ अभागी ॥
तोर जन्म जंबू झष सर्पा । क्षत्रियधर्म गँवायो सर्वा ॥
छोड आजुते निज धनु वाना । हो नट नटिनि नचाउ प्रमाना ॥
लोव मेरु होजे चित्रधारी । बाँधि मृदंग जाहु चित्रसारी ॥
पतुरिनके पाछे पुनि धावहु । राजन आगे नृत्य करावहु ॥
जैमिनि कहै जु लिखा लिलारा । मिटै न जो कछु होनेहारा ॥

मार गारि अर्जुनकी सही । क्रोधित है बभ्रु पुनि कही ॥
सबै सही शिर ऊपर मारी । नहिं विसरति जननीकी गारी ॥

बभ्रुवाहन उवाच ।

अल्पबुद्धि पितु कछु न विचारा । मैं करिहौं सबकर संहारा ॥
पौरुष आजु देखियो मोरा । वीरन वधौं लहौं शिर तोरा ॥
विप्र महाजन अरु परनारी । सबको विदा कीन्ह संभारी ॥
मंत्रि सुबुद्धि मोर गृह जाहू । करेहु सुकृत जनि जीव डराहू ॥
यह कहि बभ्रूवाहन राजा । बजा निशान कीन्ह रणसाजा ॥
शूरवीर सेनापति आये । कालरूप जनु अंबर छाये ॥
कंचनरत्न जटित कर थारा । बाजि निशान चढे दलभारा ॥
सातक कोटि वीर असवारा । अद्भुत हस्तिन पाखरि धारा ॥
चित्रांगदा सुवन रण गाढ़ा । अर्जुन सैन रोकिभा ठाढ़ा ॥
गज तुरंग चहुँदिशि हि हिनाहीं । सिंहनाद गर्जेउ रणमाहीं ॥
दिव्य कनकरथ चढ़ि रणधीरा । सबै प्रचारत है बड़वीरा ॥
गहेउ अस्त्र त्रिभुवनकर मोला । ध्वजा मयूर असूझ अड़ोला ॥
शत किंकिणिरथ हो झनकारा । मानहु इंद्र भये असवारा ॥

दोहा—पुरुषोत्तम जन वर्णही, गहि धनु शर कर आज॥
पिता नाम तै छाँडऊ, कोदहुँ राखै साज॥ ८६ ॥

तमरत कसकत बभ्रू आयो । इत रण शल्याहि पंथ पठायो ॥
नवशर साजि कीन्ह संधाना । बभ्रुवाह काटे सब बाना ॥
पुनि सौ बाण पंथसुत मेला । काटिसि बाण कीन्ह रण पेला ॥
तब नाराच दैत्य गहि धावा । मानहु काल वज्रगहि आवा ॥
पुनि सौ बाण कुमर फटकारा । छीनि नराच धरणि दै मारा ॥
पुनि दानव रण उठा रिसाई । मेलेउ बाण चढा रथ आई ॥
दानव रुधिर प्रवाह विशेखा । जनु वसंत टेसू वन देखा ॥
जस वारिद वर्षै अप्रमाना । छाय रहे दोनोंके बाना ॥
बभ्रुवाह पुनि बाण सँभारा । रथ सारथि सब कीन्ह सँहारा ॥

चढ्यो आन रथ यादव बीरा । कीन्ह विरथ पंथज रणधीरा ॥
पुनि सहस्र छोडे निज बाना । छीने कुमर चढेउ रथ आना ॥
पुनि दानव कर गदा सँभारा । सारथि रथ पुनि कीन्ह प्रहारा ॥
पुनि पंथज शर विषम सँधाना । मूर्छित दानव लागत बाना ॥
शल्यदैत्य धरणीमहँ परे । तब प्रद्युम्न कुमर रिस भरे ॥
तिष्ठ तिष्ठ इत बोलसि आई । अबन जियत घर जैहौ भाई ॥
कंचन फोंक गहे कर बाना । मारत बभ्रुवाह भल जाना ॥
पंथतनय क्रोधित ह्वै धावा । बाण सहसदश छाँडत आवा ॥
रथी सारथी सही न धीरा । मारत बाण भई तनु पीरा ॥
तुम तो काम कामिनी संगा । तपस्विनके गहि लागहु अंगा ॥
बहुरि प्रद्युमन कुमर रिसाना । रणमहि छाँड़िउ मोहन बाना ॥
मोहे सब गज रथ औ बीरा । काहू चेत न रहेउ शरीरा ॥
प्रलयबाण गज कुंभ विदारी । रथ सारथी कौं द्वै फारी ॥
बभ्रुवाहके बाण प्रचंडा । गज तुरंग रथ भे शत खंडा ॥
जूझ परस्पर भयो अपारा । भा मशान कोउ नाहिं सँभारा ॥
उभय अजीत महाभुजदंडा । दोनौं बीर महापरचंडा ॥
जैसे वन काटिये कुठारा । दोनों अनी महाबारिआरा ॥
गजकुंभन मुक्ता बिथुरावा । तारा गगन टूटि जनु आवा ॥
अस दोउन कीन्हों संग्रामा । गजशिर टूटि धरणिधरधामा ॥
नर शिर गूंदि काटि शिरपरही । रुधिर सानि कर मदिरा करही ॥
युद्ध मशान वरणि नहिं जाई । माथन खेल खेलि सब धाई ॥
चौंसठि योगिनि मनभावंता । नाचहिं माथ लीन्ह कर दंता ॥
नाचति त्रिया लीन्ह कर माथा । यंत्र बजाय बजावति हाथा ॥
इत शिर लै बेताल बहूता । इमि खेलैं जस जमके दूता ॥
भूत पिशाच बहुत कंकाला । करभ कबंध करहिं जयमाला ॥
नरशिर क्षुद्रघंटिका संडा । हस्तिशुंडकर दंड प्रचंडा ॥
पंजर शर मदिराकर जंका । शूरवीर देखिय अतिबंका ॥

गावहिं नाचहिं योगिनि नाना। कंध कबंध देहिं बहु दाना॥
प्रद्युमन कुमर वीर इमिमारा। जस द्रुम काटि काटि कोउ डारा॥
रक्तनदी तहँ केशसिवारा। डूबहिं गज नहिं पावहिं पारा॥

दोहा–दैत्य सबै तहँ डूबहीं, मानुष केतिक बात॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, मानहु पवि आघात॥८७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि प्रद्युम्नयुद्धवर्णनं नाम पंचविंशोऽध्यायः॥ २५॥

कह जैमिनि जनमेजय राजा। सुनु अब रक्तनदीकर साजा॥
अश्व चरण मानुषकर माथा। जलक्रीडा खेलहिं एकसाथा॥
कंध कबंध धार भर धारा। रक्तनदीकर ऊंच करारा॥
योगिन नृत्य बहुत विधि करहीं। धाय वेताल बेतालहि भिरहीं॥
वारपार कछु जानि न जाई। बहुविधि प्रद्युमन कीन्ह लराई॥
कृष्णतनयकर रथ शर झंपी। मारेसि रथ मेदिनि सब कंपी॥
बहुरि आन रथ चढ़ेउ कुमारा। बभ्रुवाह तब कीन्ह प्रहारा॥
अर्जुननंदन महा अपेला। काट्यो रथ कीन्हेसि शरझेला॥
एकहि संग भये असवारा। मूर्छि परे सारथी कुमारा॥
पुनि प्रद्युम्न रण उठा रिसाई। अर्जुन सुत कहँ गगन उड़ाई॥
दोनों गगन उड़े पुनि धरनी। करहिं उभय अति अद्भुत करनी॥
कृष्णतनय कहँ पुनि रिसि लागी। मारेसि वीर भूमि भयभागी॥
तमकि उठेउ पुनि पंथकुमारा। प्रदुमन कहँ धरणी दे मारा॥
उठि प्रद्युम्न गदा कर लीन्हा। घाउ पार्थनंदन शिर कीन्हा॥
अर्जुनतनय महा परचंडा। बाणगदा कीन्हे शतखंडा॥
पंडित उभय उभय रणधीरा। दोनों गगनगामि अतिवीरा॥
उभय पराहिं धरती संघाता। जनु टूटहिं पर्वत आघाता॥
एक एक कर रथ जो मारा। तत्क्षण दोउ होहिं असवारा॥
दोनों बरसहिं बाण अपारा। मानहु मेघ अखंडित धारा॥
भाजेउ कटक भयउ बिन माना। मानहु द्रुमशाखा बिगराना॥

अंतहि चरण अंतशिर पारे । दोनों अनी दुहुँन संहारे ॥
दोउ घाय उर वाण विशेषहिं । जस शय्या कामिनी सुरेषहिं ॥
दोहा–एक हरिसुत एक पार्थसुत, दोनों रण बरियार ॥
पुरुषोत्तम तज व्याससुनि, कोउ न पावै पार॥ ८८ ॥
दोनों अनी परे जित योधा । एक एक पर पावन शोधा ॥
कोउ कर गदा शक्ति कर लीन्हे । कोउ करवर त्रिशूल कर छीन्हे ॥
शुंडि भुशुंडि परशु है हाथा । तोमर सहित परे विनु माथा ॥
मुद्गर भिंडि शक्ति कर लीन्हे । अगणित परे जाइ नहिं चीन्हे ॥
दंती घंट जु परे अनेका । रणमाहि गर्जत पंथज एका ॥
दारुक देखि अग्नि जिमि धावै । तैसे पंथज रणमहि आवै ॥
मूर्च्छा तजि अनुशल्य रिसाना । पुनि तेहि आइ कीन्ह संधाना ॥
प्रद्युमनसंग नीलध्वज राजा । यौवनाश्व जे रणमहि साजा ॥
मेघवर्ण हंसध्वज राजा । सात्यकि कृतवर्मा रण साजा ॥
पंथ सहित योधा रिसिआना । एकहि वार कीन्ह संधाना ॥
पंच वाण सवही फटकारा । बभ्रुवाह छाती सब मारा॥
अर्जुननन्दन कोपेउ जवहीं । सौ सौ वाण मारि पुनि सबही ॥
कोउ विनु छत्र विरथ ह्वै गयऊ । कोउ विनु धनुष अचेतनि भयऊ ॥
कोउ विनु मुकुट परे रणमाहा । कोउ जलपान चहै द्रुमछाहा ॥
कोउ धावत कोउ भ्रमत अचेता । कोउ पराय धावत रणखेता ॥
दिव्य विमानन कीन्हीं छाहीं । अद्भुत कथा भई रणमाहीं ॥
सुरकन्या गावति सब आवहिं । शूरन जयमाला पहरावहिं ॥
चर्चहिं चन्दन चढ़ी विमाना । आपुहि आपुन झगरा ठाना ॥
एकहि इक लै जाइ छिनाई । एक ले जाहिं विमान चढ़ाई ॥
अन्तरिक्ष बड़ कौतुक होई । सुरमशान चीन्हैं नाहिं कोई ॥
इह आशंका जियमहँ धारी । पिता पुत्र अस कतहुँ न भारी ॥
सब मोहे देखत वरनारी । बभ्रुवाह किय दारुण मारी ॥
तर मशान ऊपर गंधर्वा । छाँड़ि युद्ध मोहे नर सर्वा ॥

देखत कौतुक शूर भुलाना। पंथ न पावै देव विमाना॥
कर कबंध लै भूत बेताला। शूरन मूसहि नयन विशाला॥
पंथज गज तुरंग लै धावा। सुर नर मुनि सब देखन आवा॥
प्रदुम्नसहित अहैं सब वीरा। सबके भेदे वाण शरीरा॥
दोहा–अस कोउ भयो न पूर्व पुनि, आगे कोउ न होय॥
कह कवि अर्जुनपुत्र सम, उपमा वीर न कोय॥८९॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि बभ्रुवाहनविजयो नाम षड्विंशो-
ऽध्यायः॥ २६॥

जन्मेजय सुनिये. चितलाई। जैमिनि अद्भुत कथा सुनाई॥
इहि आशंका जियमहँ धरयो। अस कहुँ पिता पुत्र नहिं करयो॥
बभ्रूवाहन किय संग्रामा। कुशलवयुद्ध कियो जस रामा॥
कहहु चरित्र राम कुश केरा। बभ्रुवाह. रण पंथ गेरा॥
यह सुनि जन्मेजय हठ करही। शीश ऋषियके चरणन धरही॥
जो मुनि नाथ मोर हित चहहू। रामचरित्र अवशि तुम कहहू॥

जैमिनिरुवाच।

आदि महाप्रभु श्रीभगवंता। ब्रह्मादिक जानहिं नहिं अंता॥
अल्पबुद्धि कहा करौं बखाना। मन क्रम वचन न जानहुँ आना॥
भयो प्रसन्न दासहितकारी। बहुरो रामकथा अनुसारी॥
जैमिनि बोले उत्तम बानी। कुश लव चरित हिये निज आनी॥
दीनदयालु जवन मति दीन्हा। रामकथा भाषा कछु कीन्हा॥
प्रजापती षोड्श सतवीशा। पावसऋतु वसंत चहुँ दीशा॥
सातक मोर कहहिं गुण यादव। प्रतिपद कृष्णपक्ष भरि भादव॥
हरिपद पंकज कहँ मन राखा। तेहि दिन कीन्ह कथारस भाखा॥
त्रेता रामचन्द्र अवतारा। द्वापर अश्वमेध विस्तारा॥
जैमिनि ऋषिय कहै मनबूझी। अर्जुन बभ्रुवाह कर जूझी॥
मणिपुर युद्ध भयानक भयऊ। जिमि रघुनन्दन औ कुश कियऊ॥

यह सुनि जन्मेजय हठ कीना । यह संवाद अधिक रस भीना ॥
पिता पुत्र नाहिं भई चिन्हाई । लव कुश युद्ध कीन्ह रघुराई ॥
मम मन लागति अति विपरीता । कैसे राम तजी पुनि सीता ॥
प्राणहुते अति प्रिय जेहि भावहु । जैमिनि रामकथा समझावहु ॥
जे नर राम कहैं चितलाई । युग युग सो वैकुंठ बसाई ॥
पतित पवित्र राम गुण ग्रामा । रामकल्प दीन्हेउ विश्रामा ॥
रामनाम रसना जो कहई । जन्म जन्मके पातक दहई ॥
राम दयानिधि पंकज चरणा । तीनों भुवन रामकी शरना ॥

दोहा–अक्षर और न जानहूँ, रामचरित्र समान ॥
हरिप्रसादतेलघुमतिकछु, कहै कविदासबखान॥९०॥

सुनु राजा भुज महा प्रचंडा । रामचरित्र कोटि शतखंडा ॥
साधु साधु पांडवकुल राजा । विस्तरसहित कथा सुनि साजा ॥
रामचंद्र रावण जब मारा । कुंभकर्ण घननाद सँहारा ॥
और सकल सुत राक्षस रहेऊ । मारे सबै कनकपुर दहेऊ ॥
सुर नर नाग असुर किय शंका । लोह वर्ण कीन्हों गढ लंका ॥
सब देवनकी बंदि छुड़ाई । लेकर शपथ सिया बुलवाई ॥
लंकाराज्य विभीषण दीन्हा । वहो चढाय विमानहिं लीन्हा ॥
नृप सुग्रीव संग बड़ राजा । अंगद बैठाये करि साजा ॥
जाम्बवन्त हनुमन्त प्रचंडा । चाढ़ि विमान चितवहिं चहुखंडा ॥
अवरौ सब शाखामृग योधा । चढ़े विमान सिंधु जिन शोधा ॥
रामभक्त वत्सलकर चीन्हा । जस आपन तस सेवक कीन्हा ॥
चढ़ि विमान सब अद्भुत देखा । आये जन्मभूमिकी रेखा ॥
कौशलदेश अयोध्या बसई । रामपुरी जहँ काल न धसई ॥
अमृतजल विशिष्ट जहँ वहँहीं । राम विमान विलम्बेउ तहँहीं ॥
सुनतहि सब सन्मुख है धाये । जैसे मृतकप्राण फिरि आये ॥
उदित चन्द्र जनु पाव चकोरा । सबै अनंदित वृद्ध किशोरा ॥
जैसे अति निर्धन धन पावहिं । घर बाहर सब मंगल गावहिं ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन चातक, स्वाति सलिल रघुवीर ॥
रामनाम रसना जपि, हृदय बँधत अति धीर॥ ९३ ॥

आवत राम भयो आनंदा। नर नारिन मेटे दुखफंदा ॥
गुरु वसिष्ठ जे मुनिवर आये। करत वेदध्वनि महासुहाये ॥
हरि विरही तपस्वी सब वीरा। उनहि देखि उतरे रघुवीरा ॥
पृथक पृथक तहँ कीन्ह प्रणामा। तुम प्रसाद जीतेउ संग्रामा ॥
जानकि शेष गहे मुनि चरना। कहसि हमहिं रामहिकी शरना ॥
राजिवलोचन राम सुरेखा। कौशिल केकि सुमित्रहि देखा ॥
गहे चरण विनती अब धारी। धन्य धन्य कैकय महतारी ॥
तुम जननी दुख करहु न जीमा। हमको तुम दीनी सुखसीमा ॥
रावण तुमरे वचन निपाता। भरत शत्रुहन जीवहिं ताता ॥
टेकेउ चरण सहित जहँ सीता। अस्तुति करि कीन्हेउ अतिहीता ॥
तीनो जननि आय एक संगा। सीता पगु टेकेउ दुख भंगा ॥
दुखित जहाँ कौशल्या माई। चरण परे रघुनन्दन जाई ॥
करि प्रणपत्य कही प्रभु बाता। मैं सेवा करिहौं अब माता ॥
रुदन करत जननी नित रहई। रामदरश तजि आन न चहई ॥
बिछुरे राम महातनु छीना। दशरथ शोक भई अति दीना ॥
देखे कमलनयन रघुनन्दा। जिमि चकोर पायउ प्रिय चंदा ॥
भेटि राम लीन्हे उरलाई। मानौ रंक नवै निधि पाई ॥
पावा मीन भरा जनु नीरा। भेटत परेउ अश्रुकी भीरा ॥
टूटि पराहिं गज मुक्तन हारा। निश्वसत प्राण भयउ तनुधारा ॥
अंधरे जनु लोचन परकासा। रघुकुल मिलेउ भई मन आसा ॥

दोहा–बिछुरन पीरन पीरसों, जानइ बिछुरा होय ॥
पुरुषोत्तम जननी जस, तैसा और न कोय॥९२॥

पुनि रघुनन्दन आये तहँवा। विस्मय सहित कैकयी जहँवा ॥
मुनिन सकल समुझाई माता। तुमकहँ सन्मुख भयउ विधाता ॥
लंका जीति आये रघुनाथा। नृप योधा अगणित हैं साथा ॥

छाँड़ि शोक जिय करहु हुलासा । कह कवि श्रीपुरुषोत्तमदासा ॥
पुनि कैकयी भरत समझावा । छाँड़ि शोक जिय करः बधावा ॥
टेके चरण कमल मनलाई । चूमि बदन पूँछी कुशलाई ॥
चितवन लागी शुभ्र शरीरा । दारुणशर कीन्हीं बहुपीरा ॥
यह सुनि वचन वसिष्ठ बुझावा । तनु अभेद्य भेदन को पावा ॥
रामचंद्रके बाण अपेला । प्रलय कालमें रहैं अकेला ॥
यह सुनि जिय आनंदित भयऊ । मानो राम वनहिं नहिं गयऊ ॥
लछमन कहा भेद मैं दासा । रावण लागि भयउ बनवासा ॥
सीता चरण रही लपिटाई । चूमि वदन तिहि अंकम लाई ॥
कौशल्या कीन्हेउ मनधीरा । दीन्ह अशीश जियहु रघुवीरा ॥
मिलत परस्पर सब पगवंदा । नर नारी घर घर आनंदा ॥
भायन सहित महा सुख भयऊ । राम राज्य अवधहि तब लयऊ ॥
वन वन फिरि गिरि कंचन भारा । धरती उपजै अन्न अपारा ॥
जब चाँहें तब घन वरसाहीं । निरखत राम सकल अघ जाही ॥
प्रजा अनंद करै सब कोई । मग्न वेदध्वनि घर घर होई ॥
नितप्रति सुनिये वेद पुराना । कोइ न दुखिया सबै अघाना ॥
सुरभी देहिं बहुत विधि क्षीरा । कबहूँ रोग करै नहिं पीरा ॥

दोहा-इहविधि राज्य अयोध्या, तीनि भुवन आनंद ॥
पुरुषोत्तम जनचातक, स्वातिसलिल रघुचन्द ॥९३॥

जनकर यज्ञ करै बहु भाँती । होहि अनंद दिवस अरु राती ॥
सरयू वह जह अमृत नीरा । कंचन बालू तेहिके तीरा ॥
सब घर कंचन केर पगारा । घन पुनि वर्षहि कंचन धारा ॥
चहुँ दिशि रटैं रामकर नामा । पथिकनके मन अति विश्रामा ॥
इच्छा भोजन सबहि जिमावहिं । चढि चढि तुला हेम लुटवावहिं ॥
दिन दिन सबै हेतु अनुसरई । कोउ काहूकर द्रोह न करई ॥
सुरभी बाघ एक सँग रहहीं । सिंह गयंद प्रीति अति करहीं ॥

व्याल नकुल मत करहि सुचीता। उंदरकर मंजार सुहीता॥
राम राज्य वर्णै को पारा। दिनकर उगेउ गयउ तम भारा॥
पतिव्रता सुतवंती नारी। सब पद्मिनि युवती अरु बारी॥
जैमिनि कहै सुनहु नृपधीरा। इह विधि राज्य करहिं रघुवीरा॥
वसत संत जे मति नाहिं दूरी। जेहि घट राम रहे भरिपूरी॥
संतनहित लीला विस्तारा। ह्वै नरदेह सबै निस्तारा॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम सप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

नव सहस्र संवत तब इमिगये। राजा राम निष्कंटक भये॥
संवत नवसहस्र जब बीता। भा आधान महासति सीता॥
राघव बूझै विप्र बुलाई। कहौ लग्न हमसों समझाई॥
तब जु मुनीश्वर धरी विचारी। बात रामसों कहहिं सम्हारी॥
अभिजित निशिचर लग्न प्रवेशा। मातहि जानि परै परदेशा॥
भयउ गर्भ जब पंचममासा। राघव देखा स्वप्न निरासा॥
करति विलाप गंगके तीरा। देखउ सीतहि लोचन नीरा॥
लछमन मनहुँ छाँड़ि वन आयउ। जागत रघुनंदन दुख पायउ॥
प्रातहि समय राम उठि जागे। गुरु वशिष्ठके चरणन लागे॥
विह्वल वदन जीव दुख माना। सोचत बोलेउ वचन प्रमाना॥
निशि स्वप्ने मैं देखी सीता। रोवति गंगातट विपरीता॥
ऋषिन सवन विधि एक बनाई। गर्भ शांति लगि दान दिवाई॥

वसिष्ठ उवाच।

सुनु राजा भुज महा विशाला। हमरे वचन करहु प्रतिपाला॥
ऋषिके वचन सुनत सुठि भायउ। तुरतहि लछमन वीर बुलायउ॥
गवनहु जनक नृपति कहँ आनहु। पंचाभि शुक्लपक्ष जिय जानहु॥
विश्वामित्र हि लेहु बुलाई। गाढ़े दिन कहँ तुमहौ भाई॥
रघुपति चरण नाय शिरशेशा। गये तुरंत जनकके देशा॥
जाय जनकसों विनयी सेवा। तुम रघुनाथ बुलाये देवा॥
कही बात जनकाहि समझाई। शेष ऋषीश्वर वंदे जाई॥

रघुनंदनजू यज्ञ उपाया । हम पठये तुमहित ऋषिराया ॥
सुनतहि बात बहुत सुख भये । शेष ऋषीश्वर साथहि गये ॥
जनक समाज बहुत विधि लीन्हा । चढ़ि रथ वेग गमन नृप कीन्हा ॥
इहाँ वसिष्ठ यज्ञ बनवावा । मंडप योजन इक में छावा ॥
पुनि वसिष्ठ वेदी बनवाई । मख सामग्री सबै मँगाई ॥
दूब कुसुम अरु जूही माला । उंदर बनफल कर बनमाला ॥
सब संकल्प कीन्ह लै दर्भा । कहै ऋषी कुशक हो गर्भा ॥
आहुति देत न लागी बारा । तेहि छिन लछमन आये द्वारा ॥
विश्वामित्र जनक सँग आये । रामचंद्र कहँ कहि पठवाये ॥
करि प्रणाम प्रभु जनक सँभारा । कहि न जाय कछु प्रीति अपारा ॥
पुनि श्रीराम परमसुख पायउ । सादर प्रभु ऋषि चरण धुवायउ ॥
सेवा अर्घ्य दीन्ह मनजानी । विश्वामित्र महाऋषि मानी ॥

दोहा—नीकी भाँतिन जनकको, समाधान तब कीन्ह ॥
गुरुवसिष्ठ पुरुषोत्तम, कर्म करै तब लीन्ह ॥ ९४ ॥

पंच सुवासिन मंगल गाये । सीता सहित राम अन्हवाये ॥
करि मंजन मंडप प्रभु धरई । नीकी मुनि वेदध्वनि करई ॥
चंदन चौक दंपती ऐसे । लक्ष्मीनारायण प्रभु जैसे ॥
ऋषि वसिष्ठ वेदी बनवाई । आहुति तिल घृत सानि दिवाई ॥
वेदी आनि नवौ निधि धरई । करि अभिषेक शुद्ध जल भरई ॥
पूरण आहुति मंत्र जु दीन्हा । भा आनंद नवौ निधि कीन्हा ॥
भा अभिषेक सबन मन माना । लषण शत्रुहन दीन्हेउ दाना ॥
अंबर पाटंबर बहु भेसा । देवन लागे प्रभु अरु शेसा ॥
देत अर्घ्य मंदिर पठवाये । तुरत राम वेदीतर आये ॥
सबकर चरण वन्दि मनमाना । देवन लागे बहुविधि दाना ॥
सबको विदा कीन्ह प्रभु चोषा । गुरुवसिष्ठकर कीन्ह सँतोषा ॥
निःकंटक राज्य जनककहँ दीन्हा । विश्वामित्र जनक सँग लीन्हा ॥
वनवासी मुनि बनहिं सिधावे । राम राज्य सबही मन भाये ॥

भाइन सहित लषण पुनि हीता । करत अनंद राम अरु सीता ॥
एक रैनि सोवहिं चित्रसारी । राम सियाकी सुरति समारी ॥
जो जिय होइ करहु जनि बाधा । कहौ सिया पुरवौं मैं साधा ॥
यह सुनि वचन जानकी बोली । रामनाम मैं रटौं अडोली ॥
तुम प्रसाद पूरण मैं अहऊँ । इच्छा एक सुनहु प्रभु कहऊँ ॥
कबहुक गई गंग अस्नाना । ऋषिपत्नी तहँ रहहिं निदाना ॥
देखि सिया मन उपजी दाया । ऋषिपत्नी पकवान जिमाया ॥
उहै वचन सीताभन आनी । रामचंद्रसन विनती ठानी ॥
ऋषिपत्नी भागीरथि तीरा । दै पकवान उढ़ावौं चीरा ॥

दोहा--पुरुषोत्तमको भेटि है, जो विधि लिखा लिलार ॥
यहूलोक परलोकमें, रामहि नाम अधार ॥ ९५ ॥

रामचंद्र कहँ चिंता भयऊ । कवन साध सीता तुम कहेऊ ॥
दंडक वनहि रहचो वनवासा । वर्ष चतुर्दश रही उदासा ॥
पुरवौ इच्छा लोचननीरा । प्रात जाउ भागीरथि तीरा ॥
सुनत वचन चिंता जिय भयऊ । आये अनुचर देखन गयऊ ॥
पूँछी देवकथा रघुनंदा । कहौ गगन निर्मल कुलचंदा ॥
कहा सुनी कह भई अनैसी । उत्तम पोच कहौ तुम तैसी ॥
बोले दूत सुनौ रघुनंदा । सब कोउ अहै तुम्हारो बंदा ॥
पुनि पुनि पूँछी चरकहँ बाता । निर्मल सुयश सिया अरु भ्राता ॥
कहै दूत सुनिधो रघुवीरा । सुयश तुम्हार गंगको नीरा ॥
सुमिरत चरण पाप सब दहई । अधमो तरै राम जो कहई ॥
दूरि निवारि लोक अपवादा । एक वचन सुनि भयउ विषादा ॥
कहै राम जिनि मानहु शंका । कहौ बजाकर अहै कलंका ॥
अनुचरकी भय राम निवारी । बहुरौ राम कथा अनुसारी ॥
एक रजककी घरनी नारी । गइ अकेलि नैहर दिन चारी ॥
तात भ्रात तब उठे रिसाई । आये स्वामि समीप लिवाई ॥
देखत रजक बहुत रिसिआना । तुम मोहि रामचन्द्र करि जाना ॥

राक्षस मंदिर रही नियारी । सो राघव कीन्हीं घरबारी ॥
पुनि पुनि क्रोध करे हठ धरिवै । राम कीन्ह सो रामै करिवै ॥
उनकी बात कहै को पारा । इन बातन है नाश हमारा ॥
लोग बहुत बोले तब साखी । रजक नारि घरमें नहिं राखी ॥
रामचन्द्र तब सोच विचारा । कोउ न मेटै होनेहारा ॥
मूढ़ रजक कछु धर्म न ज्ञाना । ताकर कहा राम परधाना ॥

जैमिनिरुवाच ।

दोहा-दूत विदाकरि पठइये, अवगति गति को जान ॥
पुरुषोत्तम विधि जो लिखा, सोई होय प्रमान ॥९६॥

लंका वंदि महादुख गाढ़ी । पुनि हम अग्निकुण्डमें काढ़ी ॥
ब्रह्मादिक अरु दशरथ तहई । सीता सती सबै मिलि कहई ॥
चन्द्रबदनि मृगलोचनि नारी । विषमरूप विधनासों ढारी ॥
कलिके विप्र तजे आचारा । अरु परिहरै निगम व्यवहारा ॥
तैसे मैं छाँडत हौं सीता । पतिव्रता प्राणनते हीता ॥
सोचत रामहिं भा भिनुसारा । तुरत गये सीताके द्वारा ॥
भरत शत्रुहन लछमन भाई । आये तहँ जहँ राम गुसाँई ॥
देखत वदन कमल कुम्हिलाना । विह्वल दीन मलीन रिसाना ॥
आपुहि आपु आन दिशि हेरा । आवत हमहिं भई बड़ बेरा ॥
की हमते आतिथि भा भंगा । किधौं नीचकर कीन्ह प्रसंगा ॥
की वंदेउ नहिं गुरुके चरना । की हम तजी रामकी शरना ॥
यहै कहत चितये रघुनाथा । कीन्ह प्रणाम सबन इक साथा ॥
कहै सबन मिलि अन्तर्यामी । अहौ हमारे प्रभु तुम स्वामी ॥
मात पिता तुम भ्रात हमारा । मन क्रम वचन राम आधारा ॥
कहौ राम कारणधौं कवना । कहउ काज प्रभु कीजै तवना ॥

दोहा-सब भायनके वचनसुनि, गद्वरलीन्ह उसास ॥
मान्यो जीवन बहुतदुख, बोलेउ वचन प्रकास ॥९७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

जैमिनिरुवाच ।

चारन कहा कही सो बाता । तजिहौं सीय सुनहु सब भ्राता ॥
कितहूँ जाय जाय वरुदेहू । सीताहि लागि न अपयश लेहू ॥
इह सुनि वचन भरत तब कहईं । काहे शपथ लीन्ह प्रभु तहईं ॥
धातकसन कापिला छुड़वैये । बूझिन प्रभू फेर पठवैये ॥
कृपावंत तुम जियहि विचारहु । दशरथके जानि वचन विसारहु ॥
भूत भविष्य सकल उन कहे । सीता सती महाप्रभु अहे ॥
तेंतिस कोटि देव परधाना । तिनहूँ कहेउ झूँठ तुम माना ॥
ब्रह्मादिक चाढ़ि कहेउ विमाना । करहु न प्रभु सबकर अपमाना ॥
दशरथ गति सीताते पाई । सो जानि त्यागहु राम गुसाईं ॥
वर्ष चतुर्दश रह वनवासा । तुमहिं देखि प्रभु पूजी आसा ॥

जैमिनिरुवाच ।

राम कहैं सुन भरतकुमारा । जानि न परै कहा होनहारा ॥
यह तो सबै सत्य तुम कहा । शपथ लीन्ह अरु दशरथ तहा ॥
राजपुरुष हरिचंद बखानै । सुयशलागिते आप विकानै ॥
धन अरु पुत्र कलत्र रु भाई । सबै तजिय यश तजो न जाई ॥
सुनौं भरत मैं इहै विचारा । प्राण जाहि जो तजो न पारा ॥
चुपभये भरत नयन झर नीरा । तब उठि बोले लछमन वीरा ॥
रजक घरानि कर सुनि प्रतिवादा । प्रभु नाहक मन करत विषादा ॥
जहँ दशरथ ब्रह्मादिक साखी । तिन तजि मिथ्या हठ उर राखी ॥
त्रिभुवनजनानि तजिय प्रभुनाहीं । दूषण धरै बधव मैं ताहीं ॥
पुनि शत्रुघ्न बात अनुसारी । जानि छाँड़हु सीता वर नारी ॥
सुगनघनी तब प्राण अधारा । चिता रोपि पुनि कीन्ह विचारा ॥
राखत सीतहि छाँड़ों प्राना । तजे सियहि दुख होइ निदाना ॥
रामचंद्र यह बात न धरिये । झूँठें आपन धरना धरिये ॥

दोहा-भरत शत्रुहन लक्ष्मण, कीनी विनय बनाय ॥
जो पुनि आज्ञा रामकी, सो कस मेटी जाय॥९८ ॥

राम कहा सुन भरत प्रमाना । अपयश ते छाँड़िय वरु प्राना ॥
राघव हृदय देखि हठ सारी । भरत शत्रुहन गृह पगु धारी ॥
लछमन वीर रहेउ तहँ ठाढ़ा । रघुपति वचन कहे तव गाढ़ा ॥
वचन सुनहु तुम शेषकुमारा । शिर काटहु ले खड्ग हमारा ॥
या सिय लै गंगा तट जाहू । दूषण हमैं तुम्हैं नहिं काहू ॥
सुनत वचन लछमन दुख भयऊ। मो कहँ संकट दुहुँविधि ठयऊ ॥
शेषमानि वच पुनि इमि भाखी । प्रभु आज्ञा शिरऊपर राखी ॥
प्रभुमन आप दुःख जनि करही । आज्ञा देहु सोई शिर धरही ॥
रामचंद्रकर करि संतोखा । तुरत महारथ आनउ चोखा ॥
मानत दुख जियमें अति गाढ़ा । सीता मंदिर रथ किय ठाढ़ा ॥
करिप्रणाम पुनि कीन्ह बड़ाई । रघुपति रथ इह दीन्ह पठाई ॥
देखत रथ सीतहि आनंदा । अभिवादन लछमन पगवंदा ॥
राजिव लोचन इच्छादाता ।जस रघुपति तस पितु नहिं माता॥
जो इच्छा रजनी हम कीन्ही । राम गुसाईं सो भरि दीन्ही ॥
पाटंबर वंदन पकवाना । बहु विधि काढ़ि जानकी आना ॥
मुनिजनहित बहु भोजन नाये । देखि शेष नयन जल छाये ॥
आन रचा विधि आन बनायउ । करिकर कृपा कवनने पायउ ॥
रामवचन बधगे दुखफंदा । परवश भये न मन आनंदा ॥

जैमिनिरुवाच ।

अंवर अजिर लीन्ह पकवाना । बहुविधि रथ लादे लै आना ॥
रत्न जटित बहु चीर बनाना । सब उत्तम रथ आनि धरावा ॥
सम्पूरण रथ करि गये तहँवा । मंदिरमें कौशल्या जहँवा ॥
राम जननिके लागी चरणा । मैं दासी तुमरी पै शरणा ॥
कीन्ह दुलार साधु सुत तोरे । लछमन संग दीन्ह प्रभु मोरे ॥
आज्ञा देहु जाहुँ बनमाहीं । भोजन मुनिन जिमावौं ताहीं ॥

कौशल्योवाच ।

सीता तोहि अजहूँ वन साधा । बाघ सिंह कंटक बहुव्याधा ॥

पंकज मुख देखत कुम्हिलाना । सूख वदन अरु अधर सुखाना ॥

सीतोवाच ।

स्वामी मोर कठिन बनवासी । कंटक मर्दन प्रभु सुखरासी ॥
कोटिक बानर सैन बनाई । हनि रावण मम बांदि छुटाई ॥
सुमिरण राम करव जहँजाही । निःकंटक बन होइ है ताही ॥
मन क्रम वचन रामपग सेवा । जहँ देखन कह तरसत देवा ॥
जननी कहँवर प्रदक्षिणा लाई । कैकइ सुमित्रा तहँ चलि आई ॥
चली कहति मोहिं रामकि शरनां । आये तहँ लछमन दुखहरना ॥
रथ चाढ़ि शेष चले परदेशा । सुर मुनि सबको भयउ अँदेशा ॥
रथ बैठत इंद्रासन रोयउ । शंकर ब्रह्मादिक मन मोहेउ ॥
सीता सती रामकी घरनी । ना जानिये तजी केहि करनी ॥
उनके दुखहि दुखित भई धरनी । अद्भुत कथा जाय नाहिं वरनी ॥
रथ नाँहि चलै पिछ मनोजोवै । देवलोक सब पक्षी रोवै ॥
लागे लछमन रथके काना । राम कहा सोई परिमाना ॥

जैमिनिरुवाच ।

पुनि बोले अस शेष कुमारा । कैसे चलौं धरणि दुख भारा ॥
पवनवेग संग्रामहि गयऊ । सीताके दुख अति दुख भयऊ ॥
जल थल अहैं जीव जे नाना । सीताके दुख सब दुख माना ॥
लछमन विनय कीन्ह रथ पाहीं । रथ लै तुरत चले बनमाहीं ॥
मेटि न जायँ रामके वचना । आगे धौं होइहै कस रचना ॥
दोहा-लछमनके उर दुख अधिक, सीतामन आनंद ॥
पुरुषोत्तम निज चरितको, जानै रघुकुल चंद ॥ ९९ ॥

इति श्रीम०भा० अश्वमेधपर्वणि कुशलवोपाख्यानं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः २९॥

जैमिनिरुवाच ।

निकसि महारथ बाहर आवा । तजत अयोध्या शकुन न पावा ॥
फिकरत आवै सन्मुख स्यारी । भइ मंजार मजारहि रारी ॥

दाहिनते वामै मृग धावा । एको शकुन नीक नाहिं पावा ॥
विस्मय बहुत भयउ मन सीता । देखत लषण शकुन विपरीता ॥
हमरे प्राण वधौ वरुकोई । आर्यपुत्र कहँ जनि दुख होई ॥
देउ अशीश कुशल रघुनन्दा । कौशल्या जिय रहै अनंदा ॥
वंदि छोरि मोहि कीन्ह सनाथा । चिरंजीवि जीवहु रघुनाथा ॥
जे लंका दानव सब मारे । भार उतारि पतित निस्तारे ॥
खर दूषण त्रिशिरा रिपु धाये । ते सब वधि यमसदन पठाये ॥
कुशल होउ राघव वै धरना । तीनिलोक रामहि की शरना ॥
बाँध्यो उदधि कीन्ह रणसाजू । दीन्ह विभीषण लंकहि राजू ॥
कुंभकर्ण रावणहि निपाता । रामचरणकर कुशल विधाता ॥
मंदोदरी नयनझर नीरा । मेघनादकर भग्न शरीरा ॥
प्रभुकी कुशल मनावति जाही । रामचरण सुमिरत उरमाही ॥
गये दक्षिण दिशि वन गंभीरा । पहुँचे त्रिपथगामिनी तीरा ॥
निर्मल लखि तहँ गंग तरंगा । दर्शन करत कलुष हो भंगा ॥
तीर तीर वन महा सुहावा । चहुँ दिशि जनु अमृत फलछावा॥
तार खजूरि नारियल भारी । विच विच जमुनी कृष्णसुपारी ॥
कंचन केतकि कुसुम लवंगा । फले बहुत फल जे दुख भंगा ॥
तहँ रथते उतरे पुनि शेशा । सीतहि लागि विषम परदेशा ॥
मज्जन कीन्ह महाजल गंगा । दरश जासु कलमष हो भंगा ॥
निर्मल अभरण पहरिन आना । सोचहिं मुनिवर कर अस्थाना ॥
लछिमन सीतहि लीन्ह लिवाई । दिशै न सूझहि तेहि वन जाई ॥
देखत सीतहि भयउ खँभारा । यह तो वन कंटककी धारा ॥
सुनहु शेष तब यह वन देखा । सो तो नन्दनवनके लेखा ॥
सब द्रुम फल अरु शीतल छाया । सुनहु न लछिमन सोवनकाहा ॥
याहि वन अहै कुंतकी धारा । वैर खजूरि गोखरु अनयारा ॥
वट पीपर पाकरि जो अहहीं । जरि जरि सो दवनमें रहहीं ॥
सोवन इमिली निंव प्रसिद्धा । षोडरैनु नीका वहु ऋद्धा ॥

देखिय द्रुम जस दैत्य अनेका । शाखन सर्प रहे नित बेका ॥
सुवर शृगाल भालु मंजारा । दिशदिश गर्जें वाघनि नारा ॥
एक जीव जीवहि लै धरनी । कोउ काऊपर दया न करनी ॥

सितोवाच ।

सुनहु शेष विनती अब मोरी । मैं बलि रथ पलटाउ बहोरी ॥
विधना मति हरि लीन्ह हमारी । प्रभु पग तजि आई वन भारी ॥
नहिं देखिय मुनिवल्कल चीरा । कितहु वेदध्वनि करहिं न धीरा ॥
होम जाप कितहू नहिं होई । शंखवेदध्वनि करहि न कोई ॥
पुत्र कलत्र सहित ऋषि रहई । महातपा गुण प्रभुके कहई ॥
लखि महिमा आश्रम नहिं कोई । सीता वचन कहे तब रोई ॥
कवनेउ पाप प्रगट अपराधा । गुड़ दिखाय मारत जुर व्याधा ॥
दिवस हमार भयो विपरीता । छाँड़ेउ राम कहहिं अस सीता ॥
सिया वचन सुनि शीश डुलावा । लोचन शेष नीर भर आवा ॥

दोहा--गद्गद वचनन श्वास लै, शेष नयन जल ढार ॥
कह्यो राम त्यागो तुम्हे, लिखा को मेटनहार ॥१००॥

सुनत सीय मूर्च्छित भुव परी । जनु अकाशते रोहिणि गिरी ॥
जरकाटे जैसे द्रुम वेली । डसी सर्प जनु कुमरि अकेली ॥
देखि शेष जिय भयउ उदासा । करिबे लागेउ वस्त्र विनासा ॥
एक हाथ नयननकी छाहा । जलहि नाय मेलेउ मुखमाहा ॥
शीतल नीर पखारे चरना । जागतिही खन बोली बचना ॥
देखेउ रोवत लछुमन ठाढ़े । जस बन पलवा दाहू डाढ़े ॥
कहै सिया तुम जिनि दुख मानहु । रामचंद्र कहुँ प्रभुकरि जानहु ॥
तन धन प्राण जाहि कर दीन्हा । सब शिर ऊपर ताकर कीन्हा ॥
रामअज्ञा कहुँ कायर कहिये । दुख सुख सबै जीव पर सहिये ॥
वन हमार रामहि जो भावा । दीन अनाथ काहि गुहरावा ॥
एकहि डर मोहि लगत अपेला । देवर कैसे जाहुँ अकेला ॥
लक्ष्मण पूज्य परमहित मोरा । कौन कौन गुण सुमिरौं तोरा ॥

दंडक वन विराधि जब मारा। लाये कंद मूल फल डारा॥
गाढ़ शीतल नीर पियायउ। नीकी परनकुटी बनवायउ॥
याहि वनमें को करै सँभारा। जानकि रामैं नाम पुकारा॥
आर्य पुत्र सबके दुख हरणा। मैं हौं लखन उनहिंकी शरणा॥
मन क्रम वचन न जानौं आना। राजिवलोचन मम धन प्राना॥
पद्म पलाशनयन रघुवीरा। चंद्रबिंब मुख अति रणधीरा॥
दाड़िम बीज मनोहर दशना। कुंडल मुकुट पीत तनु बसना॥
मुक्तामणि किरीट शिर सोहै। मूरति मदनश्याम घन मोहै॥
समाहित शिव पिनाक प्रभु तोरा। सब योधनकर कीन्ह अदोरा॥
तब सब मुनि कौशिकके संगा। धनुष तोरि शक्ती बल भंगा॥

दोहा–पुरुषोत्तम कह जानकी, कवन रामकी रीति॥
जोपै मन ऐसीबसी, क्यों आनी रण जीति॥१०१॥

सुनहु शेष बोलतिहौं बैना। मो हित बहुत बटोरी सैना॥
नृप सुकंठ सब वानर धीरा। बाँधेउ जाय उदधि गंभीरा॥
जाम्बवंत अंगद हनुमंता। मोहित रावण कीन्ह निपंता॥
पंचवटी रावण जब हरचो। अति विलाप मो कारण करचो॥
फिरि फिरि सबसों पूछी जाई। वनद्रुम लता रही लिपटाई॥
अब केहि लागी वज्र उन मारा। अस प्रभु कर मैं कहा बिगारा॥
अब मम शेष सुनहु इक बाता। कहौं जाय कौशल्या माता॥
जब मोहिं गर्व विधाता कीन्हा। तब कस राम हमहिं बन दीन्हा॥
करते एक भली रघुवीरा। तुमहि न संग देते रणधीरा॥
नृप सुग्रीव बिभीषण चीन्हा। भाइन मारि राज्य उन लीन्हा॥
उनहि पठाते हमरे संगा। जातनको करते लै भंगा॥
तुम मम जिय न मारिहौ शेशा। जाहु जहाँ प्रभु कौशल देशा॥
मारग कुशल होहु रघुनंदा। देखहु जाइ चरण अरविंदा॥
यह सुनि लखन बहुत दुख माना। बिछुर पीर राम एक जाना॥

रुदन करत परदक्षिना लाई। चले लखन वनमें बिसराई॥
लछिमन कहि करिये मैं सेवा। सीतहि तुम राखहु बनदेवा॥
दोहा-बाघ सिंह भय होय नहिं, गहै लाज नहिं धीर॥
लछिमन सीतहि तजि चले, वर्षत लोचन नीर॥१०१॥
कबहूँ चलहिं कबहुँ फिरि जोवहिं। कबहुँ न बिछुरहिं अंतर रोवहिं॥
संग रहो तो राम रिसाई। फिरहि चलैं वन छाँडि न जाई॥
शनै शनै भये लोचन ओटा। मूर्च्छि परी जनु पाहन चोटा॥
फिरिकै लखन न बोले बैना। रामचंद्रकी दारुण सैना॥
घरी एक ठाढ़े ह्वै देखा। उतरि गंग आये तब शेखा॥
करि मंजन रथ चढ़े तुरंता। आये लछिमन कौशिल संता॥
गहे प्रभु चरण प्रदक्षिना लाई। जो तुम कहा कीन्ह हम भाई॥
रही अकेलि सिया बन कैसे। करत कलाप मृगी वन जैसे॥
तात जननि स्वामी रघुवीरा। सुमिरत कृपा सिंधु धरधीरा॥
चारहुँ दिशि देखिय अति सूनी। पीर शरीर होति अति दूनी॥
छिनु छिनु विह्वल मूर्च्छित भेषा। आये राम चरण तहँ शेषा॥
वे प्रभु आदि अंत अवसाना। जाकर मरम निगम नाहिं जाना॥
ते सीताकी रक्षा करई। पशु पक्षी मिलि सब दुख हरई॥
देखि दुखित वनमें इक बाला। हंस हंसिनी तजेउ मराला॥
सीता दुःख दुखित सब भयऊ। तजि तृण मृगा मृगी रह गयऊ॥
आये तहँवा मोर प्रचारी। रोवहिं सबहि देखि वर नारी॥
जल पक्षी सब जल लै आवहिं। पंख पसारि बयारि डुलावहिं॥
लावहि एक गंग करनीरा। सीचहिं शीतल सिया शरीरा॥
रामराम बोलहि तब सीता। छूटे केश धरणि विपरीता॥
यहि वनमें जो जैहे प्राना। बालक हत्या होइ निदाना॥
प्रभुकर चिह्न गर्भ कर भारा। कहा जाउँ दुख हरै हमारा॥
कुश कंटक मैं जो पग धरई। दिशा न सूझै खसि खसि परई॥
रुधिर चरण कोऊ सम तुला। शरद कमल जस पंकज फूला॥

दोहा–जाके उर त्रिभुवनपति, ताहि न व्यापै कोय ॥
पुरुषोत्तम हरि कृपाते, सीतहि दुःख न होय ॥१०३॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

कृपासिंधु प्रभु दीन दयाला । करहु अनाथकेर प्रतिपाला ॥
तेहि वन वालमीकि ऋषि रहहीं । अग्नि हुताशन दिनप्रति लहहीं ॥
पाती पुष्प समिधके काजा । द्रुम वेली तर फिरत विराजा ॥
इह अवसर तब तेहि वन माहीं । आये वालमीकि ऋषि ताहीं ॥
शिष्यन सहित वेद अवधारी । पत्र पुष्प कुश लीन्ह विचारी ॥
देखी एक सुंदरी दीना । चंद्रवदन विह्वल अति छीना ॥
ऋषि सोचे वनमें यह काहा । तुरत वेगि चलि आये ताहा ॥
बहुत ऋषिय मन बाढ़ी दाया । पूछा वालमीकि ऋषिराया ॥
कहहु सत्य तुम आपनि वाता । को तुम अहो पिता को माता ॥
कोउ न तुम सँग सखी सहेली । कैसे वनमहँ फिरहु अकेली ॥
सीता ऋषि कहँ कीन्ह प्रणामा । देखत मनहि भयो विश्रामा ॥
सुनो ऋषी हम तुमसों कहहीं । कर्मलिखा विधि इहिवन रहहीं ॥
तुमको पिता तुल्य करि जानौं । तासों मैं निज दुःख बखानौं ॥
सीता नाम रामकी धरनी । नहिं जानो त्यागे केहि करनी ॥

वाल्मीकिरुवाच ।

वैदेही दुहिता तुम मोरी । मैं सेवा करि हौं अब तोरी ॥
हौं ऋषि वालमीकि मम नाऊँ । जनकगुरू मैं इहाँ रहाऊँ ॥
जनि चिंता मानहु ऋषि कहई । तुम्हरे गर्भ पुत्र द्वै अहई ॥
मेरे संग चलहु तुम सीता । ऋषिपत्नी गैहैं तव गीता ॥
नीकी पर्णकुटी घन करि हैं । ऋषिपत्नी सेवा तव धरि हैं ॥
तहाँ प्रसूति होव आनंदा । द्वै बालक होइ हैं कुलचंदा ॥
मुनिके वचन सुने ज्यों सीता । आदि अंतकर सब दुख बीता ॥
जैसे खग घामनक मारी । घन गर्जत जहँ मोर प्रचारी ॥

वालमीकि कर आश्रम जहँई। संग लिवाय गये मुनि तहँई॥
सिय लखि सिंह बाघ अरु गाई। इकसँग विचरहिं वैर विहाई॥
निउला सप मयूर प्रसंगा। सिंह मिरग खेलहिं इक संगा॥
नीक सरोदक तेहि अस्थाना। बक अरु मीन संग मन माना॥
वन निरवैर देखि वैदेही। सुमिरे मन निज रामसनेही॥

दोहा-ऋषि पत्नी ऋषिपुत्र युत, सब कहँ कीन्ह प्रणाम॥
पुरुषोत्तम भवनन्दनी, पावा भल विश्राम॥ १०४॥

मुनि घरनी जल आनि पियावहिं। आदर करि फल फूल खवावहिं॥
रामकथा मुनिराज कहाही। तब सीताकर प्राण रहाही॥
सब दुखजीय रामकी आसा। इहविधि वन बीते नवमासा॥
निर्मल दशम मास जब आवा। चतुर नारि तहँ मंगल गावा॥
ऋषि पै जतन करै तब लीन्हा। विधना सुखसों द्वै सुत दीन्हा॥
अर्द्धरात्रि उत्तम तिथि वारा। जन्मत चहुँ दिशि भो उजिआरा॥
वैदेहीकी पूजी आसा। अति सुगंध लै बहै बतासा॥
करत आनन्द ऋषिय सब धाये। जहँ मुनि वालमीकि तहँ आये॥
कहै न जीव सुख भयो अनंदा। आये ऋषि जहँ दोउ कुलचंदा॥
सीताके जन्मे द्वै पूता। सुनत ऋषिन सुख भयो वहूता॥
सुनतहि मुनि आनंदित आये। अमृत कलश और कुश लाये॥
करि अभिषेक कहेउ सबकाऊ। जेठे कुश लहुर लव नाऊ॥
जाति कर्म नीकी विधि कीन्हा। सीतहि सुख विधना बड़ दीन्हा॥
दिन दिन बढ़हिं मनहु रविचन्दा। क्रीड़ा कर्म करहिं आनन्दा॥
वारहि वर्ष भये शिशु जबही। दीन्ह जनेउ भलीविधि तबही॥
ऋषि कीन्हो मनमाहिं विचारा। काकपक्ष जे राम कुमारा॥
वालमीकि वसिष्ठ गृह आये। कामधेनु लै मांगि सिधाये॥
भोजन कीन्ह ऋषिय बहुभाँती। बटु तापस वैषान उदासी॥
इच्छाभोजन सबकर स्वादा। दीन्हेउ कामधेनु परसादा॥

भात सुवासित व्यंजन आना। घृत उत्तम पापर पकवाना ॥
मेहक मूंग भयो बहु भेशा। पूरी हलुआ हरत कलेशा ॥
लड्डुआ फेनी अति सुखदेनी। खोवा खीरि सुस्वर्ग निसेनी ॥
विधिभोजन व्यंजन संधाना। भाँति भाँति कोउ मर्म न जाना॥
बरणै को ज्योनार सुहावा। भयउ अमर जेहि थोरउ पावा ॥
भोजन कामधेनु कर दीन्हा। भोजन बहुत ऋषी पुनि कीन्हा॥
अष्टौ महासिद्धि रहे तासा। सीता कामधेनु है जासा ॥
ऐसी भाँति जनेउ दिवावा। महावीर ऋषि सबै जिमावा ॥

दोहा-वेदी बैठे कुश लवहि, अमृत भोजन स्वाद ॥
पुरुषोत्तम जनभिक्षुकन, तहँ पायो परसाद ॥१०५॥

दै जनेउ मुनि वेद पढ़ावा। कुश लव रामचरित भल गावा ॥
वाल्मीकि सब कहेउ बखानी। सुमिरत रामचरित मनवानी ॥
जय जय कुश कुमार कर लीन्हा। कै प्रणपत्य देव वर दीन्हा ॥
साधु साधु मुनिवर अति प्रीता। सकल कहे रणहोहु अजीता ॥
कोई धनु बाण कोई सन्नाहा। जिनके बल कोउ लहै न थाहा ॥
तब बलदै मुनि कीन्ह विचारा। काकपक्ष सब रोम सवारा ॥
दै अशीश मुनि गवने देवा। करत भये सीताकर सेवा ॥
बहुविधि कंद मूल फल आनहिं। ऋषिन देहिं अरु सुयश बखानहिं॥
जानकिजीव बहुत सुख भयऊ। इहिविधि वर्ष चतुर्दश गयऊ ॥

जैमिनिरुवाच।

महाबाहु जन्मेजय राजा। अब सुनि रामपुरी कर साजा ॥
अद्भुत चरित जान नहिं जाई। रामहि तनु अति पीर जनाई ॥
गुरु वसिष्ठ सन कहेउ विचारा। औषधि मूरि करिय उपचारा ॥
कै अर्द्धंग झोलाकी पीरा। कोउ कह अजरै अमर शरीरा ॥
इनकी देह कहै का पीरा। तीनि लोक थंभन रणधीरा ॥
तब बोले रघुनन्दन स्वामी। तीनि लोक प्रभु अंतर्यामी ॥

हरिहँसि कही पीर मैं जानी । ऋषि बसिष्ठसन कहेसि बखानी॥
रावण हति अन्याय जु कीन्हा । तब बहु ब्रह्मबंदिकहँ चीन्हा ॥
अमरन माया लखी न जाई । विश्वामित्र चहूँ युग गाई ॥
गालव वामदेव ऋषि आने । जे पुनीति नित वेद बखाने ॥
अवरौ बहुत ऋषीश्वर धीरा । सबसन कही जवन तनु पीरा ॥
सब मिलि अश्वमेध करवावहु । जो विधि कह्यो सुदान दिवावहु॥
कहै वसिष्ठ सुनहु सब करना । चाहिय तुरँग कुमुद शशि बरना॥
पीतिपूंछ श्यामल दोड करना ।मणिज्यौं चमक होइ गति बरना ॥
एक वर्षसँग वीर बिचारी । नीकी विधि कीजे रखवारी ॥
बहुत कष्टकरि होय पसारा । कहि वसिष्ठ हो बहुत खँभारा ॥
जहँ जहँ अश्व करै परवेशा । ह्वैहै विषम युद्ध तेहि देशा ॥
वीर सहस्र राम वरधीरा । वेदशास्त्र जानहिं जे वीरा ॥
एक एक रथ कुंजर सब संगा । लादिय काकहि दशौ तुरंगा ॥
सौ सौ गऊ अलंकृत कीजे । रत्नथार मुक्ताहल दीजे ॥
चारि चारि सेवक सँग दइये । एक एक कहँ इतना चहियै ॥
वर्ष दिवस संग नर अरु नारी । भूमि शयन करि वीर विचारी ॥

ऋषिरुवाच ।

ह्वै है सबै धीर मन दीजे । बिनु सीतहि कैसे मख कीजे ॥
सुनिये रामचंद्र अब बाता । बेदी बैठौ कवन सँगाता ॥

रामचंद्र उवाच ।

कंचनकी प्रतिमा अनुसारहु । सीता नाम ताहि करधारहु ॥
गाढ़हु सहस कनकके खंभा । गुरु पुनि कीजे यज्ञ आरंभा ॥
मुनि जब सुने रामके वचना । लागे करन यज्ञकी रचना ॥
जस मुनि प्रथमहिं कह्यो विचारा। तैसोई पायो घुरसारा ॥
सहित वसिष्ठ सबै मुनि आये । जो ऋषि कहउ सुदान दिवाये ॥
कंचनसिया सहित रघुबीरा । भूमि शयन कीन्हों मनुबीरा ॥

बहुरि तुरंगम पूजा कीन्ही । चन्दन कुमकुम माला दीन्ही ॥
कनकपत्र अस लिखा लिलारा । रघुकुलदीप जगत उजियारा ॥
एक वीर कौशिल्या धीरा । ताकर पुत्र अहै रघुबीरा ॥
तेहि छाँड़ेउ इह यज्ञ तुरंगा । जेहि बल होयसो गहै तुरंगा ॥
पुनि भुजबल शत्रुघ्न पठाये । तीनि क्षौहणी दल सँग लाये ॥
रामचन्द्र कहँ. कीन्ह प्रणामा । चले वीर जिय धरि संग्रामा ॥
तीनि लोककर ठाकुर होई । ताते अधिक जाहि बल सोई ॥
इहि घोरा को सौंपै धरई । तीनि लोक कीजै जो करई ॥
जवने देश तुरंगम जाई । लै धनु रत्न मिलहिं सब आई ॥
क प्रणिपत्य करैं जिय सोधा । रामहुते दूसर को योधा ॥
जहँ जहँ तुरँग धरै जो कोई । रामप्रसाद जीतिये सोई ॥
वालमीकिके आश्रम आवा । देखत अपूर्व बहुत सुख पावा ॥

दोहा–वरुण यज्ञ तेहि अवसर, मुनिवर गये पताल ॥
जाय तुरंग तहँ पहुँच्यो, उपवन ताल तमाल ॥ १०६ ॥

नवपल्लव शोभित अवरावा । नींबू दाड़िम महा सुहावा ॥
मुनि द्रुम सदा सबै फल फलहीं । बारह मास कुसुम अनुसरहीं ॥
अतिसुगंध अगणित फुलवारी । मानौ अमरावतिकी वारी ॥
कदली विपरीत फल अति फलहीं । विधिवत यज्ञ बहुत ऋषि करहीं ॥
तेहि थल लव कुमार रखवारा । यज्ञतुरंग तहाँ पगु धारा ॥
दूब चरै लागा तेहि ठाऊँ । रामप्रताप कछुक गुण गाऊँ ॥
लवसँग मुनि लरिका सब आये । जित तित खेलत बालक धाये ॥
सब लरिकन मिलि गह्यो तुरंगा । बाँचेउ पत्र कहेउ परसंगा ॥
मुनि लरिका सब वरजन लागे । बंधत देखि चहूँ दिशि भागे ॥
हम नहिं घीर हैं तुरँग परावा । का जानै कितते यह आवा ॥
वाँचत तमाकि कही लव बाता । मम इच्छा पूरन भइ माता ॥
करिवो बल सुत शर इह संधा । गहेउ तुरँग लै कदली बंधा ॥

मुनि लरिका सब बरजन लागे । देखत वीर बाल सब भागे ॥
लव जनि बंधौ तुरँग परावा । हम वरजैं भागे सब धावा ॥
लव कह सब तुम धरौ तुरंगा । सबरे आय करब रण भंगा ॥
कह बालक कछु पढ़हु बखानहु । क्षत्रिय धर्म कहा तुम जानहु ॥
संध्या जपौ कदलिकी छाहीं । सीताके उर जन्मेउ नाहीं ॥
बाँधि तुरँग करि हैं रण साजा । अब छाँडब जननीकी लाजा ॥
तुम खानि कंद मूलफल खाहू । मैं जूझौं जिनि जीव डराहू ॥

दोहा–जूझत रणजो भाजिये, कुल कहुँ अपयश होइ ॥
पुरुषोत्तम तहँ अवसरहि, जियत मुयेजन सोइ ॥१०७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नामैकात्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

यह अवसर आये सब योधा । कुंजर मत्त करत जिय क्रोधा ॥
तुरे बहुत पैदर अतिसंगा । काहि न जाय कहँ यज्ञ तुरंगा ॥
संग शत्रुहन वीर विशेखा । कदली खंभ बँधा हय देखा ॥
पूछेहु मुनि लरिकनसों आई । किहि बाँधा तुम कहौ बुझाई ॥
मुनि लरिकन पुनि कहा प्रसंगा । हम तपस्वी सेवत नितगंगा ॥
मानत शंक कहसि समझाई । वृक्ष मूल लव दीन्ह दिखाई ॥
उनि बाँधो है तुरँग तुम्हारा । हम ब्रह्मचारी रहैं नियारा ॥
हरिके वीर कहैं समुझाई । छाँड़ि देहु कीन्ही लरिकाई ॥
इहै कहत क्रोधित लव कहई । छोरि लेहु जो तुम बल अहई ॥
सुनतहि क्रोध सबै जिय जागा । बरबश करि छोरन तब लागा ॥
क्रोधित है लव बाण प्रचारा । तिनकर हाथ काटि महिडारा ॥
योधन मन सब विस्मय होई । ये तौ वीर मुनीश्वर कोई ॥
पुनि योधा सब आगे धाये । बरसे बाण चहूँ दिशि छाये ॥
मेला पाशि विषम असरारा । बहुत बाण रण कीन्ह सँभारा ॥
जल अघ कटै गुदा वरि नीरा । भवजलसे लागै नहिं पीरा ॥
[illegible] सब ज्यों रणमहि धावै । एकौ वीर न सन्मुख आवै ॥

एक एकके पच पच बाना। लवकुमार रण कीन्ह मशाना ॥
जानाकिनंदन अति बरियारा। कुंजर कुंभ करै द्वै फारा ॥
साराथि रथ सब रथी समेता। लवके हने परे सब खेता ॥
योधा सहित धनुष अरु बाना। परे बहुत कछु मर्म न जाना ॥
लवकुमारके वाण प्रचंडा। गज तुरंग सब भे शतखंडा ॥
चमर छत्र घंटा खासी परे। वरि न कोउ सन्मुख अनुसरे ॥
जेते आये रणहिं जुझारा। सब कर बल कीन्हेउ संहारा ॥

दोहा–महावीर सब जूझेऊ, रण शत्रुघ्न रिसान ॥
पुरुषोत्तम को मेंटई, जोर लिखा भगवान ॥१०८॥

जैमिनिरुवाच।

कालरूप शत्रुघ्न कुमारा। देखेसि लरिका सब रण मारा ॥
कालरूप रथ चढ़ि शर काढ़ा। कहेसि सम्हारि होव अब ठाढ़ा ॥
जिय रिसाय छोड़ेसि दश बाना। लव निर्भय कछु शंक न माना ॥
लव पुनि पंच वाण फटकारा। चारौं तुरंग एक उर मारा ॥
चक्रध्वजा धरणी ल दीन्हा। वीरहि धनुष बाण बिनु कीन्हा ॥
आन धनुष लै चलेउ पराई। मारे लव कहँ दश शर जाई ॥
दारुण लागेउ वाण लिलारा। लव बोलेउ जनु कुसुम प्रहारा ॥
सुनि शत्रुघ्न बहुत दुख माना। यतो वीर कछु मर्म न जाना ॥
पुनि लव दारुण वाण सँभारा। बहुरि शत्रुहन करि हय मारा ॥
पुनि काट्यो दूसर धनु बाना। बिरथ भये शत्रुघ्न रिसाना ॥
पुनि शर काढ़े धनुष कर लीन्हा। चाढ़ि रथ आन क्रोध तब कीन्हा ॥
अब सँभार तुम मुनिजन वीरा। बालक जानि करी मैं पीरा ॥
सुनत वचन लव बहुरि रिसाना। काट्यो बहुरि धनुष अरु बाना ॥
रथते बहुरि धरणिमें आई। पंच बाण मारेसि तेहि जाई ॥
ध्वजा चक्र रथ वाण अकूता। लव काटेउ बहुबाण सजूता ॥
पुनि शत्रुघ्न कीन्ह संधाना। गहे वाण जे वज्र समाना ॥

सफल बाण जे टरैं न टारे । प्रलय माँझ वे जरैं न जारे ॥
विषम बाण आवत लव देखा । जनु रविबिंब अनलकी रेखा ॥
जनु अकाशते दामिनि धाई । सुमिरेउ लव कुश आपन भाई ॥
पुनि जिय सुमिरि जानकी माता । विषमबाण कस करै विधाता ॥
लव सन्मुख ह्वै बाण सँभारा । अन्तर वज्र कीन्ह दै फारा ॥
आधा बाण धरणि खसि परेऊ । आधे कुमर मूर्च्छित करेऊ ॥
अति सुन्दर साँचे जनु ढारा । लागत बाण भयो विकरारा ॥
देखत महा मनोहर वीरा । रुधिर सोह लपिटान शरीरा ॥
विषम विचार बाण तनु सोहा । महा प्रचंड विषम रण मोहा ॥
शंखसहित बाजे रणबाजे । जे उबरे तिनि कीन्हे साजे ॥
मानत भय तिन छारि तुरंगा । पुनि लव न्यौहरि कर जब भंगा॥
पुनि शत्रुघ्न दया जिय आवा । हाथ पकड़कै कुँवर उठावा ॥
सोच नयन जिय कहसि विचारी । रामचन्द्रकी सब उनिहारी ॥
जियत याहि रथ लेहु चढ़ाई । इइ बालक अब मारि न जाई ॥

दोहा–तुरत चलैं कौशलपुरहि, यज्ञसमय नियरान ॥
पुरुषोत्तम लव युद्ध कहँ, सब कोउ करै बखान१०९

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः॥ ३२॥

जैमिनिरुवाच ।

जन्मेजय जिय लागि विचारन । जैमिनि मोहि समझावहु कारन ॥
जैमिनि ऋषि कलमष तुम दहेऊ।कुश लव चरित नीक अति कहेऊ॥

जैमिनिरुवाच ।

कुश लव चरित सुनहु मन लाई । नर नारी कर दुरति नशाई ॥
छोरि तुरँग लव कहँ रण जीता । मुनि बालक गवने जहँ सीता ॥
आश्रममें रोवति है वैसी । सुख दुखचोट वज्रकी जैसी ॥
लवकहँ धरे न लागि सहाई । जननी परी धरणि मुरझाई ॥
तेहि क्षण सिया परी पुनि जागी । लरिकन सँग पूछन तब लागी ॥

कहहु न पुत्र भई कस वाता । कैसे करि तिनि कुमर निपाता ॥
बालक कहैं सुनहु परसंगा । हमरे बरजत गहेउ तुरंगा ॥
बहुत युद्ध कीन्हेउ रण रंगा । पुनि नृपकर दल कीन्हेउ भंगा ॥
पाछे बड़ रिपु लागि गुहारी । उनहूके अगणित रथ मारी ॥
ता पाछे विधना कस कीन्हा । मूर्च्छित लव चढ़ाइ रथ लीन्हा ॥

सीतोवाच ।

माता जीव बहुत दुख भयऊ । सीता कहै कहाँ कुश गयऊ ॥
मोर सत्यकर कवन विचारा । जोपै लव उनसन रण हारा ॥
जो कुश होतेउ इह परसंगा । सबको मारि करत रण रंगा ॥
तब लग रण करते लव वीरा । जबलग कुश आतो रणधीरा ॥
गयो वृथा सब सुकृत हमारो । इह दुखकर कहुँ नाहिं निवारो ॥
वे अगणित लवकुमर अकेला । तिन पापिन बड़ कीन्ह अपेला ॥
रुधिर धार लागा मुखवाना । सुन्दर चंद्र हंस परमाना ॥
अति कोमल सुकुमार शरीरा । दारुन शरन कीन्ह रणपीरा ॥
बारहिं वर्ष एक फल मूला । विनु सरवरिके पंकज फूला ॥
वे निर्दयी होहिं नहिं वीरा । बनवासिन कहँ कीन्हीं पीरा ॥
बालक कुश नाहीं इह ठाऊ । लवकर दुःख कहौं कहँ जाऊ ॥
रोवति सिया जियहि रणभारा । आये कुश लै वनफल भारा ॥
आगम दुःख जनाव शरीरा । शीश समिध लोचन झरि नीरा॥
मानत दुःख आश्रम नियरावा । आजु कुमर लव अग्र न पावा ॥
लागत संग बहोरेउ आजू । घरही रहौ जननि कर काजू ॥
दोहा–रुदन करत दुख मानत, आश्रम आयउ वीर ॥
देखेउ सीतहि रोवत, कुशहू लोचन नीर ॥११०॥
धरि फल समिध जननि पग धरयो। माता आजु कहा लव करयो ॥
आजु न आगे आयउ मोरे । देखौं जीव विषम दुख तोरे ॥

सीतोवाच ।

कहेउ नृपतिकर यज्ञ तुरंगा । क्रोधित लव लै धरेउ तुरंगा ॥

अगणित वीर विषम रण कीन्हा । अब सुनियत लव धरि उन लीन्हा ॥
सुमिरत लव लोचन अति नीरा । तुम बिनु कौन छुड़ावै वीरा ॥
सुनते जीव बहुत दुख माना । दारुण कुश लीन्हों धनु बाना ॥
क्रोधित बाण गहे रिसिआई । मारौं एकौ जियत न जाई ॥
वैरी मारि करौं क्षयकारा । अरि शिर छीन रुधिरकी धारा ॥
इंद्र वरुण कुबेर यम होई । यक्ष गंधर्व करैं दिश कोई ॥
देवा सबै अनीलै जेते । अवरौ सुर नर नाग समेते ॥
सबहि जीत आनौं लव वीरा । जननी हृदय धरहु तुम धीरा ॥
देहु अस्त्र मैं जाउँ गुहारी । आनौं लव दारुण रणमारी ॥
वचन सुनत सीता सुख माना । दीन्ह आनि दारुण धनु बाना ॥
जननी चरण बन्दि पुनि वीरा । गर्जत चले महारणधीरा ॥
क्रोधित वीर आय नियरावा । जनु कुंजरकहँ मृगरिपु धावा ॥
दूरिहिते देखेउ रण साजा । बहुरौ कहा जावहौ भाजा ॥
कै छाँड़ौं बंधो जहँ भाई । नातरु युद्ध करहु इत आई ॥
सैना सबै भई भयभीता । देख्यो कुश बड़ वीर अजीता ॥
हाँक सुनत सबही भय माना । मानहु काल आय नियराना ॥
कनकध्वजा धरणी खसि परी । ऊपर मुकुट गीध पगु धरी ॥
कर ते खसे धनुष अरु बाना । अशकुन होत सबन भय माना ॥
अछिते सूझ गगन उजियारा । कुश शिर मुकुट गगन जनु तारा ॥

दोहा-अशकुन भयो शत्रुहन, सबै कटक मनशंक ॥
पुरुषोत्तम कुश आवत, रणमें भा आतंक ॥ १११ ॥

जैमिनिरुवाच ।

आवत कुश शत्रुघ्न कुमारा । सेनापतिसों कहेउ विचारा ॥
यह तो वीर महा बरियारा । तुम सरवर कोउ नाहिं जुझारा ॥
इहसन रन तुम करहु प्रचारा । बाँधि लेहु जनि करहु विचारा ॥
सुनत वचन सेनापति बोला । ये तो मैं मारब रणडोला ॥

अवली बल सेनापति धावा। कुवँरहि रणै प्रचारत आवा ॥
मेले दश शर अतिहि प्रचंडा। कुश कुमार कीन्हे शतखंडा ॥
कुशकुमार कहँ पुनि रिस लागी। मानहु प्रलयकालकी आगी ॥
सारथि सहित हनेउ रथ जेता। तिल प्रमाण करि तुरँग समेता ॥
पुनि दारुण शर कुश फटकारा। साज सहित सेनापति मारा ॥
हस्त चरण शिर धरणी पारा। खसेउ मुकुट कुंडल असिधारा ॥
इह विधि सेनापति रण मारी। बालक लागा भ्रात गुहारी ॥
गज आरूढ़ शक्ति कर लीन्हे। मारेसि कुमर विषम शर कीन्हे ॥
शक्ती विषम वज्रकी धारा। मानहु जरति अग्नि असरारा ॥
जरत आथ कुशके शिर लागी। निष्फल शक्ति तानि जनु आगी॥
पुनि जानकिनंदन रिसिआना। गहे गदा रण करै मशाना ॥
कुंजरमाथ धरणि खसि परिया। भिन्न भिन्न आठौ अँग करिया ॥
कुशके अंग रुधिर लपटाना। मानहु तनु मर्कतमणि साना ॥
पुनि गज आनि चढ़ा वरवीरा। बहुरिव छेकि कीन्ह कुश पीरा ॥
करि अँधियार छेकि चहुँ पासा। मानहु राहु तरणिको ग्रासा ॥
पुनि कुश वीर चक्र लै धावा। सबही कर रथ धरणि खसावा ॥
वैरिन वधि रण भयो निरारा। मानहु भानु बहुत उजियारा ॥
योधा भये हीन कर चरना। ताकहिं सबै शत्रुहन शरना ॥
दारुण रण कीन्हों तेहि काला। रिपु शिर छीनि करौ शिव माला ॥
शूरवीर कुंजर हय तोपा। मानहु दंड लिये शिव कोपा ॥
कुंजर कुंभ विदारत सोहा। अवरो रुधिर भये रण मोहा ॥
जानकि सुत सम कोउ न तुला। चारौ दिशि टेसू जनु फूला ॥
दावानल कुश वीर समासा। यह रणरिपु सब भये अनासा ॥
कुंजर रथ पैदल बहुवीरा। सही न काहू कुशकी पीरा ॥
जस वसंत तरुवर झरि पारे। जित देखो तित धरणी डारे ॥
सुता बेंचि आनै जे धनही। धर्म हरहिं कछु कारण विनही ॥

तैसे निष्फल भे सब वीरा । कोउ न सन्मुख बाँधे धीरा ॥
राम कहत जस पाप पराई । तिमि कुश आगे कोउ न रहाई ॥
दोहा–देखि वीर शत्रुहन जिय, बहु प्रकार दुख मान ॥
कहै कविदास विधाता, कीन्ह आनकी आन॥११२॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम
त्रयस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

जैमिनिरुवाच ।

कुश कीन्ही दारुण रण मारी । लगे वीर शत्रुघ्न गुहारी ॥
मारनि कुश बाणन तब आई । अतिदारुण शर सहे न जाई ॥
कुशकुमार रण अति सामंता । रथ चूरन कीन्हे बलवंता ॥
सीता सत्य राम अनुहारी । बल शत्रुघ्न हनै संभारी ॥
जे जे मेलहिं कुशके अंगा । निष्फल सबै भयो बल भंगा ॥
बाण साठि पुनि कुश फटकारा । वीर शत्रुहनके हिय मारा ॥
रथते धरणि परेउ कुलचंदा । गिरिवरसे जनु खसेउ गयंदा ॥
वीर शत्रुहन मूर्च्छित भयऊ । जे उबरे ते कौशल गयऊ ॥
तेहि क्षण लव उठि भयउ अनंदा । वर्षेउ जल जनु सूखत कंदा ॥
दुवौ वीर शशिवदन समाना । एकानल इक पवन प्रभाना ॥
जो योधा बंधे दुख भारी । रामचंद्र कहँ कीन्ह गुहारी ॥
तपस्वी रूप कीन्ह रघुनंदा । भूमि शयन भोजन फल कंदा ॥
अंबर अजिन दंड कर लीन्हे । तिल घृत होम रैनि दिन कीन्हे ॥
भायन सहित मुनिन परिवारा । कनक सियाते रहै न न्यारा ॥
पंकज नयन सदा कर सोहा । होम धूमते अतिकर लोहा ॥
कनक खंभकर मंडप जहँवा । जाय पुकारे प्रभु हैं तहँवा ॥
कहनि शत्रुहन बहु दुख पावा । गद्गद गिरा जाय कहि तावा ॥
सकल मेदिनी फिरेउ तुरंगा । तेहि सबकर बल कीन्हेउ भंगा ॥
ऋषि आश्रम दारुण धनुधारी । आवि प्रचंड तुमरी अनुहारी ॥

धरणि तुरो सब मारनि वीरा । रिपुसूदनहि कीन्ह बड़ि पीरा ॥
जवनै आय तुरंगम धरिया । सो तो रणमहँ मूर्च्छित करिया ॥
दोहा–कालरूप रण दूसरा, रणहि प्रचारेउ आइ ॥
पुरुषोत्तम रण जीतिकरि, भाई लीन्ह छुडाइ ॥११३॥

दूत उवाच ।

सुनु प्रभु रामचंद्र हम कहही । तुमरे सुमिरत भ्रम नाहिं रहही ॥
देखत दरशन प्रात तुम्हारा । रण सोवहि शत्रुघ्न कुमारा ॥
रामचंद्र सोचहिं जियमाहीं । तीनि भुवन योधा कहुँ नाहीं ॥
कै विलाप रघुनंदन कहहीं । वीर शत्रुहन बड़ दुख सहहीं ॥
रावण वध ऋषि यज्ञ करावा । वीर शत्रुहन तहँ दुख पावा ॥
सुंदर आज्ञा पालक भ्राता । कवन दोषते वीर निपाता ॥
बोले राम सुनहु तुम शेषा । जहँ शत्रुघ्न अहै जेहि देशा ॥
मैं दीक्षित तुम जाहु गुहारी । लावहु तुरँग भाइ अनु धारी ॥
लछमन कुमर गहे पग आई । प्रभु आज्ञा ली शीश चढ़ाई ॥
लियो रिसाय धनुष कर वीरा । चलेउ कोपि भाईकी पीरा ॥
कंचनरथहि भये असवारा । अतिप्रचंड भुज महा जुझारा ॥
अरुणवरण रथ धुजा पताका । तनु चन्दन शिरमाल सुभाका ॥
कालस्वरूप युद्ध नित चहहीं । सुन्दर तरुण गयंदनु चढ़हीं ॥
एकनके सब अम्बर सेता । श्वेत पताका ध्वजा समेता ॥
एक नारीजित धर्म शरीरा । इंद्रियजीत काहु नहिं पीरा ॥
बाहर नगर निकसि भये ठाढ़े । बल जस सबल महोदधि बाढ़े ॥
गज तुरंग खुररेणु उड़ानी । बहाति नदीते सबै सुखानी ॥
गज पग पर्वत होइ मशाना । वन द्रुम टूटि खेत अनुमाना ॥
तिरन उड़ाय पशुन मुख परई । रथ खुर रेणु गगन लगि उड़ई ॥
गगन मेघमय कर्दम भारा । कुंजर शुंड कराहिं जलधारा ॥
गर्जत चलेउ तुरो गज वीरा । धरणीमहँ धनु जनु गंभीरा ॥
रथपायक सारथी तुरंगा । जस गिरिवर तस सबै मतंगा ॥

दोहा—दिग्गज धरणी डोलई, हाले स्वर्ग पताल ॥
पुरुषोत्तम अहिपति चले, डोलि उठे दिगपाल ११४॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि सुरथयुद्धवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ३४॥

जैमिनिरुवाच ।

जहाँ परे रण मूर्च्छित भाई । सुत सुमित्र तहँ पहुँचे जाई ॥
देखेउ वीरहि विगलित केशा । सोवहिं इकलो रण परदेशा ॥
देखि भ्रात अति विस्मय भयऊ । जियमें क्रोध वज्र जनु ठयऊ ॥

कुश उवाच ।

देखिये बहुत भयावनि सैना । रिपु अंकुश कुश बोले बैना ॥
अगणित रथ सारथी गयंदा । भय जनि मानहु करहि अनंदा ॥
लव बोले सुनि बंदी छोरा । अब देखहु पुरुषारथ मोरा ॥
जस छन कूष्मांड फल होई । तस मारौं रिपु जतन न होई ॥
पुनि जस कदली थंभ रसाला । कुंजर काटि करौं रुँडमाला ॥
जनु कोमल फल वन झरि गिरही । तस मारब रिपु सब भुव परही ॥
मारत सबहिन लावहु घोषा । जस अगस्त्यमुनि सागर शोषा ॥
जिहि वन सिंह एक रह छावा । कहा भयो वहँ जंबुक आवा ॥
भले वहो मैं धनुष विहीना । मरिये सबै न बोलिये दीना ॥
लवदिनमणिसों दोउ कर जोरा । करौं प्रणाम परमहित मोरा ॥
जाते तीनि भुवन उजियारा । कृपा तुम्हारि शत्रु हो छारा ॥
किरणिसहस्र ज्योतेकर अंगा । वंदौं रथ मुखसहस तुरंगा ॥
नित नित असुरनकर नित भंगा । द्वादशरवि प्रभु महाप्रसंगा ॥
बारहिं कला रूप नवखंडा । तुम प्रभु विदित प्रकट नव खंडा ॥

दोहा—लव दिनमणि अवधारेउ, तुम हो साखि हमार ॥
रिपु अनेक मैं एक हौ, धनुविहीन तुव भार॥ ११५॥

उत्तरइनि दक्षिणइनि वासा । जल थल गगन महापरकासा ॥
प्रणवौं तीनि भुवन उजियारा । तुमहीते उपजैं जलधारा ॥

तुम अनेक लोचन जग एका। भानु भानुकरि त्रिभुवन देका ॥
कश्यपवंशकेर उजियारा। विप्ररूप तुम महाजुझारा ॥
तुमही विश्व करहु प्रतिपाला। तुम्हरे दरश जाय भ्रम जाला ॥
वेद चारि जे निगम पुराना। सब कोउ करै तुम्हार बखाना ॥
ब्रह्म रुद्र तुम देव महेशा। गुण तुम्हार नित बरणै शेषा ॥
नाम लेत नाशै सब रोगा। सेवत तुमहिं न होइ वियोगा ॥
नवौं ग्रहन कर तुमहीं राजा। अति निर्मल तनु कुंडल साजा ॥

जैमिनिरुवाच।

रवि स्तुति कीन्ही लववीरा। सुनि संतुष्ट भयउ रणधीरा ॥
दीन्ह धनुष अरु बाण प्रचंडा। कवच सनाह तेज भुजदंडा ॥
सिथा सत्य मुनि दीन्ह अशीशा। रवि धनुबाण दीन्ह बलईशा ॥
लव कुश बीर करत आनंदा। दुवौ सिंह सब सैन गयंदा ॥
दुवौ वीर रण बनमें वैसे। दारुण दावानलसम जैसे ॥
लछिमन सैन जरन सब लागी। चहुँ दिशि उठी सुरखुरी आगी॥
अस लव कुश पाषाण प्रहारा। जस घन वर्षै पर्वत धारा ॥
जैसे मथत महोदधि जागा। दोउ मंदिर भै वीर सुलागा ॥
शेषकाल जित छेकि अरोसा। छेकिनि कटक कुशहि द्वै कोसा ॥
और सबै सेनाजित रहहीं। छेकत कुशहि सबै तनु दहहीं ॥
जेहि गजके लागै लवबाना। सहित महावत होय मशाना ॥
रथ सों रथ गजसों गज माराहिं। हयपावक दावानल जारहिं ॥
लवके शर जस वज्र समाना। लागत बाण होत बिनुप्राना ॥
अतिदारुण रण काहु न येवा। मानहु प्रलयकालके मेघा ॥
कवच फरास सकल भुव परे। काहू बीर धीर नहिं धरे ॥
सैन सहस्रनु मारि उडावहिं। कोटिन बहुरि महारथ आवहिं ॥
अगणित कटक न जाय सम्हारा। जानकिनंदन कीन्ह विचारा ॥

दोहा-रण वन युद्ध भयानक, लवबल वरणि न जाय ॥
हरिप्रसाद पुरुषोत्तम, कछु कछु यश कह गाय॥११६॥

लव कुश रणहि भयो संभेरा। छाकि रहे जनु चली सफेरा॥
दुवौ सिंह रण अति बल भयऊ। गज रथ तुरंग दशों दिशि गयऊ॥
लव कीन्हे दारुण मन भंगा। कुशहि न देखेउ आपन संगा॥
कुशतनु वीर बहुत दुख माना। तबलगि एकु दैत्य नियराना॥
तिजिजलनाम दैत्य जो मारा। ताकर मातुल महा जुझारा॥
रुधिर जवन है ताकर नामा। रामशरणि रहे कौशलधामा॥
कटक सहित लछिमन सँग आवा। लवको विषम बाण गहि धावा॥
जानकि नंदन महा जुझारा। रविशर दैत्य सैन संहारा॥
लव कर वीर महा रणधीरा। रवि प्रकाश किमि रहै कुहीरा॥
देखत दैत्य सबै रण भागा। लवकुमार तहँ गर्जन लागा॥
पुनि रुधिराक्ष महाशर लीन्हा। रविशिर चोट कुठिजन कीन्हा॥
लव कुमार लै चक्रहि धावा। राक्षसका रथ गगन उडावा॥
लवकर घाउ जवन शिरवाजा। रुधिरप्रवाह अधिक तनु छाजा॥
अंतरिक्ष भा लव चक्रपानी। विषम युद्ध नहिं जाय बखानी॥
मारेउ चक्र दैत्य किय नासा। देखहिं धरणि परे चहुँपासा॥
कोउ बिनु माथ कोउ विनु चरना। कंध कबंध परे आभरना॥
लवकुमार वोदर गज फारा। तहँ लुकान कादर परिवारा॥
नृप दशरथको मित्र सुजाना। ताके दश सुत आय तुलाना॥
जीनि असुरमति सुरधम नाऊ। एक सुकेत महोदर गाऊ॥
चंद्रदयाकर कलिमल वीरा। सिंह दशम मंदिर रणधीरा॥
लव जहँ रहै चक्र कर लीन्हे। दशदश घाय दशौ मिलि कीन्हे॥
सकल घाय लवशिरपर मारे। लवकर चक्र धरणि पहँ डारे॥
लव कुमार पीछे संभारा। मारे दशौं गये विकरारा॥
वेद शास्त्र ये पंथ कराई। ते कुपंथ पुनि नाहिं पराई॥
तेहि विधि हने परे सब खेता। रुधिरअक्ष हनै गदा समेता॥
दानव कीन्ह विषम रण जूझी। आपुहि आपुन रहे अरूझी॥
योधा उभय सबल भुजदंडा। मारेसि लवहि गदा परचंडा॥

सीता सत्य हृदय महँ धीरकै । मूर्च्छित भयो धरणिमहँ परिकै ॥
दैत्यहुके लागे शरबाना । जान न परे बीरको आना ॥
सीता सत्य ऊर्ध्व ह्वै धावै । रिपु कोउ कुमर निकट नहिं आवै ॥
मूर्च्छा तजी घडी द्वै भयऊ । उठि लव कोपि महा रिस कियऊ ॥
रुधिर नयन पुनि उठे रिसाई । दुहूँ वीर बल बरणि न जाई ॥
कौतकही जानौ लव काला । दानव मारि धरणिमें घाला ॥
उठेउ दैत्य पुनि खड्ग सँभारा । लव पुनि केश गहे दै मारा ॥
बज्र कौन द्रुतवद्दहि नवीना । दैत्यक माथ भूमि लै दीन्हा ॥
रविकर दीन्ह धनुष कर लीन्हा । मारि सैन दशहूँ दिश दीन्हा ॥
जैसे गर्भ वसत नर ज्ञाना । जन्मत होइ अचेत निदाना ॥
तैसे बहुरि बहुरि जित आवै । रहै न सन्मुख जो लव धावै ॥
जैसे कितहुँ गहन तृण होई । थोरेहि अनल भस्म कर सोई ॥
तैसे लव कुमार वरियारा । दानव कटक जारि किय छारा ॥
दोहा-रामचन्द्रके बालक, कोउ न जीतै पार ॥
पुरुषोत्तमको जानई, बहुविधि राम पसार ॥ ११७ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम पञ्चत्रिंशत्तमोऽध्यायः ३५

जैमिनिरुवाच ।

लक्ष्मण कुशहि होइ अति जूझी । बाणहि बाण जाय नहिं बूझी ॥
उभय महाबल अतिहि प्रचंडा । योधा उभय सबल भुजदंडा ॥
जितने बाण लखन फटकारा । बाणहि बाण सबै कुश टारा ॥
बोलेउ कुश सुनि शेष प्रमाना । थिर रहियो मेलतहौं बाना ॥
कहि पुनि विषम बाण फटकारा । लछिमनको नहिं रहे सँभारा ॥
द्वै घटिका रथ भ्रमत भुलाना । चारिउ तुरँग भये बिनु प्राना ॥
बहुरि आन रथ शेषकुमारा । वर्षन लागे बाण अपारा ॥
बिना सनाह कवच उर करो । कुशकर मुकुट धरणि खसि परो ॥
निर्मल बिना कवच रणधीरा । कचुली बिन जस नाग शरीरा ॥

अति सुन्दर मर्कतमणिवेषा । मधुर वचन बोले सुन शेषा ॥
धन्य धन्य तुम लषण कुमारा । मोर छुड़ायउ तनुकर भारा ॥
शत्रुभावना तुम रण कीन्हा । युद्धसमय अनहित नहिं लीन्हा ॥
श्रमित भयउँ मैं इनके भारा । काटेउ कवच कीन्ह उपकारा ॥
सैन तुम्हारि लगति नहिं भारी । तुमसों विषम कीन्ह हम मारी ॥
कोप लखन सुनत ये वचना । लागे दुवौ युद्धकी रचना ॥
सीतानन्दन बड़ बलवन्ता । छाँड़ेउ अग्नि बाण कोपंता ॥
सैन सहित लागे रथ जरना । ध्वजा पताक मुकुट आभरणा ॥
कुंजर हय पुनि जरे सनाहा । छत्र चमर बहु वस्त्र सुदाहा ॥
अस्त्र सबै रण जरि जरि गयऊ । लछिमन हृदय बहुत दुख भयऊ ॥
वरुण बाण मेलेउ मनजानी । तुरतै चहुँदिशि अग्नि सिरानी ॥
पुनि लव पवन बाण परचंडा । मत्त गयंद भये शतखंडा ॥
कुश अति युद्ध कियो विपरीता । जित आये कोउ सकेउ न जीता ॥

जैमिनिरुवाच ।

सेनापतिहि कालजित नाऊ । शेष सहाय कीन्ह तेहि ठाऊ ॥
सुनहु लषण बोलत हौं आजू । यासन पुनि करिहौं रण साजू ॥
जबलागि ना आवै लघु भाई । तबलागि मारौं जियत न जाई ॥
कहेउ कालजित सुनहु कुमारा । तुमसन मैं करिवे परिहारा ॥

दोहा–पुरुषोत्तम कुश सरवरि, कोउ नहिं दिखियत वीर ॥
बालरूप अति योधा, महाशूर रणधीर ॥ ११८ ॥

कह लव कुश करिहौं मैं शोधा । अजपागाथन तस तुम योधा ॥
बोलहु वृथा बोल नहिं जानहु । मत हमको बालक करि मानहु ॥
हमरे गुणको को संभारै । तोहि न लाज नहिं जीव विचारै ॥
हमरा लघु भाई तुम मारा । अब हम तुमपर करहिं प्रहारा ॥
कहसि कुबोल न बूझिय असना । अब तुम्हरी मैं काटब रसना ॥
लवकर सैन सबै वधवायउ । लाज न भई रणहि फिरि आयउ ॥

काटउ जीभ न जिय बल धरऊ। जैसे तुमहि मुनिन व्रत करऊ॥
क्रोध कालजित बहु शरमेला। मारेसि कुशहि कीन्ह शरपेला॥
तेहि क्षण कुश बाँधे कर धरयो। अंतरही शर तिल तिल करयो॥
कुश पुनि बाण धनुष कर ठाटा। रिपुकर माथ सकुंडल काटा॥
भये कालजित कंध कवंधा। क्रोधित लखन बहुरि शरसंधा॥
बरषन लागे बाण विशाला। छीने बट बड़ ताल तमाला॥
भेदे कुश केशव अंग बाना। सीय सत्य तें कछु न पिराना॥
तबहि बाण पुनि कुश फटकारा। लछिमन कर रथ भुव दै मारा॥
उठि लछिमन पुनि क्रोध सँभारा। लहलहात साँपिनि जनु कारा॥
रिपुअंकुश कुश शर पुनि टारा। शक्तीसहित अस्त्र पुनि फारा॥
कुंतल खड्ग परशि असिधारा। फरस त्रिशूल काटि भुव डारा॥
बालमीकिऋषि जो शर दीन्हा। गर्जत कुश सोई कर लीन्हा॥
गृध्रपंख पंखयो अनियारा। जाके चले न किहूँ सँभारा॥
गगनहुते दामिनि जनु धाई। भेदेउ हृदय लषणको जाई॥
राम कहत तनु धरणी परयो। जनु रविविंब ज्योति विनु गिरयो॥
इह अंतर कुश गर्जन लागे। कायर बहुत जीव लै भागे॥
लव गर्जें रण देखि अकूता। आनेउ गज रथ घेरि बहूता॥
मुनि लरिका जे अहैं प्रसंगा। दीन्हेउ तिनहिं सहस्र तुरंगा॥
बालमीकिकर आश्रम जहँही। गर्जत दुऊ भाइ रण तहँही॥

दोहा—लछिमन परेउ धरणिमें, सबै कटक वितरान॥
पुरुषोत्तम जो प्रभु लिखा, सोई होइ निदान॥११९॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः॥३६॥

जैमिनिरुवाच।

लछिमन मूर्च्छि धरणिपर परिया। तेहि निशि राम स्वप्न अनुसरिया॥
दोउ भाई देखे विकरारा। बाल देखि रण महा जुझारा॥

मखमंडप तहँ गंगातीरा। व्यापेउ रामहि दुःख शरीरा॥
मुनिन सहित वेदीमहँ रहही। निकट बुलाय भरतसन कहही॥

रामचन्द्र उवाच।

सुनहु भरत कछु सुधि नहिं पायउ। लषन शत्रुहन अजहु न आयउ॥
स्वप्न मध्य देखेउँ दोउ वीरा। रुधिर भरे रण परे शरीरा॥
अव मम एक बचन तुम मानहु। लखन शत्रुहनको यहँ आनहु॥
सुनियत हौं बालक दोउ वीरा। तिन मूर्च्छित कीन्हे रणधीरा॥
वर्षदिवस फिरि आव तुरंगा। दिन दशमें कीन्हों इनि भंगा॥
द्वै बालक वैरी कोउ मोरा। देखहु ऋषि आश्रमको चोरा॥
नृप सुग्रीव विभीषण संगा। अंगद हनूमान रिपुभंगा॥
देखहु वालमीकि हैं कवना। तिनहुव घरह राखि उनि कवना॥
पंचदूत तब भरत बुलाये। लैकरि निकट भरतके आये॥
कहैं राम तुम सुख मोहि देहू। कुशल शत्रुहन लछिमन लेहू॥
लछिमन अहै कवन रण मोहा। काकर द्वै बालक रणसोहा॥
गज रथ वीर सबै उन मारा। काकर सुत तुम करिय विचारा॥
पूछब उनहिं जवन पितु माता। सीतावदन सदृष्टिकि बाता॥

जैमिनिरुवाच।

कहहिं राम उनकी अनहारी। तबलगि उतते आय गुहारी॥
रोवत रुधिर देह लपटाना। लव कुशके लागै बड़ बाना॥
लखन शत्रुहन रणमें मारे। सुनहु राम केउ धीर न धारे॥
सब मिलि शरनि राम गुहरावहिं। गहि प्रभु चरण विनय सब लावहिं॥
कराहिं गुहारि पराहिं पुनि चरना। जीवन मरन रामकी शरना॥
अरु लछिमन शत्रुघ्न कुमारा। कुशके वाण परे विकरारा॥
टेसू जनु देखिये बसंता। वहुत परे नाहिं जानिय अंता॥
लछिमन युद्ध वहुत विधि करहीं। कुशके वाण मूर्च्छि भुव परहीं॥
द्वै लरिकन कीन्हौं बड़ भारी। लागहु काहिन राम गुहारी॥
उत जाये करिहैं वे भंगा। तुम बिनु मिलहि न यज्ञ तुरंगा॥

दोहा-जस गाढ़े रघुनंदन, तस प्रभु अवर न कोय ॥
पुरुषोत्तम कवि कहै इमि,राम करैं सो होय॥१२०॥

यहै वचन सुनि लोचन नीरा । मूर्च्छित परे धरणि रघुवीरा ॥
रामहिं परत भरत पुनि रोवा । अमृत नीर वदन लै धोवा ॥
चेतानि हो जनि करहु विषादा । मैं उनसों करिहौं अब बाधा ॥
लखन शत्रुहन जेहि वन अहहीं । जैहौं तहाँ भरत अस कहहीं ॥
विनु अपराध तजी वनमाहा । सीताकर दुख कहैं मैं काहा ॥
प्रभु तेहि पाप लखन भुव परे । तेहिकर मृतक भले निस्तरे ॥
हमरे अछत गईं वन सीता । हमहूँ दुखित रहत भयभीता ॥
लछिमन संग हमहुँ रण मरिहैं । तो अब भले ताहि अघ तरिहैं ॥
कौशलपुरी रहौ रघुवीरा । मैं जैहौं जहँ लछिमनधीरा ॥
द्वै बालकके रण महँ रही । सुनियत वीरधीर तिनि सही ॥

रामचन्द्र उवाच ।

गवनहु भरत कहा तुम मानहु । ते दोउ बालक इहाँ धरि आनहु ॥
जहँ रण परे शत्रुहन शेषा । देखहु उनहिं अहैं केहि देशा ॥
संग लेहु अंगद हनुमंता । ऋक्षराज योधा जम्बवन्ता ॥
जाहु तुरत तुम भरत कुमारा । सब देखत जहँ बाल जुझारा ॥
भानुवंशकर इहै स्वभाऊ । जेठे कहा न मेटै काऊ ॥
राजा वनोवास मोहि दीन्हा । चौदह वर्ष वनहिं व्रत कीन्हा ॥
नंदीग्राम जटा शिर कीन्हा । सीता वन काहे कहँ दीन्हा ॥
जो मैं कहौं सोइ अब सुनहू । सीता वनहिं कहा अब गुनहू ॥
जाहु वनहिं जहँ वीरन भंगा । अंगद हनूमान लै संगा ॥
आतुर आनहु दोनों भाई । वेगि तुरंगम लेहु छुड़ाई ॥
सीता तजी लोक अपवादा । ताकर करिये कवन विषादा ॥

दोहा-आज्ञा श्रीरघुनाथकी, लीन्हीं शीश चढ़ाय ॥
अंगद हनुमत भरत सँग,जूझन चले बजाय॥१२१॥

क्रोधित भरत चढ़े रथ आई । अंगद हनुमत संग लिवाई ॥
रामपुरीते निकरे योधा । भूमि स्वर्ग चहुँ दिशि अवरोधा ॥

भरत उवाच ।

नर वानर पैदर मैमंता । कटक बहुत कछु नाहिन अंता ॥
वीरखेत तुरताहि नियरावा । भरत तुरत हनुमंत बुलावा ॥
देखहु तुम यहि अद्भुत बाता । कुशलव बाणन सबै निपाता ॥
देखौ ये रथ कंध कबंधा । वीर गयंद परेउ जनु अंधा ॥
देखहु तुम यह वनपरदेशा । जहँ प्रिय परे शत्रुहन शेशा ॥
गंगा तीर वीर शतखंडा । रक्तनदी तहँ बहै प्रचंडा ॥
कोउ बिनु कर कोऊ बिनु चरना । कोउ बिनु शिर कोउ बिनु आभरना ॥
कोउ बिनु केश दंत बिनु तहँवा । देखानि रक्तनदी बह तहँवा ॥
तुम हनुमत बड़वीर निशंका । सागर तरेउ दही गढ़ लंका ॥
अब इह रक्त नदी घहराई । देखहु मूर्च्छि परे जहँ भाई ॥
अवर देखु लवकुश हय रहहीं । भरत पवन नंदन सन कहहीं ॥

हनुमानुवाच ।

पुनि हनुमन्त भरत समुझाई । जेहि विधि सिंधु तरेउ सब गाई ॥
उत सीताकर सत्य सहाई । इत प्रताप त्रैलोक्य गुसाई ॥
सीता कारण बल तब भयऊ । अब जानत मारग को लयऊ ॥
सीता विमुख जीव अति डरई । शोणित नदी कवनविधि तरई ॥
आज्ञा भरत तुम्हारि अपेला । रक्तनदी तरि जाउँ अकेला ॥
सुमिरण रामचरण कर करेऊ । तुम प्रसाद सागर मैं तरेऊ ॥
मन सुमिरण सीताकर लयऊ । पावत बल चौगुण तब भयऊ ॥
बल पायउ आनन्दित वीरा । फाँदेउ हनुमत बढ़ेउ शरीरा ॥
तुरत नदी तरि गे तेहि देशा । जहँवा परे शत्रुहन शेशा ॥
शेष शत्रुहन भे जहँ भंगा । देखि न जाय विषमशर अंगा ॥
जाय उठाये लछिमन वीरा । सीताके दुख दुखित शरीरा ॥

दोऊ वीर हनुमंत उठाये । भरत समीप तुरत चलि आये ॥
देखि भरत भाइनकी देहा । रुदन कीन्ह जिय अधिक सनेहा ॥
भेंदेउ कुशके बाण शरीरा । पुनि पुनि भेटहिं लोचन नीरा ॥
दुहूँ भ्रात कर कीन्ह सँभारा । बड़बड़ वीर राखि रखवारा ॥
राम कटक बाधि गयउ तुरंगा । महाबीर मारे सब संगा ॥

हनुमानुवाच ।

रावण मेघनादके बाना । तहाँ वीर अस कछु न पिराना ॥
कुशके बाण विषम उर लागे । मूर्च्छित परे अजहुँ नहिं जागे ॥

दोहा—सकल वीर संहारेऊ, रिपुहन शेष समेत ॥
मारुतनन्दन बोलेऊ, उहै हाँक रणदेत ॥ १२२ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम सप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

जैमिनिरुवाच ।

यहि अन्तर कुश रण नियराना । लीन्हे कालरूप धनुवाना ॥
दोउ वीर अति रण परकाशा । जैसे अंधकार रवि नाशा ॥
भरतवीर तहँ कटक चलावा । मानो मेघ प्रलय चलि आवा ॥
गजमाथेते रथ अनुसरे । ते लै लव चूरन सब करे ॥
पैदर वीर रु कर्म तुरंगा । सेनापति तिनहूँ करि भंगा ॥
तिनकर लव कीन्हेउ शतखंडा । मारेउ महावीर बरबंडा ॥
शिरफेरी कर खड्ग सँभारा । हस्तीकर चाऱ्यो उर फारा ॥
कुशकर बाण विषम उर भारी । काटे गजके कुंभ विदारी ॥
गजमुक्ता दुहुँ दिशि विथराना । मानहु तारा गगन समाना ॥
लवके खड्ग उठी रण आगी । भरत सैन कहँ जारन लागी ॥
कुशके बाण विषम परचंडा । अरि शिर भुजा करैं शतखंडा ॥
कंध कबंध परे रण माहाँ । मुक्ताफल बिखरे जहँ ताहाँ ॥
कुशके बाण धनुषके सादा । भय बाहिर दिगपाल विषादा ॥

देखि भरत जिय कीन्ह विचारा । ये तो मानहु शंभु कुमारा ॥
एक कार्त्तिक्वर एक गणेशा । एक अनल एक पवन प्रवेशा ॥
वरषाहिं विषम बाण वरियारा । मानो प्रलय कालकी धारा ॥

जैमिनिरुवाच ।

बालक दोउ देखि हनुमंता । कहे भरतसन वचन तुरंता ॥
इनकर काकपक्ष शरजाला । श्यामसघन उर बाहु विशाला ॥
चरण कमल सुन्दर अति भारी ! रामचन्द्रकी सब उनिहारी ॥
जतन करौ ये जीति न जैहैं । कोउ न उवरैं जे रण धैहैं ॥
भरत कुमर रथ चढ़न न पावा । तब लगि लव क्रोधित ह्वै धावा ॥
देखि भरत कुश उठे रिसाई । देखहु भाइनकी मनुसाई ॥
मैं रिपुकर अंकुश कुश वीरा । सबके भेदे बाण शरीरा ॥

दोहा—कुशलव वीर महाबल, गर्जाहिं महाप्रचंड ॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, दोनोंके भुजदंड ॥ १२३ ॥

भरत उवाच ।

देहु तुरँग छाँड़हु लरिकाई । तुमसों जूझत कवन बड़ाई ॥
तुम बनवासी तपसिनि माता । तुम बालक अनाथ द्वौ भ्राता ॥
जननी पिता कहौ रणधीरा । छाँडउ रणहि जाहु घर वीरा ॥
तुमहिं देखि करुणा चित दीन्हा । क्षमैं सबहि हम जो तुम कीन्हा ॥
यहै सुनत कुश बहुरि रिसाना । साधेउ प्रलय काल जनु बाना ॥
मारिनि भरत बाण लै साता । पंच नील नल अति संघाता ॥
तीनि सहस्र बाण जमवन्ता । अवरौ बहुत रथी सामंता ॥
जिन वीरनके लागे बाना । मूर्च्छित परे सबै अवसाना ॥
पुनि फिरि भरतकुमार प्रचंडा । लवकर बाण कीन्ह शतखंडा ॥
जे जे भरत गहे शरसोई । सिया सत्यते निष्फल होई ॥
कुश पुनि खड्गफरी संभारा । भरतक धनुष काटि भुवि डारा ॥
जानि न जाय रामका करे । भरतहु मूर्च्छित तहँ रण परे ॥

भरत देखि हनुमंत रिसाना। गर्जेउ घन कोटिन अनुमाना॥
हनुमत गिरिवर एक उपारा। कुशके शिर ऊपर लै मारा॥
कुश छाँड़े पुनि दारुण बाना। रेणु भये गिरिवर सब जाना॥
पुनि कुश लव शरसंधि उरंता। मूर्च्छित धरणि परेउ हनुमंता॥
रणमहँ लव कुश गर्जन लागे। कोउ मूर्च्छित कोउ दुहुँ दिशि भागे॥
एक गये कौशल पुर धावा। रामचंद्रसों बात जनावा॥
सुनहु राम रघुनन्दन स्वामी। सब मूर्च्छित भये अंतर्यामी॥
दोउ बालक प्रभु अति रणधीरा। मूर्च्छित भरत सकल कपि वीरा॥
सुनत राम दुख भयो शरीरा। यज्ञ तजेउ भाइनकी पीरा॥
संग विभीषण नृप सुग्रीवा। कर कोदंड चले वनसीवा॥
चलत राम उर धरै न धीरा। आये तुरव जहाँ रणवीरा॥
आवत रामहिं वे नाहिं भागे। दोनों रणहिं रहे हठि आगे॥
देखत ही उपजी बड़ि दाया। भाइनके दुख दुख रघुराया॥
तेहि लछमनसों अधिक सनेहा। तात मात जो तजि निजगेहा॥
जहाँ भयो संग्राम अपारा। तहँ आये श्रीराम भुवारा॥

जैमिनिरुवाच।

आपन अंश सदा चलि आवा। पुत्र कुपुत्र पितहि अति भावा॥
दोहा—देखि दरशि सुत आपने, कहन लगे प्रभु बात॥
पुरुषोत्तम अति दयावश, युद्ध न हृदय समात॥१२४

रामचन्द्र उवाच।

सावधान ह्वै पूछहिं बाता। को तुमरी जननी अरु ताता॥
केहि तुम कहँ धनु बाणसिखावा। कहौ सो केहि जनेउ पहिरावा॥
दोहा—रामचन्द्र लरिकन कहँ, पूछन लागे बात॥
पुरुषोत्तमप्रभु दयाते, पुनि पुनि पुलकित गात१२५॥
धर्मशरीर दोऊ तुमवीरा। अति बलवंत महारणधारी॥
को गुरु केहि वन करहु निवासा। कहहु वचन जनि होहु उदासा॥

रघुनन्दन करुणा जिय धारिकैं। बोलेउ कुश तामस जिय करिकै॥
हम तुम्हरी सेना सब मारी। अबदहुँ हमसन कवन विचारी॥
क्षत्रियधर्म होहि नाहिं ऐसा। तजि पौरुष कादरदहुँ जैसा॥
अब जिनि विलम करहु तुम राजा। लै धनुबाण करहु रणसाजा॥
बिनु जूझे नाहिं देब तुरंगा। कवच चिन्हारि कवन परसंगा॥
कहहिं राम बालक कुलचन्दा। तुम्ह देखि हम बहुत अनंदा॥
तुम सब कथा कहौ समझाई। को तुम मातपिता को भाई॥
यद्यपि सबै कटक तुम मारा। हम तुम अंग न करब प्रहारा॥
रामचन्द्र बहु कारण कीन्हा। बालक वचन कहै तब लीन्हा॥

कुश उवाच।

सुनिये रामचन्द्र मम बाता। वनवासी हम सीता माता॥
क्षमाशील तपस्विनि जियधर्मा। जानत नाहिं पिताकर मर्मा॥
जातकर्म वल्मीकि करावा। दियो जनेऊ वेद पढ़ावा॥
दीन्हे ऋषिय धनुष अरु बाना। अस्त्र शस्त्र कारण भगवाना॥
रामचरित्र जहाँ सिय जानी। बंदि छुड़ाय जहाँ सिय आनी॥
सीखे सबै ध्यान अरु ज्ञाना। स्वस्थचित्त रण निगम बखाना॥
वनमें पर हने सब योधा। काहूवीर रहेउ नाहिं शोधा॥
सीता नाम सुनत मन माना। रामपुत्र ये दोनों जाना॥
धनुष छूटि धरणी खसि परचो। भे मूर्च्छित जिय धीर न धरचो॥
नृप सुग्रीव गहे उठि धाये। लीन्हे राम अंकमें लाये॥
सींचि नयन पूछहि गहि पाऊँ। मोसन राम कहौ सतिभाऊ॥
काहे छाँड़ि धनुष अरु बाना। मोसन कहौ सबै अनुमाना॥
वचन सुनहु सुग्रीव सनेही। इहि वनमें कितहू वैदेही॥

दोहा-रामचंद्र अस बोलहीं, सुन सुग्रीव भुवाल॥
पुरुषोत्तम अस बोलहीं, ये दोउ के कर बाल॥१२६॥

सुग्रीव उवाच।

आदि अहै जो पुरुष पुराना। जे ताकर बालक हम जाना॥

देखहु तुम प्रतिबिंब बिचारी । जे बनमें तुम्हरी अनुहारी ॥
क्षत्रिय धर्म यहै नाहिं होई । इनसन जीव रहै जो गोई ॥
केतहु कहैं वचन विश्रामा । बालक नाहिं तजैं संग्रामा ॥
पुनि कुश लव रण बाण सम्हारा । सुग्रीवहु बड़ द्रुमहु उपारा ॥
डारयो तरुवर कुश शिर आई । टूटो द्रुम तिल तिल ह्वै जाई ॥
कुश रण कोपि कीन्ह शरसाजा । मूर्च्छि परे शाखामृगराजा ॥
बहुरि नील सन्मुख ह्वै धावा । नल गिरिवर कुशशीश बजावा ॥
एको घाव वीर नाहिं जाना । लागत गिरि जनु पुष्पसमाना ॥
पुनि शर वर्षे वीर अकूता । रुधिरहुते नल नील बहूता ॥
पुनि कुश रण दारुणके धावा । बाण जलोदक छौंड़त आवा ॥
जोकन सोखि रुधिर पुनि लीन्हा । नल अरु नील धरणि लै दीन्हा ॥
सब योधा रण परे शरीरा । एकै राम रहे रणधीरा ॥
रामचंद्र तामस जब जाना । कालअनलसम छाँड़ेसि बाना ॥
निष्फल भये सबै रण ऐसे । भिक्षुक जात दुखित गृह जैसे ॥
कुश लव बाण करत रण पेला । ऐसी विधि संग्राम दुहेला ॥
कुश तनु बाण न भेदै कोई । जस निधनीकी इच्छा होई ॥
जेजे छाँड़े रघुपति बाना । छूटे निष्फल होहिं निदाना ॥
जानि न जाय चरित भगवाना । वे प्रभु आदि अंत अवसाना ॥
तीनिलोक विस्मय सब भयऊ । रामचन्द्रसों कुश रण करेऊ ॥
एकहिं एक हनै रणवीरा । रामचन्द्र कुश एक शरीरा ॥

दोहा–अविगति अगम अगोचर, निगम मर्म नहिं जान ॥
पुरुषोत्तमजन तुच्छमति, जैमिनि कीन्ह बखान॥१२७॥

जैमिनिरुवाच ।

जैमिनि कहै भयो जस साजा । सो अब सुन जन्मेजय राजा ॥
सीता वदन देखि अनुहारी । ते प्रतिबिंब जाहिं ना मारी ॥
बाण अनेक तजे रघुनंदा । निष्फल सबै करे कुलचंदा ॥
सुमिरि देव बल अस्तुति करिया । क्रोधित बाण बहुरि कर धरिया ॥

पुत्र पितापहँ छाँड़ेउ बाना। सुर नर नाग लोक अकुलाना॥
सब घटही घट अंतर्यामी। मूर्च्छित भे रघुनंदन स्वामी॥
कैसे कहिये सम जो हारा। रामहि अस कछु कीन्ह पसारा॥
सीतापति मूर्च्छित भे जहँही। कुश लव वीर गये चलि तहँही॥
लीन्ह काढि कुंडल मणिहारा। साधक पंकज चरण अधारा॥
शेषके सकल लीन्ह आभरना। करहिं अनंद उभय धनु धरना॥
अब जे वीर परे रणमाहीं। भूषण काढ़ि काढ़ि लै जाहीं॥
यहि अवसर लव कुशसन बोला। गहि हनुमत जे रणहि अडोला॥
यह सब लै जैंबेउ तहँ सीता। जहँ हनुमंत जननि करहीता॥
रघुपतिके रथ चढ़ि कुश आई। लछिमनके रथ चढ़ि लव जाई॥
वीरन पूछे किय हनुमंता। हमहिं चिन्हावहु सब सामंता॥
कहै पवनसुत नयनन नीरा। देखहु जाम्बवंत बड़वीरा॥
ये अंगद रावण सुत मारा। जे नल नील दैत्य संहारा॥
इनहूँ कीन्ह रामकर काजा। देखहु यहै विभीषण राजा॥
ये कपिराज वीर सुग्रीवा। बड़ योधा शंका नहिं जीवा॥
मूरति मधुर मनोहर बयना। देखहु रामहिं पंकज नैना॥
भरत लखन शत्रुहन कुमारा। विधि विरचो सो इनसन हारा॥
तीनि भुवन कोउ सरबरि नाहीं। समय जानि मूर्च्छित है जाहीं॥

दोहा—असमय समय सबहिको, जे जग धरा शरीर॥
पुरुषोत्तम भव उदधिते, राम लगावहु तीर॥१२८॥

जाम्बवंत हनुमंत जुझारा। दोनों धरि लै चले कुमारा॥
मुनिलरिका आगे सब धाये। सीता सती जहाँ तहँ आये॥
कै आदरु प्रगटे किन जाई। जीति राम रण तोरि दुहाई॥
मणिकुंडल भूषण परधाना। दोउ वनचर कौतुक करि आना॥
जननी पुण्यसहाय तुम्हारा। जयतिपत्र रण भयो हमारा॥
निशिदिन हमरे तुम्हरिहि शरना। युद्ध जीति देखे पुनि चरना॥
अति सुंदर कह वचन सुहाये। सीता दोऊ पुत्र उर लाये॥

भटत सिया वचन इक कहिया । मैं नाहि बंदि छोरि किय तहिया॥
इनको छोड़हु मैं वलिजाऊँ । मरिजैहै इहि हनुमत नाऊँ ॥
जात प्राण राखा इन मोरा । सो अब भयउ खिलौना तोरा ॥
हरिकर चरित जानि नहिं जाई । धरैं वंदि छोरे को आई ॥
तृणते करहिं वज्रकी धारा । वज्रहुते तृण करत निवारा ॥
सीता वचन सुने दोउ वीरा । छोड़ि दीन्ह दोनों कपि धीरा ॥
वन्दे कपिन सियाके चरना । कहैं हमहिं तो तुम इक शरना ॥
हनूमान सब कथा सुनाई । रामकि आज्ञा मेटि न जाई ॥
वरुण पताल यज्ञ करवाये । तेहिक्षण वालमीकि ऋषि आये ॥
सिया सहित कुश लवपद टेका । हमरे तात जननि तुम एका ॥
लव तुरंग धरि यत्न नशावा । आदि अंत सब कथा सुनावा ॥
सुनतहिं वालमीकि दुख माना । स्वर्ग जाय तहँ अमृत आना ॥
चरणकमल रघुनंदन जहवाँ । अमृत तुरत वर्षि दिय तहवाँ ॥
पुनि वर्षे घन अमृत धारा । जागे सबै जे अहैं जुझारा ॥
पुनि जागे रण तीनहु भाई । टेकिन चरण कमल प्रभु धाई ॥
नृपति विभीषण अरु कपिराजा । नल अरु नील उठे करि साजा ॥
बाजन बाजे भये अनंदा । रघुपति वालमीकि पग वंदा ॥

दोहा-तपकर तेज महाऋषि, कहनि रामसन बात ॥
पुरुषोत्तम हरिलीला, गावत गुन न अघात ॥१२९॥

वालमीकिरुवाच ।

सुनहु राम एक बोल हमारा । कुश लव दोनों पुत्र तुम्हारा ॥
तुमहि रामरचना वनवाई । पुत्रन कहँ तुम दीन बड़ाई ॥
सीताकहँ दीनेउ वनजाला । तुमही कीन्ह तहाँ प्रतिपाला ॥
हमरे तपके तुमहीं साखी । तुमहीं हमरे सीता राखी ॥
रामप्रसाद भयउ दो वीरा । तुम्हरी कृपा अभेद शरीरा ॥
तीनों भुवन रामकी आसा । कहत अहैं पुरुषोत्तम दासा ॥
वालमीकि ऋषि सीता आनी । टेकिनि चरण कमल मनवानी ॥

अंतर्यामी परदुख जाना । राम कीन सीता सन्माना ॥
वाल्मीकि ऋषि सब परिवारा । कुश लव राम चरण पुनि डारा ॥
रामहि अस बोलेउ मन लाई । राम सुतन कहँ दीन बड़ाई ॥
कुश लव राम अंकमा दीन्ह । रामचंद्र करुणा अति कीन्ह ॥
गज रथ साजि सिया बैठाई । चलेउ संग कुश लव दोउ भाई ॥
वाल्मीकि ऋषिहू सुत संगा । जिहि वैदेही कर दुखभंगा ॥
रामचंद्र शिर छत्र बिराजा । भरत शत्रुहन लछिमन साजा ॥
तीनि भुवन बाजन बजवाये । इहि विधि राम अयोध्या आये ॥
सब कौशलपुर भये बधाये । गीत नाद बहु मंगलगाये ॥
जननीके बीते दुख फन्दा । बहुविधि जियमें भये अनन्दा ॥
सकल देशकर दुख सब गयऊ । प्रभुकर राज अयोध्या भयऊ ॥
सुनु अब तुम जनमेजय राजा । कुश लव राम युद्धकर साजा ॥
जैमिनि नृपसन कह समझाई । सुनत दुरति सब जाहि नशाई ॥
जस कुश रामहि भयो अमूझा । ग्रंथ बभ्रुवाहन अस जूझा ॥
कुश लव रामचन्द्र संग्रामा । सुनतहि नृप जिय भा विश्रामा ॥
निशिदिन कौशल करै हुलासा । शशि अखंड रवि करहिं प्रकाशा ॥
राम सुराज अखंडित गावा । दिशि दिशि बाजन बाज बधावा ॥
सभासहित देखहु शुभ दावा । भक्तिदान पुरुषोत्तम पावा ॥
जैमिनि कहै सुनहु नृपधीरा । सुनत कथा निष्पाप शरीरा ॥
रामचरित्र सुनेउ मन लाई । तेहिते पाप भस्म ह्वै जाई ॥
करुणासागर प्रभुकर नामा । अमृत सिद्धि महा विश्रामा ॥
कहै सुनै यश प्रभुकर सोई । मनवांछित फल तिनकहँ होई ॥
राम महाप्रभु अगम अपारा । जग तरिवेकहँ कीन पसारा ॥
उनके कै वनिता अरु भाई । उनकर के हित पुत्र सगाई ॥
सर्गुण तनु धरि अस कछ कीना । भक्तिहेतु संतन सुख दीना ॥
कस अकाश कहँ धरिये रंगा । का बिगेर पै उदधि तरंगा ॥
कहँ देखिये कुसुमकर कंदा । केहिविधि गहिये जलमहँ चंदा ॥

ब्रह्मादिक जहँ रहैं भुलाई । मति हमारि कैसे तहँ जाई ॥
भक्तवछल प्रभु रहै न न्यारा । सर्गुण तनु धरि मख निस्तारा ॥
उत्पाति प्रलय निमिषमें करई । कहि न जाइ लीला जो करई ॥
जैमिनि नृपसन कहै पुराना । कछु पुरुषोत्तम कीन्ह बखाना ॥
इच्छा जवन करै जो पावै । कथा सुनहि रामै चित लावै ॥
कोटितीर्थ फल होइ तुरंता । दान कोटि तप करै अनन्ता ॥
चित्त लाय जे सुनहिं पुराना । धरणी सुख वैकुंठ निदाना ॥
पुत्र कलत्र राज्य धन होई । सुनै जु राम कथा नर सोई ॥
सुनतहि कथा हरै तनुरोगा । कबहूँ तात न होइ वियोगा ॥
राम सुयश सबही कहँ भावै । कहै सुनै रामहि चित लावै ॥
सबै वर्णते उत्तम एका । जाकी राम नामसों टेका ॥
सुखसागर दुख हरन मुरारी । तुम्हरी कृपा कथा अनुसारी ॥
मैं भिक्षुक पाऊँ कछु दाना । जियते जनि विसरौ भगवाना ॥
दोहा–पुरुषोत्तम जन चातक, स्वाति सलिल घनश्याम ॥
जहँ तहँ कितहूं राखहू, जनि विसरो भगवान १३०॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि लवकुशोपाख्यानं नाम
अष्टत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

जैमिनिरुवाच ।

राम नाम जो ले एक वारा । कोटिन पाप होइ जरि छारा ॥
राम प्रसाद कथा मैं कयऊ । जैसे भवसागर तरि गयऊ ॥
प्रभुका नाम सुनत सिधि पाई । बभ्रुवाहकी कथा चलाई ॥
बहुरि जु हंसध्वज बड़ राजा । मूर्च्छित जीव कीन्ह रणसाजा ॥
वर्षहिं बाण मेघ जिमि ठाटा । पंथजके सहस्त्र रथ काटा ॥
पुनि पंथज रथ चढ़ा रिसाई । क्षौहिणि पंचरथी बितराई ॥
नृपकर धनुष टूटि भुव परचो । रथ सारथी ध्वजा बिन करचो ॥
भिन्न हृदय धरणी नृप आये । वीर सुवेग बहुरि उठि धाये ॥

हंसध्वजको पाछे मेली । बभ्रुवाहकी सेना पेली ॥
मारेसि पंथ पुत्रकहँ धाई । टूटेउ छत्र विरथ ह्वै जाई ॥
जबलगि बहुरि गहै कर बाना । पंथज वग कीन्ह सन्धाना ॥
पुनि बाणन बरसै वर आगी । गज तुरंग मूर्च्छा महि जागी ॥
बभ्रुवाह जनु खेती ठानी । रण भा खेत रुधिर भा पानी ॥
गज तुरंग कर कंध कबंधा । बोपै गज मुक्ता शरसंधा ॥
धावहिं मांस खाहिं बेताला । छाय रहे दश दिश कंकाला ॥
यहि अन्तर सुवेग उठि धावा । पंथ पुत्र कहँ धरणि खसावा ॥
तुरतहि उठे पंथकर नंदा । अग्निबाण कीन्हेउ शरफंदा ॥
मूर्च्छित भयउ सुवेग कुमारा । काहूकर नाहिं रहेउ सँभारा ॥
अर्जुन कर नन्दन रणधीरा । दोऊ रहे सब मूर्च्छित वीरा ॥

अर्जुन उवाच ।

पंथ कहै सुनु कर्णकुमारा । हंसध्वजौ सुवेगौ मारा ॥
प्रदुमन यौवनाश्व बलदाई । तेऊ रण मूर्च्छित ह्वै जाई ॥
दानव शल्य महावरियारा । सोऊ रणहि परेउ विकरारा ॥
राय युधिष्ठिर माधव जहवाँ । मै बलिपुत्र सिधावहु तहवाँ ॥
तुमको देखि दहै मम छाती । कुंतीमाताकी तुम थाती ॥
तात मात विनु तुम सुकुमारा । कस न जाहु तुम वंश हमारा ॥
कुवँरहि देखि नयन झर पानी । बहुरि जु मुकुट गीध फहरानी ॥
तुम वृषकेतु विजय सब केरा । हम नाहिं जियत रहैं इह बेरा ॥
हमरे संग आप जो मरिहैं । राजयुधिष्ठिर धीर न धरिहैं ॥
मैं बलिपुत्र कहा तुम मानहु । भात दूध माटी जानि सानहु ॥
इह थल होइ हमारउ मरना । तुम गजपुर देखहु हरि चरना ॥
जहवाँ भाय युधिष्ठिर राजा । तहवाँ जाहु होय बड़ काजा ॥
अर्जुन जीव बहुत दुख माना । आन रचो कीन्हों विधि आना ॥
राजा यज्ञ करन नहिं पावा । भार विधाता डारि अड़ावा ॥
गाँठि जोरि चौंसाठि नृप रानी । गंगा कूप भरैं नित पानी ॥

असि पतिवरता राजा करिवे । हमहूँ जूझि सुनै कहँ धरिवे ॥
वर्षहिं पुष्प नागसुर नारी । विप्र वेदध्वनि करहिं विचारी ॥
कनक श्रुवा नित लेते व्यासा । मंडप होत चतुःसम वासा ॥
वेदी रचि तहँ समिध पलाशा । बेल खदिर बड़ यज्ञ प्रकाशा ॥
देखत कृष्ण सहित सब बाता । अरु रुक्मिणी अरुंधति माता ॥
देखत सबै जाइ किन चरना । हमरो है अनाथकर मरना ॥
तुम गजपुर देखहु हरि चरना । जहँ प्रभु कृष्ण युधिष्ठिर चरना ॥

दोहा-कह कवि दास विचारकै, पंथ बहुत दुख मान ॥
जाहु जाहु वृषकेतु तुम, मैं रण करब मशान १३१ ॥

वृषकेतुरुवाच ।

कह वृषकेतु सुनहु धनुधरना । बहुरि जाउँ आगे ह्वै मरना ॥
रण मैं छाँड़ि जाउँ जो वीरा । अमर न ह्वै है मोर शरीरा ॥
सूरज पिता धीर नाहिं धरिहैं । मोहिं भजत धरणी खसि परिहैं ॥
तुम घर जाहु जाहु आलंबा । पंच भाय अरु बहुत कुटुंबा ॥
अकसर धरणी ताहि पराऊ । सौं उन मुख देखे जो जाऊ ॥
आजु देखु पुरुषारथ मोरा । रणमहँ वधऊँ जो सुत तोरा ॥
मित्रहि लागि तजहिं जे प्राना । गोद्विज लागि देहिं नित दाना ॥
स्वामिहि लागि करैं संधाना । विष्णुलोक तिनको सुख नाना ॥
तुम ठाकुर मैं सेवक तोरा । देखहु आज महाबल मोरा ॥
वचन सुनत अर्जुन मन माना । गहे चरण टेकेउ धनु बाना ॥
बभ्रुवाह इहि अवसर आवा । पुनि रण कालरूप ह्वै धावा ॥
बाण तीन मेले उर पासा । जनु भोगावति पावै प्यासा ॥
कर्णपुत्र उर महँ शर मारा । बभ्रुवाह नाहिं रहेउ सँभारा ॥
शर वृषकेतु काटि रज कीन्हा । सारथि सहित धरणि लै लीन्हा ॥
शंखध्वनि करि गहे नराचा । मारिन शर पंथजके पाँचा ॥
पंथज अग्नि बाण लै धावा । वरुण बाण वृषकेतु चलावा ॥

बरुण बाण अर्जुन सुत मेला । वर्षे कर्णज शिखर दुहेला ॥
इंद्रबाण पंथज सँभारा । रविशर कर्णज सुवन सँहारा ॥
अगणित वीर परे सब खेता । गयउ न कोऊ आये जेता ॥
महाप्रलय वृषकेतुक बाना । बहुरिव रणमहि भयउ मशाना ॥
कितक बाण पंथज लै धावा । सबै परत कर्णज ज्यों ल्यावा ॥
मारहि रथ अकाश लै जाही । ऊपर काक गिद्ध धरि खाही ॥
बाण विषम कर्णज असरारा । योधा सहित जाहि निधिपारा ॥
बभ्रुबाह जूझत परचंडा । कर्णज रथ कीन्हे शतखंडा ॥
पुनि वृषकेतु चढ़ा रथ आना । पंथजको रथ कीन्ह मशाना ॥
चढ़ा आन रथ पंकज वीरा । रविमंडलहि गयो रणधीरा ॥
सूर्यतेजते रथ खसि गिरो । जनु सपक्ष पक्षी गिरि परो ॥
हंसध्वज सन लीन्हेउ दंडा । पठवौं स्वर्ग करौं शतखंडा ॥
बहुरि विरथ भये पंथकुमारा । कर्णज रथ कीन्हेसि परहारा ॥

दोहा-इहि दिशि देखहि दिनकर, उहि दिशि सब वरवीर
पुरुषोत्तम जन वर्णही, दोउ महारणधीर ॥ १३२ ॥

कर्णपुत्र रण उठा रिसाई । छोड़े बाण गगन रहे छाई ॥
कौतुक देखहि अर्जुनवीरा । बाणहि बाण कराहिं रणधीरा ॥
अर्जुन कहहि सुनहु वृषकेतू । अस हमहू न कीन्ह शरसेतू ॥
कर्णहु अस कीन्हेउ नाहिं तहाँ । भारत कुरुक्षेत्र भा जहाँ ॥
बचन कहत लागी नाहिं वारा । बभ्रुवाहने कीन्ह प्रहारा ॥
दोउ परे भुव चढ़े तुरंगा । अंतरिक्ष दोनों इक संगा ॥
देवलोकलगि जाहिं उड़ाई । दोनों धरणि परैं पुनि आई ॥
सात दिवस निशिदिन भा जूझी । बाणहि बाण रहे जु अरूझी ॥
अठयें दिवस पंथसुत बोला । कर्णपुत्र रण महा अडोला ॥
रविमंडल शर कीन्हें छाहीं । उनकी पटतरि दूसर नाहीं ॥
अरुण वरण लोचन परजारा । बभ्रुवाह पुनि बाण सँभारा ॥

अबकी बेरिया करब निपाता । वीर सँभारहु मोर अघाता ॥
वज्रबाण मेलेउ घहराई । कर्णपुत्रके शिरपर जाई ॥
तब वृषकेतु बाण फटकारा । टूटेउ वज्र भयउ द्वैफारा ॥
परत बाण अर्जुन अस भाखा । मिटै न जो विधिना रचि राखा ॥
आधा बाण हृदय भय साथा । आधे लीन्ह कुमर कर माथा ॥
मरत बभ्रुवाहन दुख माना । अस काहू नाहिं कीन्ह सँधाना ॥

दोहा—अर्जुनके चरणनतर, परा माथ भहराय ॥
पुरुषोत्तम धनि कर्णसुत, रामै नाम कहाय ॥ १३३ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेघपर्वणि वृषकेतुयुद्धवर्णनं
नाम एकोनचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

जैमिनिरुवाच ।

केशव राम नृसिंह कहाई । अर्जुन माथ लीन्ह उर लाई ॥
कुँवर कबंध करै रण जूझी । रोवहिं पंथ मनहिं मन बूझी ॥
तुम बिनु दुःख बहुत मैं सहिहौं । राय युधिष्ठिरसों कह कहिहौं ॥
कुंती माता सौंपेउ वीरा । देवै कौन उतर रणधीरा ॥
उहौं दिवस तुम भये न भंगा । यौवनाश्वकर लीन्ह तुरंगा ॥
जबहीं भीम प्रतिज्ञा कीन्ही । तुम सहाइ नीकी विधि दीन्ही ॥
हमहिं लागि दीन्हे तुम माथा । अर्जुन रोवहिं अरु दिननाथा ॥
रसना बोलहिं कृष्ण गोविंदा । देखिये वदन मनहु अरविंदा ॥
इह लाजनु हम वदन गमावा । पिता बधे अरु तुमहि जुझावा ॥
जनु अहवर्ण आजुरण मारा । आज मनहु सब घर संहारा ॥
आजु मनौं हरि हमैं बिसारा । तब वृषकेतु माथ महि डारा ॥
रवि बिनु दिवस दीप बिनु गेहा । जीव बिना जस देखिये देहा ॥
अस वृषकेतु बिना हम भयऊ । अब सुधि कृष्णदरशते गयऊ ॥
क्षण रोवहि मूर्च्छित ह्वै जाई । दूसर रथी संग कोउ नाई ॥
बभ्रुवाह पुनि कीन्ह अकूता । हम तो पंथ नटनिके पूता ॥

रण समुद्र महँ बोरौं तोही। अबतक चीन्हेसि नाहिन मोही॥
एक माथ लै शिवको देहूँ। उठहुव माथ तुम्हारा लेहूं॥
दोउ माथ शिवपूजा करऊँ। पांडव वंश नीक उद्धरऊँ॥
सुतके वचन परे जब काना। अर्जुनवीर बहुत दुख माना॥
वृषभध्वज कर शिर रथ धरयो। जियमें क्रोध प्रलय जनु करयो॥
मैं तो अहौं वरुण संहारा। अब कहाँ जै है नटिनिकुमारा॥
तैं हमरी मारी सब सैना। अरु वृषकेतु वधे तैं रैना॥
अब तुम काटि काटि बलि देऊँ। कर्णपुत्र कर बदलो लेऊँ॥
वर्षे मेघ अखंडित धारा। इहि विधि अर्जुन बाण सँभारा॥
भेदि बभ्रुवाहनकी देहा। रविकी किरणि न देखिये रेहा॥
भेरीनाद होन फिरि लागा। शरसँग जाहि तुरंगम नागा॥
चित्र गदा उलुपी है जहवाँ। बाणनि कोट उदारेउ तहवाँ॥
मणिपुर नगर बहुत अकुलाना। सहे न जायँ पंथके बाना॥
जसवा बड़ भा जहँ उतपाता। गज तुरंग सब बाण अघाता॥
अर्जुन बाण भयो जनु पवना। गज रथ तुरंग गगन लै गमना॥
नगर लोग जहँ कोहर धरहीं। जहँ तहँ बाण पंथके परहीं॥
पंथज नहिं पावै अविकासा। चौरे बलागे चारेउ पासा॥
जस काशीमें नर कोउ मरई। ताकर चिंता यम नहिं करई॥
जैसे प्रलय पंथके बाना। कोउ इन छेदे विषय सँधाना॥
मानो प्रलय होन फिरि लागी। वस्त्र जरत कामिनि चित आगी॥
नागिन भई भौहरे लुकानी। बहु प्रकार कहै आरत बानी॥
जे कोउ वीर अहैं रणधीरा। चितवहिं पछमन सहैं न भीरा॥
दोहा–पुरुषोत्तम जन पंथशर, मानहु प्रलय समान॥
दारुण धनुष बाण लै, पंथ पुत्र रिसियान॥ १३४॥
चारि बाण मारिसि अश्व पोषा। पंच बाण मारिसि रथ चोषा॥
एक बाण पारथकहँ मारेसि। बाण सात सारथी विदारेसि॥
महावीर रण काहु न लेखहिं। चढ़े विमान देव सब देखहिं॥

काहि न तब तुम जीति भुवाला । कुरुक्षेत्र सारथी गोपाला ॥
पतिव्रता जो जननि हमारी । देहु गारि गति बुद्धि तुम्हारी ॥
मैं तुम्हार भक्ति कै जानी । बूडहुँ तुम बिनु सारँगपानी ॥
जो कछु पुण्य होइ तुव देहा । तो हरि छाँड़व तुम्हर सनेहा ॥
जस वृषकेतुहि स्वर्ग पठायउ । अब तो तुमहिं वधव रण आयउ ॥
यहै वचन सुनि पंथ रिसाना । दारुण बहुरि सँभारेउ बाना ॥
सुतकर रथ मारेहु रिसिआई । सारथि सहित भस्म है जाई ॥
पुनि सुत चढ़ेउ आनि रथ आना । काटेउ अर्जुनकर संधाना ॥
निष्फल सबै होइ ते बाना । जे जे अर्जुन कराहिं सँधाना ॥
पुनि सुत कहँ मेलेउ शर ताहिया । छीनें अनल धनुष विनु रहिया ॥
अर्जुन धनुष बिना भय माना । गंगा शाप आइ नियराना ॥
इहअंतर अर्जुन सुत कोपी । मारिनि पंथहि बाण न रोपी ॥
प्रलय अनल सम सन्मुख धावा । इन्द्र पिता सुर शीश डुलावा ॥
सूरज आदि नवग्रह जेते । डोलमान भये स्वर्ग समेते ॥
वरसे लूक पात अंगारा । वरसे मेघ रक्तकी धारा ॥
परसेउ पंथ कृष्णके चरना । लागेउ घाउ भयो रण मरना ॥
कुंडल सहित शीश बिगराना । परि कवंध सब काहु न जाना ॥
जबही परे कुंतिसुत धरनी । रोवहिं सबहि देव शशि तरनी ॥
जहाँ परेउ वृषकेतु कवंधा । जुगवै कहँ पुनि परेउ कवंधा ॥
शुक्ल एकादशि कातिक मासा । वासर भौम अहै हरिवासा ॥
सन्ध्या माथ पंथ खसि परयो । वासुदेव हरि हरि उच्चरयो ॥
जनु युग सूर्य परे एकसाथा । तस देखिय दोनों कर माथा ॥
हाहा शब्द सवहि दिशि छाई । बभ्रुबाह आनन्द अघाई ॥
पुरके लोग जीत सुनि धावा । जो जहँहूते तहाँ सो धावा ॥
बाजन बाजहिं मंगलचारा । कन्या गीत नाद अनुसारा ॥
पुष्पवृष्टि बंदीजन बोलहिं । चन्दन भीजि चमर शिर डोलहिं ॥
ध्वजा पताका वारि बनावा । मारग चँचि सुगंध चढ़ावा ॥

दोहा-गीतनाद आनन्द युत, नगर कीन्ह पैसार ॥
पुरुषोत्तम नहिं जानहीं, हरिकर चरित अपार १३५॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि अर्जुनयुद्धवर्णनं नाम
चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥

जैमिनिरुवाच ।

याहि अन्तर जस भयो विचारा। जैमिनि नृप सन पुनि अनुसारा॥
पुरकर लोग धाय गये जहवाँ। चित्रगदा उलुपी है जहवाँ॥
जननी धन्य धन्य सुत तेरा। भारत पंथहि लागि न वेरा॥
वचन सुनत जिय धरत न धीरा। सब आचरज कराहिं तेहि तीरा॥
चित्रगदा धरणी खस परी। त्राहि त्राहि विधना कह करी॥
घर घर ते रोवत सब आवा। रानीको बहु वायु डुलावा॥
हर्ष माहिं विस्मय विधि कीन्हा। पाहन चोट विधाता दीन्हा॥
उर मारहिं मुष्टिका प्रहारा। नोंचहिं केश न देह सँभारा॥
रोवन केर सुना जब नादा। बभ्रुवाह जिय भयउ विषादा॥
बाजन बाजत चुप करवावा। जननी जहाँ कुँवर तहँ आवा॥
देखेउ जननी विगलित केशा। भूषण विनु जनु विधवा भेशा॥
मुख प्रछाल्य कर बूझी बाता। काहे रुदन कराति हौ माता॥
जहँ आँनद तहँ विस्मय करहू। उठहु सँभारि धीरता धरहू॥
सुन माता मैं अर्जुन मारा। अरु प्रद्युमन वृषकेतु कुमारा॥
अवरो बहुत रथी संग्रामा। महावीर जानौं नहिं नामा॥
तुम प्रसाद मैं सब रण जीता। कस जननी मानहु विपरीता॥
रणमहँ मोर भयउ नहिं मरना। तुम जननी पहिरहु आभरना॥
जननी कहै करौं कस साजा। मुख दिखरावत तुमहिं न लाजा॥
मारेउ पिता धर्मकर भाई। कुंती सुत नगेंद्र रिपु जाई॥
नारायण कर प्राण अधारा। भग्न कीन्ह सुत मोर शृँगारा॥
पापी धिग पुरुषारथ तोरा। मारेउ प्राणनाथ तैं मोरा॥

सुनिके धर्मराय कहा काहि हैं । यज्ञभंग सुनि आति दुख पैहैं ॥
तुम तौ पुत्र दारुकी आगी । उपजत जी जारे द्रुम लागी ॥
अब सुत मो कहँ करहु सँहारा । लो अंकुश अरु तप्त अँगारा ॥
जहाँ परे हैं अर्जुन वीरा । मोर तहाँ लै वधौ शरीरा॥
उलुपी बात कहै समुझाई । चित्रगदा सुन हो मनलाई ॥
दाड़िम पंच अहैं फुलवारी । उनसन बूझब पंथ सँहारी ॥
जौ वे अग्नि विना तरु जरि हैं । मोसन कहानि भले हम मरिहैं ॥
उलुपी जात न लागी वारा । दाड़िम पंच भये जरि छारा ॥
हाहाकरत उलूपी आई । चित्रगदा सँग रण महि धाई ॥
लीन्ह उठाय पंथकर माथा । विह्वल सब रोवहिं एक साथा ॥
विगलितकेश आय रण माहा । लीन माथ कीन्हेउ पुनि छाहा ॥
पतिके चरण जाय बहुलागी । तुम विनु हम सब भई अभागी ॥
मोरे पुत्र कीन्ह संधाना । क्षमहु सवै जन श्रीभगवाना ॥
नृप विराटपुर वाढ़ी गाई । उठहु न स्वामी लेहु छुड़ाई ॥
द्रुपदसुताको जुरि सामंता । होरह वेध करहु उठि कंता ॥
वन खांडीवहिको उठिजाई । भारत है कुरुक्षेत्र सिधाई ॥
माथ गहे रोवहिं वरनारी । पुनि कर्णज शिर लीन्ह सँभारी ॥
बाप वैर कछु जिय नहिं कीन्हा । पंथहि लागि बहुरि जिउ दीन्हा॥
अब मैं चरण गहौं सुत तोरा । लेहु खड्ग शिर काटहु मोरा ॥

दोहा-परशुराम जननी वधी, तुम वध जननी तात ॥
पुरुषोत्तम हरिलीला, काहि न जाय कछु बात॥१३६॥

उठहु पुत्र कछु अबर विचारहु । जननी दुर्वो अनल परचाहु ॥
कल्पवृक्ष दुखियनके हेतू । सो तुम रण मोरउ वृषकेतू ॥
मोहिं आश बड़ि है जिय माहा । जइवेउ गजपुर संग सुनाहा ॥
देखति रुक्मिणि कृष्ण समेता । कुंती मिलती करि अति हेता ॥
देखत ऊषा अरु वरनारी । दे धनु पुनि देखति चित्रसारी॥
बैठवि जाय यज्ञके पासा । सो सुत तैं सब कीन्ह निरासा ॥

बभ्रुवाहन उवाच ।

पंथज कहै सुनौ मम माता । जानत अहौं सबै यह बाता ॥
लै तुरंग धनु गयो बहूता । टेकिन चरण कह्यों मैं पूता ॥
पुनि कछु कहन न पाई बाता । मारी उरमें दारुण लाता ॥
मैं तौ रणमहि अस्त्र सँभारा । अर्जुनपिता विधाता मारा ॥
क्षात्रियधर्म जीव संतापा । जानत अहौं चढ़ो बड़पापा ॥
तीर्थ यज्ञ जप तप व्रत दाना । होउब नाहिं पवित्र विधाना ॥
विष्णुदेव अरु पिता हमारा । जानि बूझि पापी मैं मारा ॥
पुनि जननी कीन्हीं पतिहीना । कहत बभ्रुवाहन अति दीना ॥
रोपेउ चिता अनल परजारा । अगमन लागेउ जरन कुमारा ॥
सुतहि जरत जननी भइ दाया । तैं दुर्मति कुछ करसि उपाया ॥
उलुपी कह पुनि वचन रसाला । मणि सँजीवनी अहै पताला ॥
शेष नागकर अहि भंडारा । बड़ बड़ बीर रहैं रखवारा ॥
सो मणि जो मृतमंडल आवै । पंथ जियाहि सब सैन जियावै ॥
पर्वत सरित विषम द्रुम तहवाँ । करकोटक काली पुनि तहवाँ ॥
वासुकि तक्षक शंखक सर्पा । दीरघ हृदय करैं सुख दर्पा ॥
भासुर फणिसे द्वैद्वै करहीं । तहँ श्रीपति निवास नित धरहीं ॥
सुनत हि चित्रगदा डर मानी । मणिन आव जो कह अस बानी ॥
शंभु दीन मणि महा शुभंगा । मारत गरुडाहि जियहि भुवंगा ॥
बभ्रुवाहन रिसाय कहि बाता । नागलोककर करब निपाता ॥
कहँवे सर्प अहैं सुन माता । आनि जियाउब अर्जुन ताता ॥

दोहा–अमृतकुंड लुटावऊँ, मनुष अमर करि देउँ ॥
पुरुषोत्तम पंथज कह्यो, तीनि भुवन यश लेउँ ॥ १२७॥

उलुपी सुनत वचन रिसिआनी । सबै बात तुम कहौ अयानी ॥
कैसे मारब सप्त पताला । अतिप्रज्वलित महाँ विषजाला ॥
लाज न भई कहत अस बाता । कैसे सबकर करब निपाता ॥
बभ्रुवाह जननी सन बोला । तुम प्रसाद मैं रणहि अडोला ॥

महादेव जो उहि दिश आवैं । यम कुबेर सेना सब लावैं ॥
देवदत्त जो करहि गुहारी । आनहुँ मणि नागन कहुँ मारी ॥
उलुपी एक मंत्र विचारा । धाव कर्मना करिय कुमारा ॥
पुंडरीक पठइय पाताला । भाषहि दीन जहाँ हैं व्याला ॥
महाभाक्ति देहै मणिशेशा । जो सुनि हैं रणपंथ कलेशा ॥
मंत्रबुद्धि माँगे जो पइये । शेषनाग सन जूझन लइये ॥
जननी मत पंथज कहँ भावा । पुंडरीक पुनि नाग बुलावा ॥
उलुपीकेर लेहु आभरना । जाहु न वेगि शेषकी शरना ॥
करि मनुहारि कहौ शुभ बैना । आनहु मणि पावै चित चैना ॥
जो तुम काज सिद्धि नहिं करिबे । तौ हम जाय उहाँ अब मरिबे ॥
पुंडरीक आज्ञा शिर लीन्हीं । बभ्रुवाह वुद्धी अस कीन्हीं ॥
जुगवहु पंथहि अरु सब वीरा । नहिं विनशहि इह वज्रशरीरा ॥
सबकर कंध कबंध सम्हारा । पुंडरीक पाताल सिधारा ॥
पहले सर्पलोक कहँ देखा । योजन छय कंचनकी रेखा ॥
मंदिर देखे महा सुहावा । वेदशास्त्र हरिभक्त करावा ॥
सुन्दर नर नारी तहँ रहहीं । यश गोविंदकर निशिदिन कहहीं ॥
दूसर लोक वितल नियरावा । चंपा पंकज महा सुहावा ॥
तीसर लोक सुतल पगु धरही । समिध वृक्ष कंचनफल फलही ॥
चौथे लोक महातल नाऊ । अंबा अमी पवन फल राऊ ॥
पंचम ताल तमाल सु कैसा । दिव्य भूमि इन्द्रासन जैसा ॥
छठे रसातल रत्न तमाला । अवर सप्तमें नाम पताला ॥
दिव्य भूमि भोगावति नीरा । कनक कमल प्रवाल बड़वीरा ॥
हरि मूरति हाटक है जहवाँ । मज्जन करि हरि पूजनि तहवाँ ॥
नागवधू तहँ वरणि न जाहीं । अति सुन्दर अमृतफल खाहीं ॥
तरुवर दिवस सदा फल फलहीं । नवनिधि कुंड अमृत नित भरहीं ॥

दोहा–रत्न जटित सब मन्दिर, शेषनाग अस्थान ॥
पुरुषोत्तम प्रतिकारण, पुंडरीक नियरान ॥१३८॥

फण सहस्त्रसनु वस जहँ शेषा । अठकुल नाग पुरन्दर भेषा ॥
मन क्रम वचन न जानहिं आना । निशिदिन जपैं नाम भगवाना ॥
पुंडरीक टेकेउ तहँ चरना । जाय सुनाय पंथकर मरना ॥
उलुपीकर तरवर व्यवहारा । चरणनतर सब धरेउ शृंगारा ॥
नैननीर कहेउ सब वाता । उलुपीकेर गयो अहिवाता ॥
पठवा मोहिं सब कथा सुनावा । सो बड़ हितू जो पंथ जिवावा ॥
सुनिकै बचन शेष तव बोला । कहि मारेउ रण पंथ अडोला ॥
उलुपीपति अरु हरि कर हीता । युद्ध जुरे जेहि शंकर जीता ॥
महादेव वलदीन अडोला । कारन कवन पंथ छुटि चोला ॥
हरि कर जन सुमहा धनुधारा । बिना गोविंद कवन उहि मारा ॥
पुंडरीक सब कथा सुनाई । सुनहु न शेष नाग मनलाई ॥
कारण कवन पठायो तोही । विस्मय जीय होत बड़ मोही ॥
मोहिं समझाय सबै व्यवहारा । कह कैसे करि अर्जुन मारा ॥
पुंडरीक गाथा समझाई । सुनु प्रभु शेषनाग मनलाई ॥
भीषम द्रोण कर्ण जो मारा । राय युधिष्ठिर यज्ञ पसारा ॥
दश विजयको तजेउ तुरंगा । आये मणिपुर अर्जुन संगा ॥
गहो अश्व बभ्रू अति वीरा । रणमहि जूझि परे रणधीरा ॥
गंगाशाप आय अनुसरे । पंथौ मूर्च्छित तहँ रण परे ॥
उलुपी तहाँ चिता बनवावा । औ मणिकारण मोहिं पठावा ॥
हरि कर मित्र युधिष्ठिर भाई । करि उपचार जियावहु आई ॥
चंदन साधु मेघकी धारा । धन्य जीव जो पर उपकारा ॥
पुंडरीक कहि चुप ह्वै रह्यो । शेषनाग नागनसन कह्यो ॥
दीजिय मणि नहिं करिय विचारा । जियहि पंथ हो सुयश तुम्हारा ॥
अर्जुनवीर मरन नहिं पाउव । वेगि कृष्ण तेहि आय जियाउव ॥
अगमन कछु करिये उपकारा । धर्म कृष्ण भल मान तुम्हारा ॥
वचन सुनत नागन दुख माना । धृत्तराष्ट्र बोलेउ परमाना ॥
सावधान ह्वै सुनहु न शेषा । मणि नहिं देहैं सुनहु नरेशा ॥

गुरु अरु गोत्र ज्येष्ठ जेहि मारा । पुत्र पिता कहँ कीन्ह प्रहारा ॥
बड़ो कृतघ्नी बुद्धिमलीना । अरु गोविंदकी भक्ति विहीना ॥
मणि जो परिहै उनके हाथा । बहुरि न पावब होहि अनाथा ॥
जरखनिपै द्रुम होइ निराशा । हमरो मणिबिनु होइ विनाशा ॥
गरुड़संग विग्रह नित होई । जेहि मारै तेहि ज्यावै सोई ॥
किरतघ्नी मानुष जो पावहिं । पुनि पताल मणि कबहुँ न आवहिं॥
कन्या एक लागि मणि देहू । बहुतनकी हत्या तुम लेहू ॥
सुनि पैहै बिन तनया हीना । करै आप सबकर शिर छीना ॥
मंत्री मंत्रकरै पैपारा । सोइ राजा जो मंत्र विचारा ॥
हमतौ कहत इहै गुहरावा । मणि नहिं देहैं जूझ सुहावा ॥
सुनिकै शेष कहा सतभाऊ । मूरख संग न बसिये काऊ ॥
पुनि पावकमें तनु परहरिये । लै गल पाश महोदधि मरिये ॥
द्रुम चढ़ि जाय करिय तनुभंगा । नहिं वासिये मूरखके संगा ॥
कवन नाग तुम अहो जुरंका । पंथ जियै तुम चढ़ै कलंका ॥
गोसत ग्वाल सखाविधि जबही । आन सृष्टि कीन्ही प्रभु तबही ॥
तब विरंचि कहि अस्तुति धारी । दैवल कछू करा मनुहारी ॥
चरण गोविंद हृदय मैं जानसि । वृंदावनहिं सत्य करि मानसि ॥
पुनि सुपतीकर गर्भहि राखा । नाम गोविंद सत्य श्रुति भाखा ॥
राखिन गोकुल अंबुज धारा । सृष्टिपाल प्रभु संत अधारा ॥
तृणते वज्र वज्र करि तिनका । सृष्टिपाल साहिब दिन दिनका ॥
ते पुनि पंथहि आय जियाउब । हम पाछे पुनि अपयश पाउब ॥
ऐसे वचन शेषके सुनिकै । धृष्टिबुद्धि बोले शिर धुनिकै ॥
जँहपै अहैं कृष्णके चरना । तब कस होइ हमारो मरना ॥

दोहा–जब देवे मणि नाग हम, मारब गरुड अघात ॥
पुरुषोत्तम चुप नाग भये, पुनि न कही कछु बात॥१३९॥

इति श्रीमहाभा० अश्वमेधपर्वणि बभ्रुवाहनविजयो नाम
एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

जैमिनिरुवाच।

सुनिकै पुंडरीक दुख लागा। शेषदेह मणि छेदहि नागा॥
कहै शेष इति जनि पतियाहू। जहँ श्रीकृष्णचरण तहँ जाहू॥
भरे गर्भ विष कहा न मानहि। काहूकर उपकार न जानहि॥
बसहि पताल चरणकरहीना। हृदय महाविष बुद्धि मलीना॥
रोवहि पुंडरीक अरु शेशा। चले निराश छूटे शिरकेशा॥
आये पुंडरीक पुनि तहवाँ। रणमहि पंथ परे हैं जहवाँ॥
चंदन अगर कपूर प्रदीपा। बहुविधि तहाँ अरगजा लीपा॥
पंथ पंथ कहि रोवहि मादा। बभ्रुवाह जिय भयो विषादा॥
चित्रगदा अरु उलुपी नारी। पुंडरीकपहँ जाय प्रचारी॥
भई निराश जो मणि नाहिं पाई। रोइ उठी सब दहुँ दिश धाई॥
रोपेउ चिता अनल परजारा। मणि दी नहीं नाग बरियारा॥
जारत चिता विलंब न लागी। बभ्रुवाह कोपित जनु आगी॥
जननी रहौ धरौ मनधीरा। मैं पताल देखहुँ अहिवीरा॥
शरपंजर कीन्हेउ मनजानी। पंथक माथ धरेउ मन आनी॥
जुगवहु सबकर कंध कबंधा। क्रोधि बभ्रुवाहन शर संधा॥
जो मैं वहाँ मरन सुनि माता। तो तुम जरहु पंथके साता॥
मारौं शेष सहसफन बाणा। वासुकि तक्षक करि विनु प्राणा॥
करकोटक शंखक कालीया। धृत्तराष्ट्रकर फारौं हीया॥
जे मणि भई धनंजय कहिया। अंधक नाग लोक सब रहिया॥
हरिकह मित्र युधिष्ठिर भ्राता। उलुपी पति अरु मोरेउ ताता॥
सो रण माहिं परेउ विकरारा। मणि नाहिं हतीउ कीन विचारा॥
आजु नागविनु करौं पताला। मणि सब लेउँ करौं शरजाला॥
भोगावति जल इहाँ नहाऊँ। अमृतनवौ कुंड लुटवाऊँ॥
शेषकि मणि अंजोरिन लेऊँ। लरिकनकेर खिलौना देऊँ॥
गहि धनु बाण कोपि जनु काला। पवन वेग सो गयो पताला॥
नागन सहित शेष जिय जाना। अर्जुन नंदन आव रिसाना॥

शेष कहा अपने मन बूझी। इनसन अब को करिहै जूझी ॥
धृत्तराष्ट्र बोलेउ अनहीता। को मारव इन अर्जुन जीता ॥
आजु सबहि कर हैहै काला। रहै न कोऊ नाग पताला ॥
जस बोलेउ तस पैहो आजू। तुम्हरे मंत्र भयउ अस काजू ॥
करकोटक शंखक रिस लागी। वर्षै लाग विषमकी आगी ॥
पहुँचि बभ्रुवाहन धनु धरना। दिव्यरूप सबकर मन हरना ॥
कंचन रत्न छत्र शिर सोहा। देखत नागलोक सब मोहा ॥
नाग लोक सब लाग गुहारी। जिनके फन हैं सो द्वै चारी ॥
दशदिश वर्षैं विषकी आगी। योजन पंच जरे भुवलागी ॥
बभ्रुवाहके बाण प्रचंडा। नागन कर फन भा शतखंडा ॥
शेष कहा अजहूँ मणि देहू। चरण टेकि कुँवरहि किन लेहू ॥
सुनतहि धृत्तराष्ट्र गृह आवा। ततक्षण सत दुर्बुद्धि बुलावा ॥
पुत्र हमार कहा जिय धरहू। जियहि न अर्जुन सो मत करहू ॥
राजा यज्ञ करन नहिं पावै। ये वैरी नित हमैं सतावै ॥

दुर्बुद्धिरुवाच।

कहि दुर्बुद्धि सुनहु हे ताता। जहँ हम तहँ कस धर्मकि बाता ॥
अब तुम युद्ध करौ इन साथा। मैं हरि लेहुँ पंथकर माथा ॥
मेलि अडाऊँ तेहि वन माहा। जहवाँ कोउ करहि नहिं छाहा ॥
दुष्टबुद्धि पुनि पुरमें आवा। कुंडल युत तहँ शीश चुरावा ॥
रोवत दुखमें काहु न जाना। आइव कीन्ह युद्ध कर ठाना ॥
शेषक कहा नाग नहिं करई। लागे खड्ग बाण रण परई ॥
ब्रह्मादिक सब कौतुक आये। बभ्रुवाह जहँ रण महिधाये ॥
जय जय पुष्प माल वरसाहीं। देखहिं युद्ध कितहुँ नहिं जाहीं ॥
वर्षहिं विष सब नाग पताला। मोहे मानुष विषकी ज्वाला ॥
बभ्रुवाहके बाण प्रचंडा। नागनके फण भे शतखंडा ॥
धृतराष्ट्रहू युद्ध भल करिया। एक सहस्र रथी परजारिया ॥
बभ्रुवाह रण बहुत रिसाना। सुमिरि गोविंद कीन्ह संधाना ॥

फणि मणि सहित टूटि भुव परई। तारं जनु अकाशते गिरई॥
जस शंकर रण माहि परजारिया। उरगन कटक भस्म सब करिया॥
वर्षे विषम महा रण बाना। कुमर मयूर बाण संधाना॥
वर्षे मेघ प्रवाह अकूता। पुनि रण पपीलिका संयूता॥
विषम बाण मेलिनि सर्वंगा। धृत्तराष्ट्रकर बल भा भंगा॥
जस द्रुम कोट सरसतह माहीं। हाड़ गूद भीतर चलि जाहीं॥
नकुल बाण छाँड़ेसि बरियारा। सर्प बाण सब भे क्षयकारा॥
आगे नाग शेषहै जहँई। सर्पनि कही आयकै तहँई॥
हम बलि जाहिं शेष सुनि बयना। मणि धन देहु निवारौ रैना॥
दिव्य रत्न मणि देहु बहूता। होय बहुत पाताल अकूता॥
क्षीर समुद्र मथो हरि जहवाँ। चौदह रत्न लीन्ह प्रभु तहवाँ॥
तस बभ्रूने मथेउ पताला। अबकै राखिलेहु सब आला॥
नाग सबै भुगवती बहाई। पंथजकी भय थिर न रहाई॥
विष्णुभक्ति अरु महाप्रधाना। तिनसर कहा सुना नहिं काना॥
सो हरिजन यहि विधि दुख पावै। जूझपरै अरु काहु न भावै॥
कह तब शेष वचन शुभ बोला। पंथपुत्र रण महा अडोला॥
आपन कीन्ह इनहिं सो पावा। कहा हमारा इनहिं न भावा॥
सुनतहि वचन तजेउ शरसतू। शेष नागकर मानेउ हेतू॥
चलहु पुत्र दर्शन हरि पाउब। शेष कहै हमहू तहँ जाउब॥
दोहा-सप्तपतालजीतिकरि, मणि आनी रण धीर॥
पुरुषोत्तम सँग शेष लै, आये पंथज वीर॥१४०॥
जबलग शेष पहूँचे आई। शीश पंथ कहुँ लीन्ह चुराई॥
चित्रगदा उलुपी दुखमाना। रोवत काहू मर्म न जाना॥
कृष्ण युधिष्ठर अहैं अथाई। स्वप्नचरित तहँ कहेउ गुसाँई॥
सुनत स्वप्न जिय धीर न धरिया। राजा विना यज्ञ क्यों करिया॥
तेलकूप पारथ जनु परचो। नीच स्नप्न सुनि संशय करचो॥
डोला दक्षिण दिशको जाई। जनु सब तन गौ भैल मिटाई॥

रुदन कीन्ह परशे हरि चरना। कितहूँ होइ पंथकर मरना ॥
देखत स्वप्न भयउ दुख भारा। सुभद्राकर गयो शृँगारा ॥
वंदौं चरणकमल प्रभु तहवाँ। पंथवृषध्वज रणमें जहवाँ ॥
सुनत कृष्ण कीन्हा संतोषा। गरुड़े तुरत बुलावा चोषा ॥
चढ़े भीमसँग कृष्ण सँघाता। यशुदा देवकि कुंती माता ॥
महावेग आये रण माहाँ। कंचनखंभ सहसदश ताहाँ ॥
गरुड़ चढ़े प्रभु आये ताहां। रणमहि पंथ परे हैं जाहां ॥
बभ्रुवाह रण कीन्ह मशाना। आये गरुड़ चढ़े भगवाना ॥
रत्न जटित मणिकंचन क्षारा। नीलमेघके से आँधियारा ॥
चित्रगदा भूषणकिय हीना। रोवहिं सहस सखी दुख दीना ॥
जैमिनि कहै सुनहु तुम राजा। आवत कृष्ण भयउ जस साजा ॥
उतरे वासुदेव अरु भीमा। धरणी जाय पंथकर ग्रीमा ॥
पंथ पंथ करि रोवन लागे। काहि मारेउ रण अजहुँ न जागे ॥
मातु देवकी यशुमति आई। कुंतहि उठिकै मिलहु न भाई ॥
कह तुम्हार अस कीन्हेउ मरना। उठि किन गहौ कृष्णके चरना ॥
नाहिं बोले कुलभा आँधियारा। रविगा अथै करहु उजियारा ॥
कहिधौं लीन्हेउ यज्ञ तुरंगा। ताकर आजु करब मैं भंगा ॥
दूसर काकर अहै कबंधा। जस अर्जुन तैसे शर संधा ॥
ये वृषकेतु आहि रण धीरा। भेटत नयन जरो अति नीरा ॥
देखत मनमें कीन्ह विचारा। पंथहि पंथ पुत्र रण मारा ॥
कुंती द्रौपदि यशुमति रोवहि। प्रदुम्न सहित वीर सब सोवहिं ॥
कुंती कहै देख सुत करना। पंथहि लागि भयो जेहि मरना ॥
रोवहिं सब जहँ विगलित केशा। आइमिले तहँ पंथजशेषा ॥
चरण गहे पंथज दुखमाना। देखेउ कृपासिंधु भगवाना ॥
मैं पापी सब कीन्ह अनाथा। लेहु सुदर्शन काटहु माथा ॥
राहूशशि हरेउ प्रभु जैसे। मोरेउ माथ लेहु अब तैसे ॥
मैं पितु घात अनलमें परिहों। तुमरे मारे भल निस्तरिहों ॥

निगम आज्ञा मैं नहिं मानी। मारेहुँ पितहि युद्ध अति ठानी ॥
दोहा–कैसे वदन दिखावऊँ, कुंती भीमकि ठाउँ ॥
पुरुषोत्तम पंथज कहै, लेहु माथ तरि जाउँ॥ १४१ ॥

इति श्रीमहा० अश्व०पर्वणिबभ्रुवाहनविजयोनामद्विचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥४२॥

चित्रगदा अरु उलुपी धाई। कुंतीके पद परशेउ जाई ॥
जिमि तुम देखहु वदन हमारा। साँपिन है सुत डसेउ तुम्हारा ॥
कौतुकहीं अति कीन्ह अकाजा। मुख दिखरावत तुमहिं न लाजा ॥
पुनि रोवहिं सब तनु करि जर्जर। गंगा शाप भयो यह वज्जर ॥
हाय हाय करि छाँड़हि माना। अब कहा करियत है भगवाना ॥
पांडु वंश बूड़ेउ पाताला। काढ़ि कृपानिधि करि प्रतिपाला॥
शेष विनय करि हरि सन कहही। अर्जुन दुख प्रभु कैसे सहही ॥
जगन्नाथ नारायण शरना। हृषीकेश सब कर दुखहरना ॥
रोवत हैं सब रण विकरारा। कहि लीन्हेउ शिर करहु विचारा ॥
फणिपति वचन कहे परमाना। अर्जुन शिर हेरहिं भगवाना ॥
सगुण वेष सुकृत जो करिया। ब्रह्मचर्य कीन्हेउ हितु धरिया ॥
जो कछु पुण्य होय हमसाथा। आवै वेगि पंथकर माथा ॥
जेहि अर्जुन शिर लीन्ह चुराई। ताकर माथ परै भुवआई ॥
बात कहत लागी नहिं बारा। आयउ शिर फणि परेउ नियारा ॥
शेषसहित सब नाग लजाना। आपन अपयश बहुतै माना ॥
कहैं कृष्ण जानि शेष लजाहू। मध्यम काहि तुम जानि पाछिताहू ॥
पावा शिर अर्जुन कर आजू। अब कछु करिये जीवन साजू ॥
कुंती कहै जैसे सचुपावहु। पहले प्रभु वृषकेतु जियावहु ॥
मणि कर्णजके कमलहि धरिया। माथा जुरा श्वास पुनि परिया ॥
कृष्ण कृष्ण केशव कहि वीरा। संधत बाण उठे रणधीरा ॥
चूमि वदन केशव उर लावा। कर्णपुत्र चरणन शिरनावा ॥
पुनि मणिधरी पंथकी देहा। जासन कृष्णहि अधिक सनेहा ॥

करपंकज जबही उर लागे । शीश जुरो अर्जुन पुनि जागे ॥
उठतै धनुष बाण लै धावा । चरणकमल देखत शिर नावा ॥
दंडप्रणाम पार्थ पुनि करही । प्रेमसहित हरिकर पग धरही ॥
प्रदुमन सहित जिये सब वीरा । वर्षे खगपति अमृत नीरा ॥
जाकर जहाँ भयउ रण मरना । जिये सकल परशे हरि चरना ॥
देखेउ पंथ लीन्ह मणि शेषा । जागे पंथ पुरंदर भेषा ॥
पुष्प वृष्टि शंखध्वनि होई । आनंदित सेना सब कोई ॥
कर्णज पंथज मिलि गह चरना । मिले भीम सबकर दुखहरना ॥
सबै वीर आये उठि तहवाँ । कृष्ण देवकी कुंती जहवाँ ॥
जननि कृष्णके टेकिनि चरना । तुम तजि हमाहिं आनि नहिं शरना ॥
मिलत परस्पर होइ अनंदा । सबै चकोर चरण हरिचंदा ॥
नृत्य कराहिं बहुविधि सब नारी । ध्वजा पताका बहुरि सँभारी ॥
जस कुबेर पुर धन अधिकाई । मणिपुर नगर वरणि नहिं जाई ॥
तोहि कर कवन अचंभो आवै । कस न जियै जेहि राम जियावै ॥
जाकर हाथ सकल संसारा । सोइँ करन लग्यो उपचारा ॥

दोहा-जेहि भगवंत मारई, तेहिको जीतै पार ॥
हरि आज्ञा शिरऊपर, कहै कविदास विचार ॥१४२॥

शेष संग यदुपति दुखहरना । पंथज मीलि पंथके चरना ॥
गंगा शाप परे तुम वीरा । भेटहु पुत्राहि ये रणधीरा ॥
चित्रगदा उलुपी मन जानी । टेकि चरण तव अधिक लजानी ॥
लेहु राज्य दुख जिय जनि मानहु । बभ्रुवाहनहि सुतकरि मानहु ॥
प्रथमहि परशेउ चरण तुम्हारा । पाछे कीन्हेउ युद्ध प्रहारा ॥
देवकि यशुमति मात भुवाला । कुंतिहि कहा करहु प्रतिपाला ॥
प्रभु गोविंद कहा समझाई । अधमुख पुत्राहि लेहु उठाई ॥
अर्जुन कहा कृष्णकर कीन्हा । बभ्रुवाह कहँ अंकम दीन्हा ॥
एकहि आसन बैठे आई । नीचे मुख करि पुत्र लजाई ॥
मैं पितुघात अनलमें परिहौं । या पुनि जाय हिमाचल गरिहौं ॥

तुम्हरे मारे भल हम तरिहैं। जन्म जन्मके पातक जरिहैं॥
मारेउ हरि जन धर्मक भाई। नाना योनि जन्मि हैं जाई॥
सुतसन बोलेउ भीम सुवारा। पातक भयो सबै जरि क्षारा॥
देखेउ तुम गोपालके चरना। जन्मकोटिके पातक हरना॥
गुरु अरु भ्रात पिता हम मारा। सो सब पाप भयो जरि छारा॥
देखिय दरश जयै हरिनाऊँ। कैसे पाप रहै तेहि ठाऊँ॥
तजहु शोच जिय करहु अनंदा। कहापाप जारन नँदनंदा॥
गज अरु ग्राह अजामिल तारा। गणिका सहित सुआ निस्तारा॥
दुखदारिद्र पाप नाहिं तहवाँ। पुरुषोत्तम दर्शन हरि जहवाँ॥
रामकृष्ण रसना जो कहई। पाप अनेक जन्मके दहई॥
वैर शोक सब दूरि करावा। यदुनन्दन सब रणहि मिटावा॥
करि अनंद बहुबाजन बाजा। मणिपुर चले वीर करि साजा॥
घरघर बाजहिं आनँद बाजा। सबकर शोक दूरि अब भाजा॥
हरिप्रसाद सब विस्मय गयऊ। सबके उर आनँद अति भयऊ॥
शेष कृष्ण वृषकेतु बनावा। अर्जुनकहँ देखन सब आवा॥
कुंती यशुमति देवकि रानी। राजभवन देखहिं मन जानी॥
नट नृत्यहिं गायन बहु गावहिं। मंगलचार सुगन्ध उड़ावहिं॥
सिंहासन बैठे यदुनाथा। अर्जुन पुत्र बाठि एक साथा॥
पंच दिवस भोजन पकवाना। नित आनन्द जहाँ भगवाना॥
वासुदेव कह श्याम शरीरा। अर्जुन करहु धर्मकी भीरा॥
अकसर धर्मराय हैं जहवाँ। भीमसेन सँग पठवहु तहवाँ॥
कृष्णाज्ञा शिर ऊपर लीन्हीं। अर्जुन विदा भीमको कीन्ही॥
रत्न भँडार पुत्रसन माँगा। कंचनरथ भरने सब लागा॥
चित्रगदा अरु उलुपी संगा। लादे हस्ती और तुरंगा॥
जननी संग भीम सामंता। भेटि पंथकहँ चले तुरंता॥
दै अशीश सौंप वृषकेतू। कुंती करति बहुत जियहेतू॥
मातन चलत कहनि शुभबाता। पंथ जीति घर आव विधाता॥

हरि कीन्हेउ सबकर प्रतिपाला । शेषनाग पुनि गये पताला ॥
टेकिन चरण कमल मनलाई । बिसरहु जनि जिवते यदुराई ॥
वासुदेवकर चरित अपारा । अर्जुनकर कीन्हेउ प्रतिपारा ॥
जो नर कहै सुनै मनलाई । ताकर पाप भस्म है जाई ॥
जो फल काशी करवट लेई । कंचन शुभ्रगहनमें देई ॥
सो फल होय पाप तनु दहई । तस फल होइ सुनै अस कहई ॥
कर्णज पंथ कथा कह कोई । तेहि नर सकल सिद्धि जग होई ॥
वांछा जवन करै सो होई । कथा गोविंद सुनै जो कोई ॥
दोहा-पुरुषोत्तम जन विनवत, चरणकमल मनलाइ ॥
रामनाम जिनि बिसरहु, जेहिप्रसाद सिधिपाय १४३ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेघपर्वणि बभ्रुवाहनविजयो नाम
त्रयश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

जन्मेजय उवाच ।

जन्मेजय हरिचरणन राता । जैमिनि कही सुधासम बाता ॥
कृष्णकथा बहु कलमषभंगा । अब आगे कहँ चलेउ तुरंगा ॥
अर्जुन सहित वीर तहँ गयऊ । वन पर्वत लाँघत सब भयऊ ॥
मलयाचल शीतलजल चंदा । अति शीतल है नाम गोविंदा ॥
जैमिनि तनुकी तापि नशावहु । वासुदेवकर चरित सुनावहु ॥
भीम नगर पुनि कीन्ह प्रवेशा । बहुरि तुरंग गयो केहि देशा ॥
सबै कथा ऋषि मोसन कहहू । जन्म जन्मकर पातक दहहू ॥
जैमिनि बहुरि कथा अनुसारा । अर्जुन कृष्ण जहाँ पगुधारा ॥
मणिपुरते जब चलेउ तुरंगा । बभ्रुवाह लीनेउ पुनि संगा ॥
पंथ सहित हरि कीन्ह पयाना । नगररत्नपुर हय नियराना ॥
नृपति मयूरध्वज वस तहवाँ । होयव अश्वमेध सौ तहवाँ ॥
उनकर तुरँग देश फिरि आवा। आवा नगर रत्न ते धावा ॥
मिले दुवौ हय एकहि भेशा । एकहि एक गहै मुखकेशा ॥

उहि सँग है ताम्रध्वज वीरा । इह सँग कृष्णपंथ रणधीरा ॥
चरणहि चरण तुरंगम बाजा । कुँवर चकित भा देखत साजा ॥
देखि तुरंगम योधा धावा । वेगिहि पकरि निकट लै आवा ॥
बहुलध्वजसन पूँछि प्रसंगा । दूसर काकर अहै तुरंगा ॥
पत्रबाँचि पुनि ताहि सुनावा । धर्मक तुरँग पंथ सँग आवा ॥
सुनतहि ताम्रध्वज रिसिआना । गहसि तुरँग सँग है भगवाना ॥
मणिपुरकर धन सब मैं लेऊँ । मुक्ताहल अर्जुनके सेऊँ ॥
नारद पास सुना मैं राती । मणिपुर युद्ध भयो बहुभाँती ॥
कर्णज पंथजकी मनुसाई । नारद मोसन कहि समझाई ॥
नर नारायण एक शरीरा । कृष्णसंग है अर्जुन वीरा ॥
बात कहत कछु मर्म न जाना । आये वीरन सँग भगवाना ॥
प्रदुमन अनिरुध केतुकुमारा । यौवनाश्वनृप बड़ो जुझारा ॥
पांचजन्य गोविंद बजावा । अर्जुन देवदत्त गुहरावा ॥
शंख बजावत रणहि अपेला । ताम्रध्वज तहँ अहै अकेला ॥
धीरज करि ताम्रध्वज रहिया । रणमहि वचन पंथसन कहिया ॥
कृष्ण कहा यह महा जुझारा । इहरण करब सकल क्षयकारा ॥
शंखासुर दानव बरियारा । काढ़ेउ वेद पेट जेहि फारा ॥
इनि जस तुरँग महा परचंडा । पाउब तब होउब शतखंडा ॥
प्रदुमन आदि वीर सब बूझी । कर्णज पंथ जलावत जूझी ॥
कहैं कृष्ण तुम जान न भेऊ । जाके सन्मुख रहै न केऊ ॥
रण ताजि हम तुम जैबे तहँहीं । इहकर पिता यज्ञकरि जहँहीं ॥
तीर नर्मदा महा सुहावा । अश्वमेध भल यज्ञ करावा ॥
यह बड़वीर जीति ना जायहि । सहै न वीर बाण जब धायहि ॥
गीध मशान रची रण सोधा । कालरूप दारुण यह योधा ॥
महारथहि चढ़ि करिहै जूझी । ह्वैहै बहु संशय मनबूझी ॥
कृष्णदेव सब बात बुझाई । गिद्ध व्यूह रचि रणमहि आई ॥
वे प्रभु आदि अंत अवसाना । यह लीला कछु किय भगवाना ॥

कहा कृष्ण ऐसेही जाना । आखिर भयउ युद्धकर ठाना ॥
वासुदेव रथ सन्मुख साजा । श्रीवदैत्य अनुशल्य विराजा ॥
हंसध्वज नयनन तहँ नंदा । प्रदुमन अरु अनिरुध है चंदा ॥
सात्यकि सहित भयउ दुइचरना । राखहि यौवनाश्व धनुधरना ॥
हृदय भये हैं अर्जुन वीरा । कर्णज पंथज वीर सुधीरा ॥
गीध मशान रची रणमाहा । विषमवीर ताम्रध्वज ताहा ॥
ताम्रध्वज रिसाय तब बोला । सैन देखि नहिं रणमहि डोला ॥
मोसन कोउ जियत नाहिं जाई । कृष्ण बिना को तुरँग छुड़ाई ॥
गहै सुदर्शन अरु सारंगा । शंक न मानहु देहु तुरंगा ॥
दोहा-उहिदिशि हरि चढि जूझहीं, इह दिशि रहै समान॥
यह चरित्र पुरुषोत्तम, जानहिं श्रीभगवान ॥ १४४ ॥

इति श्रीम०अश्वमेधपर्वणि ताम्रध्वजयुद्धवर्णनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४४॥

जैमिनिरुवाच ।

जैमिनि कहै सुनहु नृप वचना । सबही कीन्ह युद्धकी रचना ॥
प्रथम पंचशर जोरि अपेला । दारुक तुरत कुँवरको मेला ॥
सात्यकि कृतवर्मा वरियारा । बाण आठ नव तेहिं फटकारा ॥
प्रदुमन बाणसहस्रदश विरुद्धा । दश दश शर बरसे अनिरुद्धा ॥
विदा माँगि अनिरुध रण धावा । ताम्रध्वजहि प्रचारत आवा ॥
वेगि छाँडु तैं यज्ञतुरंगा । को रखवार करब मैं भंगा ॥
कहसि कुँवर फिरि रणहि रिसाई । जानत हैं तुमरी मनुसाई ॥
पिता तुम्हार कुसुमके बाना । बाँधिन तुमहिं अस्त्र रण बाना ॥
द्वारावती नहै जेहि जाहू । मारहुँ आजु तुमहिं सबकाहू ॥
सुनत वचन अनिरुद्ध रिसाना । छाँड़ेउ प्रलयकाल जनु बाना ॥
रथ सारथी परे रणमाहा । टूटेउ ध्वजा रहे निहछाहा ॥
ताम्रध्वज पुनि उठेउ सँभारी । वज्रबाण मेलेउ समचारी ॥
अनिरुध बाण प्रलय फटकारा । वज्रबाण सब जरि भये छारा ॥

पुनि अनिरुद्ध क्रोध करि धावा। जनु दारुण दावानल आवा॥
कहुँ कर चरण और कहुँ माथा। कोउ रणमहँ जनु परेउ अनाथा॥
काहुक दन्त काहुकर केशा। कोउ परे रण विह्वल भेशा॥
गज तुरंग धरणी महि घूमा। बाण अनल जनु बरषै धूमा॥
कृष्ण तनय सुत अति बरियारा। तीनि क्षौहिणी दल संहारा॥
ताम्रध्वज तब उठेउ अकेला। चढ़िरथ आनि कीन्ह रण पेला॥
आनसैन सब लीन्हीं संगा। करि अनिरुद्धकेर दल भंगा॥
मारिनि रथ तिल तिल ह्वै गयो। अनिरुध कुमर विरथ तब भयो॥
पुनि रथ चाढ़ि कीन्हेसि परिहारा। मूर्च्छित भा अनिरुद्ध कुमारा॥
पुनि प्रदुमन अनिरुध प्रति धाये। सुत सम्हारिकै रणमहि आये॥
प्रदुमन सन विनती अवधारी। कर्णपुत्र रण चले प्रचारी॥
वृषकेतुक अति दारुण बाना। ताम्रध्वज रण कीन्ह मशाना॥
ताम्रध्वज कर गदा सँभारा। रथ सारथि वृषकेतु कुमारा॥
चढ़ेउ आनरथ बहुरि कुमारा। कर्ण सुवनको कीन्ह प्रहारा॥
मूर्च्छित भयउ कुमर वृषकेतू। धर्मकाज अनिरुधके हेतू॥
तनुमहँ प्रविशत व्याधि निदाना। तसमारै ताम्रध्वज बाना॥
इह अन्तर अनुशल्य रिसाना। यौवनाश्व कीन्हेउ संधाना॥
सात्यकि सात बाण लै धावा। कृतवर्मा पुनि शंख बजावा॥
जानि न जाय चरित भगवाना। सब मूर्च्छित भे एकहि बाना॥
सबके करमा शतशत खंडा। आये बभ्रुवाह परचंडा॥
ताम्रध्वजको रणहि प्रचारसि। पंचबाण शिर ऊपर मारिसि॥
पुनि नाराच कोपि करलीन्हा। ताम्रध्वज रथ चूरण कीन्हा॥
रथ चढ़ि आन ताम्रध्वज वीरा। बभ्रुवाहको कीन्हेसि पीरा॥
माया युद्ध न जानै कोई। आवतवीर मूर्च्छित रण होई॥
जेहि बभ्रुने जीति पताला। तेऊ मोहि विषम शरजाला॥
हंसध्वज प्रद्युम्न कुमारा। नीलध्वज नहिं रही सँभारा॥
जस जलबिनु दिखियत सब मीना। सबै परे रण मूर्च्छित छीना॥

ताम्रध्वज भल रणमहँ सोहा। पांडव सैन सबै रण मोहा ॥
गोत्रवृद्धि कहँ यज्ञ करावा। कस तारव सब अनी मरावा ॥

दोहा-पुरुषोत्तम सुविचारहि, गर्व-प्रहारी राम ॥
कवन चरितबहु ठानही, जानहि सुन्दरश्याम ॥ १४५ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि ताम्रध्वजयुद्धवर्णनं नाम
पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

जैमिनिरुवाच।

अर्जुन काल रूप ह्वै धावा। रथते कुमरहि मारि खसावा ॥
नवशर मारि शंख पुनि पूरा। तिल तिल करि रथ काटिन शूरा ॥
चढ़ा आनरथ कुमर रिसाई। अर्जुनको रथ मारि खसाई ॥
कालरूप पुनि कीन्ह मशाना। लागत बाण पंथ मुरझाना ॥
हरि हरि सुमिरत भयउ सँभारा। गत मूर्च्छा पुनि कीन्ह प्रहारा ॥
पंथबाणके गुहिनै लागी। योजन एक गयउ रथ भागी ॥
पवनवेगसे फिर तहँ आवा। मारेसि पंथहि जानि न पावा ॥
दोऊ विचित्र महावारियारा। मूर्च्छित परि रण कराहिं सँभारा ॥
दोऊ जूझ तजि गगन उड़ाहीं। पुनि आवहिं दोनों रणमाहीं ॥
अर्जुन कीन्ह क्रोध संधाना। काटेउ कुँवरक धनु अरु बाना ॥
जहि जहि रथ चढ़ि आव कुमारा। तहि तहि पंथ करै द्वैफारा ॥
द्वैसहस्र रथ काटिने पंथा। तबहुँ न मूर्च्छि कुमर करि मंथा ॥
सातदिवस निशिदिन भा जूझा। बाणहि बाण रहेनि असूझा ॥
सुर नर मुनि सब देखन धावा। अर्जुनको रथ गगन उड़ावा ॥
जस क्रोधित खगसंग शचाना। परत भूमि मारेसि पुनि बाना ॥
अन्तर रथ प्रभु लीन्ह उठाई। मारत भूमे परन नहिं पाई ॥
रिपुशिर कीन्हेसि गदा प्रहारा। अर्जुनकहँ नहिं रहेउ सँभारा ॥
बहुरो पंथ कृष्णसन बोला। जनि सकाहु रण महा अडोला ॥

य तो अहै महारण धीरा । बभ्रुवाहनहु सही न भीरा ॥
पुनि गांडीव करहु संधाना । शारँग चक्र गहेउ भगवाना ॥
ताम्रध्वज कहँ भयो अनंदा । सँग अर्जुन अरु यादवनंदा ॥
नर नारायण सन रण साजू । धन्य भाग्य जो जूझौं आजू ॥
कृष्णसारथी अर्जुन संगा । पूजी मन इच्छा सुख अंगा ॥
जाकर हाथ सृष्टि संहारा । होय सुयश जो सो मोहिं मारा ॥
हरि शर छुटे भयावन भेशा । सारथि वधेउ गहेउ शिरकेशा ॥
ताम्रध्वज दश शर तब मेला । अहिसन गरुड़ करत जनु खेला ॥
पुनि सौ बाण कुमर फटकारा । बाण सहस्र कृष्ण अनुसारा ॥
मूर्च्छित भे ताम्रध्वज वीरा । साधत बाण उठेउ रणधीरा ॥
मारसि हरि पंथहि पुनि बाना । चक्र सुदर्शन रण नियराना ॥
देखत चक्र सवन भयमानी । उलटेउ सिन्धु धरणि अकुलानी ॥
अर्जुनको रथ गगन भुलाई । शेषसहित पाताल डराई ॥

दोहा-सब क्षौहिणिदल मारेउ, गजते उतरेउ वीर ॥
पुरुषोत्तम नहिं मान डर, ताम्रध्वज रणधीर ॥१४६॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि ताम्रध्वजयुद्धवर्णनं नाम
षट्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

मारी चक्र सबै जो सैना । ताम्रध्वज गरजे पुनि रैना ॥
कहै कुँवर सुनि दीनदयाला । दै दै पुण्य पंथ प्रतिपाला ॥
यज्ञ करै जहँ पिता हमारा । निशिदिन हरिहरि करत पुकारा ॥
कहै कृष्ण मूर्च्छित इह करिहौ । भई कृपा इह रण नहिं मरिहौ ॥
चक्र कृष्ण अर्जुनके वाना । एकहि बार कीन्ह सधाना ॥
महावीर सबही मनभावा । यज्ञ तुरंग नगर कहँ आवा ॥
जिन वीरनके लगे न वाना । तिन कुमरन धरि नगरहि आना ॥
मयुरध्वज जहँ यज्ञ करावा । पुत्र तुरंग तहाँ गहि लावा ॥

राजासुत कहुँ बूझी बाता । कह तुम्हार सब सेन निपाता ॥
दूसर काकर अहै तुरंगा । मोहिं बुझाउब सबै प्रसंगा ॥
चरण परशि सुत कहेउ विचारा । धर्मक तुरँग पंथ रखवारा ॥
कृष्ण तहाँ ऐहैं पुनि संगा । मैं लीन्हेउ तहँ यज्ञ तुरंगा ॥
वभ्रुदाह सब वीर प्रचंडा । तहवाँ कीन्हेउ शतशतखंडा ॥
वहुलध्वज वोलेउ पुनि तहवाँ । मूर्च्छित सब कीन्हेउ रण जहवाँ ॥
धाये पंथ सहित सब वीरा । मूर्च्छित भा ताम्रध्वज वीरा ॥
अगमन यज्ञ तुरंग पठावा । ताम्रध्वज सकुशल पुनि आवा ॥

राजोवाच ।

कीन्ह अकाज देख मन बूझी । कृष्ण पंथसन कीन्हेउ जूझी ॥
यज्ञ विध्वंस कीन्ह तैं मोरा । शत्रुरूप तव सुत है मोरा ॥
जहवाँ पंथ अहहिं भगवाना । कैसे कहौ कीन्ह संधाना ॥
साधुभाव कवहूँ मनभावै । कवहूँ स्वामि कृपा करि आवै ॥
तेहि निशि नारि जाय जो सोई । जिय पछिताव वहुत ही होई ॥
कृपा हेत करि आव गोपाला । तैं पापी मारे शरजाला ॥
तजि तुलसी हरि पायो चाही । छाँड़ि सुधा विषके फल खाही ॥
यज्ञ छाँड़ि मैं जैहौं तहवाँ । पंथ गोविंद चरण है जहवाँ ॥
रानी सहित नृपति रिसियाना । ताम्रध्वजहु वहुत दुख माना ॥
इह अन्तर हरि पंथहि बोला । महावीर इह रणहिं अडोला ॥
पंथहि हरि समझाव प्रसंगा । नगर रत्नपुर गयो तुरंगा ॥
तहाँ मयूरध्वज वड़ राजा । चलि दिखराउ यज्ञकर साजा ॥
अमृत दृष्टि देखि भगवाना । सवही रण दीन्हेउ जिवदाना ॥
निगम वचन गोविंद सुनाई । अर्जुन लीन्हेउ शीश चढ़ाई ॥
सवै रथी उतरेउ रणमाहाँ । हरि अरु पंथ चलेउ नृप जाहाँ ॥
ब्राह्मण वृद्ध रूप हरि धरिकै । विद्यारथि अर्जुन कहँ करिकै ॥
रजनी नगर कीन्ह पैसारा । रत्न जटित जनु दिनं उजियारा ॥
घर घर भक्ति होई जागरना । निशिदिन रामनामकी शरना ॥

सबै सुखी दुखिया नाहि कोई। रामनाम ध्वनि घर घर होई॥
नर नारी सब कीन्ह शृंगारा। सबके रामनाम आधारा॥
देखिन नगर कीन्ह आनंदा। सँग अर्जुन अरु यादवनन्दा॥
रजनी गई भयउ भिनुसारा। मंडप यज्ञ कीन्ह पैसारा॥

दोहा-पुरुषोत्तम मणि चौक जहँ, निशिदिन वेद पुरान॥
जहँ मयूरध्वज राजा, तहँ आये भगवान॥ १४७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि ताम्रध्वजयुद्धवर्णनं नाम
सप्तचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ४७॥

जैमिनिरुवाच।

राजा नाहिं नवायउ शीशा। पहले ब्राह्मण दीन्ह अशीशा॥
देत अशीश नृपति दुख माना। सुमिरेउ विष्णु मूँदि दोउ काना॥
पहले ब्राह्मण दीन्ह अशीशा। मानहु शाप दीन्ह सौवीशा॥
मैं दहु कवन कीन्ह तनु पापा। मोहिं दीन्हेउ ऋषि अति अशरापा
पाछे राजा टेकिन चरना। मोकहुँ विप्र तुम्हारिहि शरना॥
धूप दीप करि चरण पखारा। पाछे नृप विनती अवधारा॥
कहहु वचन रेणु मैं लेहूँ। जो माँगहु सो तत्क्षण देहूँ॥
कहहिं विप्र नृप दुख जानि मानहु। शीख हमारि दीन्ह सुख मानहु॥
सुनु राजा आयो जेहि काजा। सावधान ह्वै कर सोइ साजा॥
नगर धर्मपुर अहै जु वीरा। तहवाँ जाऊँ रणमतिधीरा॥
व्याहन पुत्र चलेउँ मैं तहवाँ। सपदि आय गयो तुम्हरे ठावाँ॥
सिंह धरा सुत बोल न आवा। पुत्र पुत्र करि सन्मुख धावा॥
वचन सिंहसन माँगि जु पावा। सपदि आय गयो तुम्हरे ठावा॥
जो तव पुत्रक अहै सनेहा। देहु नृपतिकी आधी देहा॥
पावउँ नृपति दाहिनो अंग। तो तोहि होइ पुत्र सन संगा॥
सिंहप्रभाव नृपति तब जाना। बिनु नरसिंह होइ नहिं आना॥

मैं आपन तनु आगे धरिया । वृद्ध जानिकै हरि परिहरिया ॥
कहानि नृपति कर आनि शरीरा । दधि घृत खाँड तोष अतिखीरा ॥
मैं पुनि फेरि कही असि बाता । अस को अहै प्राणकर दाता ॥
फिरि मृगराज उत्तर मोहिं दीन्हा । इंद्रके शत्रु निकंटक कीन्हा ॥
राजा कर्ण कवच दिय तहवाँ । भारतयुद्ध भयानक जहवाँ ॥
आतुर आवा तुम्हरे पासा । अब नृप पुजवहु मोरी आसा ॥
पुत्र विना चारों दिश सूनी । पीर शरीर होति अति दूनी ॥
त्रेता रामचन्द्र अवतारा । करुणाकर द्विज दुख निर्वारा ॥
मंडपमें बोलेउ तब राजा । बैठहु विप्र करौं मैं काजा ॥
मैं करवत शिर आजु दिवाऊँ । सुत तुम्हार हरिसन छुड़वाऊँ ॥
जैमिनि कह नृप सुनु मन लाई । सौंपिनि पुत्रहि राज बुलाई ॥
गंगा अमृत करि अस्नाना । शालग्राम शिलोदक पाना ॥
तुलसीकी पहरी वनमाला । सुमिरे रामनाम गोपाला ॥
सब हरिजनकहँ कीन्ह प्रणामा । लाय प्रदक्षिण शालिग्रामा ॥
राजा वचन कहै समुझाई । विप्ररूप जनु यादवराई ॥
देखहु लोगहु कौतुक आजू । वेगि कीन्ह करवतकर साजू ॥
कनकखंभ दुइ रोपेउ तहियाँ । राजा आनि ठाढ़ भा जहिया ॥

दोहा–शुभ अरु अशुभ कहो जु मैं, क्षमा करहु सब कोइ ॥
पुरुषोत्तम नृप वीनती, विप्रकाज भल होइ ॥ १४८ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि मयूरध्वजसत्यकथनं नाम
अष्टचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

जैमिनिरुवाच ।

बोले वचन जबहिं भगवाना । कंपे विप्र सबै परधाना ॥
पुत्र कुटुंब सबहिं दुख पावा । ये तो विप्र काल जनु आवा ॥
राजाकी माँगी इन देहा । सतिवादी नृप विप्र सनेहा ॥

विप्ररूप एक ऐसा आवन । जस ताहिये बाँध्यो बलि वामन ॥
देइ सबनि लोगन संतोषा । करवत निकट गयो नृप चोषा ॥
नृपति विप्रकर चरण पखारा । विष्णुप्रीति करवत अनुसारा ॥
हमरे कुलमँह जन्मै केई । धन अरु जीव विप्रकहँ देई ॥
राजा कहै विप्र अत्र धावहु । लै तनु अपना पुत्र छुड़ावहु ॥
मालिन कहँ आज्ञा प्रभु दीन्हा । पाटंबर काटि बंधन कीन्हा ॥
राजा सबसन ज्ञान विचारा । धन्य जीव जो पर उपकारा ॥
करवत धरा शिरहि वैसाई । रोवति रानी हँसिनि आई ॥
हाय हाय करि टेकिनि चरना । जानि तुम विप्र करहु नृपमरना ॥
कुमदावती नयन झरि नीरा । विप्र लेहु तुम मोर शरीरा ॥
जानत हौ तुम वेद पुराना । अर्धंगिनि वनिता सब माना ॥
आमिष दान विप्र कित लेहू । मोहिं जियत केहरिकहँ देहू ॥
मो हित नृपति जीव जो रहई । हम तरिहैं नृप दुख ना सहई ॥
रानी वचन सुनत नहिं भावा । विप्ररूप हरि शीश डुलावा ॥
सुन रानी मैं कहौं विचारा । मोसन सिंह कहेउ उपचारा ॥
केहरि माँगेउ दाहिन अंगा । तैं रानी नृपके भय अंगा ॥
तेरे गये पुत्र नहिं पाउब । मैं दुख मानि बहुरि फिरि आउब ॥
जैमिनि कहै सुनहु नृप ज्ञानी । सरस जानि मूर्च्छित भय रानी ॥
इह अंतर ताम्रध्वज धावा । विनय करत वन्दत पग आवा ॥
मोर शरीर विप्र किन लेहू । राजा जीव छाँड़ि किन देहू ॥
श्रुति मत कहै नयन झरि नीरा । पिता पुत्रकर एक शरीरा ॥
काहे लेहु अर्द्धतनु दाना । मोहि लै देहु सहित तनु प्राना ॥
तीनिहुँ ऋणते छूटहुँ आजू । जीवहु पिता मोर बड़ काजू ॥
तरुण माँस मृगपति भल मानहि । सुत पैहौ तुम हितकरि जानहि ॥
पुत्र धर्म भीषम भल कीन्हा । पिता वचन रघुपति वन दीन्हा ॥
पंकज चरण गहौं मैं तोरा । पुत्रधर्म राखहु तुम मोरा ॥
चरणरेणु सुत पुनि पुनि लेई । कुँवरहि विप्र न उत्तर देई ॥

ब्राह्मण उवाच ।

इतो सत्य तुम कहेउ कुमारा । सिंह कहेउ सो कहौं विचारा ॥
एक ओर टेकै जो रानी । दूसर सुत टेकै मन जानी ॥
दोहा-राम नाम यश गावत, त्रियसुत चीरहि देह ॥
ऐसे राजा दान दे, भाजै मन संदेह ॥ १४९ ॥
राजा शिर करवत तब देई । इहि विधि दान भले हम लेई ॥
जस नृप सुत तस मोर कुमारा । काहे देहुँ तुमहि दुख भारा ॥
राजा बहुरि विप्रसन भाखा । रानी अरु सुत दोऊ राखा ॥
शिर करवत राजा वैसावा । हाय हाय करि मानस धावा ॥
दोहा-एक ओर कुमदावती, दूसरि दिशि सुतहाथ ॥
रामनाम यश गावत, लागे चीरन माथ ॥ १५० ॥
कहै विप्र यहु सुनि हरि तहिया । दइँइत उदर विदारो तहिया ॥
बहु रिसाइ नृप विनती कीन्हा । चीरहिं तनु नृप करवत दीन्हा ॥
राजा रानीसन अस कहिया । सिज्यानख करवत इह अहिया ॥
कृष्णपंथ देखहिं नृपयात्रा । रानी सुत खैचहिं करपात्रा ॥
हाहा करत सबै दुख पावा । वाम नेत्र नृप जल भरि आवा ॥
नहिं लैहौं अस दान तुम्हारा । कलपत दान न देहु भुवारा ॥
आपन पुत्र सिंहको देहौं । रोवत दान कबहुँ नहिं लेहौं ॥
तरकि रिसाय विप्र उठि धावा । धाय पराइन शीश डुलावा ॥
रानी करवट लीन्ह अडोली । विप्र चलत कुमुदावति बोली ॥
सत्यवती स्वामी प्रिय मोरा । देह दई पुनि परेउ निहोरा ॥
बहुदातानि शिरोमनि संता । अतिथी विमुख होत है संता ॥
वचन परे राजाके काना । करवट टेकि नृपति सुस्ताना ॥
राजा कहै विप्र फिरि आवहु । मुनि जनमें मोहि अयश लगावहु ॥
अस करवटहि भई नाहिं पीरा । जस तुव बहुरत भइ बड़ भीरा ॥
विप्र कहा रोवत तनु दाना । अव तुम कवन करहु सनमाना ॥

राजा कहै सुनहु द्विजनाथा । लेहु शरीर सहित अध माथा ॥
बाँयें नेत्र ढरी जल धारा । ताकर द्विज तुम सुनहु विचारा ॥
वाम अंगको भइ बड़ लाजा । दाहिन अंग विप्रके काजा ॥
अस जिय जानि नीर बहि अंगा । विथा न भयउ करत तनु भंगा ॥
करवत देत कुसुम जनु शाला । तुम बहुरत जस घाउ विशाला ॥
नृपति वचन सुनि दीनदयाला । भयउ चतुर्भुज रूप गोपाला ॥
नृप कहँ आपन रूप दिखावा । महा धनुर्धर पंथ जनावा ॥
कमलनयन अंकम नृप लीन्हा । तत्क्षण सबै दिव्य तनु कीन्हा ॥
राजा राजनके शार्दूला । पंथहि मिलहु धर्मके मूला ॥
अस कोउ भयो न आगे होई । तुम पावनै त्रिभुवनमें सोई ॥
धर्म परीक्षा लीन्ह तुम्हारी । सत्यवंत व्रत शुद्ध विचारी ॥
सहित पुत्र रानी अरु राजा । बहुरि तु करहु यज्ञकर साजा ॥
ताम्रध्वज सुत अति रणधीरा । मूर्च्छित कीन्हे सब रणधीरा ॥
तुम अब भक्ति बहुत विधि कीन्हा। करवत चीर शीश निज दीन्हा ॥
अब दोनहु तुम लेहु तुरंगा । हम करवावहिं यज्ञ प्रसंगा ॥
जो करि नृपकी भेदी देहा । निष्कलंक भइ कंचन एहा ॥
राजा वचन कहेउ परमाना । परम ज्योति पायउ भगवाना ॥
दिव्य शरीर भयो मैं आजू । निर्मल जन्म भयो शुभ काजू ॥
चरणकमल देखे प्रभु तोरे । कोटिन यज्ञ भये अब मोरे ॥
पुत्र कलत्र महाधन संगा । हम जाउब जहँ यज्ञ तुरंगा ॥
तुमसन करवावहिं अस साजा । काकर यज्ञ करै धर्मराजा ॥
जूड़ी धरत अनल पर हरई । शीत विहीन वृथा श्रम करई ॥
गंगोदक परिहरै पियासा । बहुरि जु करै ओसकी आसा ॥
तैसे परिहरि संग तुम्हारा । बौरा भा नृप यज्ञ पसारा ॥
रणमहँ पुत्र हमार बचावा । नर नारायण दर्शन पावा ॥
पंथ कृष्णकी करि मनुहारी । राजा हरिकी अस्तुति धारी ॥
पुंडरीक लोचन बड़ इष्टा । शिव विरंचि सबहीके द्विष्टा ॥

डूमरि फल तैसा ब्रह्मंडा । नमस्ते व्यापक कला अखंडा ॥
नमस्ते करहि सृष्टि संहारा । नमस्ते व्यासदेवके धारा ॥
सृष्टि धरन नमो नाथ निशंका । नमस्ते फल सहस्र निकलंका ॥
लवन घनाय मूर्ति प्रभु संता । ज्ञानरूप जितकला अनंता ॥
रूप आदिष्टिसो परम अपारा । सगुण देह धरि भार उतारा ॥
प्रभु अस्तुति राजा बड़ कीन्हा । ह्वै दयालु प्रभु अंकम लीन्हा ॥
पंथहि नृपकी भक्ति दिखाई । तहाँ तीनि दिन रहे यदुराई ॥
योधा सबै नगर बुलवावा । बहुत भाँति भोजन करवावा ॥
तीनि दिवस भल भा आनन्दा । राजा कुमद शरद हरि चन्दा ॥
राजा बहुविधि अस्तुति कीन्हीं । ह्वै प्रसन्न प्रभु आज्ञा दीन्हीं ॥
कुमुदावती सर्व भंडारा । गजपुर पठवा सब परिवारा ॥

दोहा–पुरुषोत्तम शत नृपतिकर, अस्तुति यादव राय ॥
कोटिन दान यज्ञ फल, सुने जो नर चित लाय ॥ १५१ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि मयूरध्वजसत्यकथनं नाम

एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

जैमिनि कहै पुराण प्रसंगा । अब आगे कहँ चलेउ तुरंगा ॥
नृपति वीर वर्मा बस जहवाँ । चारों चरण धर्म रह तहवाँ ॥
कृष्ण सहित सगरे रणधीरा । सूरसुतपुर तहँ धर्म शरीरा ॥
राजा कन्या दीन्ह विवाही । तेहि कारण यम वहाँ रहाही ॥
घर घर चारि पदारथ हाथा । स्वप्न न करहिं पावकी साथा ॥
यज्ञ तुरंग नगर तेहि आवा । दूतन नृपसन बात जनावा ॥
बोले नृपति पाँच सामंता । आनहु यज्ञतुरंग तुरंता ॥
शूरभास नीलह बड़ बीरा । कुलभा सुरभा पँच रणधीरा ॥
गहो तुरँग लागी नहिं वारा । तबलग पहुँचे पंथ जुझारा ॥
कृष्णसहित अर्जुन भा ठाढ़ा । पकरा सुना क्रोध जिय बाढ़ा ॥

अर्जुन वचन सैनसन कहो। करहु युद्ध इनि घोरा गहो॥
नृप मंत्री सन कहा हँकारी। सेना सब ले लागि गुहारी॥
राजा नगरी फेरि दुहाई। छोटा बड़ा चलौ सब धाई॥
दिव्य सुरथ चढ़ि नृप भा ठाढ़ा। तृणवर लेखहि जो रण गाढ़ा॥
आनेउ तुरँग नृपति सविधानी। देखत सर्व हँसे मन जानी॥
राजा कहै कहा तुम पावा। ऐसा हय पृथिवी नहिं आवा॥
जो राजाकी आज्ञा पावहि। शीशपत्र कछु बाँचि सुनावहि॥
बाँचेउ पत्र कह्यो परसंगा। अर्जुनवीर अहै इह संगा॥
इह सुनि राजा मन विहँसाई। अर्जुनकी हरि करहिं सहाई॥
सबही मिलि कीन्हों इह ज्ञाना। पहुँचे पंथ करत संधाना॥
शंखध्वनि करि रणमहँ धावा। नृपति वीरवर्मा तहँ आवा॥
दुहूँ अनीसन भा संभेरा। देव चकित भे सुनत करेरा॥
केश केश नख नख भा जूझी। मारहि मुष्टि प्रहार अझूझी॥
जे दारुण मैमंत गयंदा। तिनहिं जुरे पायक बहु धंदा॥
भीमसेन अगणित रथ काटी। दश सहस्र रथ मिलि गये माटी॥
वभ्रुवाह कीन्हों बड़ जूझी। धाये यम गुहारि नृप सूझी॥
दावानल जस यम परजारा। पंथ सेन तस यम संहारा॥
समर लागि यम वड़ बल कीन्हा। गज तुरंग शिर गीधनु दीन्हा॥
हरिसन पंथ विनय अब धारी। देवलोक कोउ लाग गुहारी॥
जैसे शर हम करहिं सँधाना। निष्फल सबै कीन्ह रण बाना॥
अर्जुन चरण गहे दुखभंगा। मोहिं समझावहु सबै प्रसंगा॥
भक्ति शिरोमणि सो चित लाई। कहहिं कृष्ण सब कथा बुझाई॥
नृपके जन्मी कन्या एका। मालिनि नाम कीन्ह जिय ठेका॥
भई विवाह समय वरयोगा। राजा कुटुम बुलाये लोगा॥
घर परिवार नीकसो कीजै। तेहि वरको कन्या यह दीजै॥
पुनि राजा पूँछी जिय बाता। पूँछी कुमरि जाय तव ताता॥
मृगनयनी सकुचत कहि बाता। मानुषसँग नहिं करब संघाता॥

कहेउ पितासन तुम यह लेहू । मोहि लै . धर्मरायहूँ देहू ॥
इहवाँ मानुष जो कोउ मरई । ताकर न्याउ वहाँ यम करई ॥
जो कोऊ नर मोकहँ वरि है । सुनतहि बात अनलमें परिहै ॥
पितुकर दीन्ह जवन वर होई । तेहि तजि आन करै जो कोई ॥
तेहि मेलै यम नरक अघोरा । ताते चरण गहौं पितु तोरा ॥
जहँ कहुँ देहु नृपतिकरि भाऊ । तहँ तजि आन न जानौं काऊ ॥

दोहा-कै अनशनकरि मरिहौं, कै वरिहौं यमराउ ॥
जन पुरुषोत्तम वर्णही, मालिनिको सतिभाउ॥१५२॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि वीरवर्मातुरङ्गग्रहणं नाम
पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

जैमिनिरुवाच ।

कन्या वचन सुने जब ताता । राजा पुनि न कही कछु बाता ॥
मालिनि नित संयम सों रहही । नितप्रति ध्यान यमहिकर गहही ॥
जहँ मालिनि तहँ नारद आये । जानौ कुमरि नवौ निधि पाये ॥

नारद उवाच ।

कहे ऋषिय जारौ तुम देहा । कहौ कुमरि तुम काहि सनेहा ॥
कहै कुमरि नारद तप करऊँ । यमहि लागि निशिदिन अनुसरऊँ
जैमिनि नृपसन कहै पुराना । नारद गये जहँ यम परधाना ॥
सबै वृत्तांत कहा समझाई । ऋषिके कहत यमहि अति भाई ॥
धर्मराय ना देह सँभारी । आये सेवक सहित विचारी ॥
सरसुत पुर है देश सुहावा । नारद सहित तहाँ यम आवा ॥
चारो चरण धर्म तहँ रहई । हरिकी कथा नृपति नित चरई ॥
आये नारद नृपसन काहा । नृप वर्मा पुनि उहि जिय चाहा ॥
कहैं कृष्ण पंथहि समझाई । नारद सन नृप लग्न सुझाई ॥
शुक्ल पक्ष अरु माधव मासा । गुरु वासर तिथि तीज प्रकासा ॥

मंगलचार करहिं सब नारी। यम अरु मालिनि भाँवरि पारी॥
अष्टोत्तर शत सेवक जाना। तेहि मैं राज रोग परधाना॥
महावीर परचंड रहाई। जहवाँ यम तहवाँ सब जाई॥
यम प्रधान तब कहा बुझाई। इहवाँ रोग रहौ तुम छाई॥
राजरोग विनती तब लावा। कैसे रहै इहाँ हम छावा॥
लोग सबै नित विप्र जिमावै। राजा नित हरि भक्ति करावै॥
होम दान वेद-ध्वनि गीता। चारो वर्ण बसैं हरि हीता॥
यज्ञ धर्म ते लोग न छूटैं। भक्ति सुनत रोगन शिर टूटैं॥
रोग प्रमेह पिंड तनु संगा। वीसूचिका जलोदर अंगा॥
धर्मरूप राजा सब लोगा। कहवाँ आय बसै सब रोगा॥
अति शुचिवंत संत सब रहई। देखत दरश रोग सब दहई॥
व्रण अरु शूल गुल्म इक संगा। रहिते तहाँ जहाँ द्विज भंगा॥
अठ संग्रहणी अरु अतिसारा। गुरु घरनी जहँ विषम निहारा॥
व्रण अष्टोत्तर शत संभारी। पुत्र भगंद्र विषूची नारी॥
गुरुघरनी कहुँ करहिं कुभाऊ। इंद्रिय शूल होइ तहँ घाऊ॥
गुरुतल्पा अरु गोत्र कुधर्मा। सो हमारे जानै नित मर्मा॥
गुरु सेवक मानुष व्रतधारी। इहाँ न रहव हमहिं अति भारी॥
ज्वरते रहि सनिपातौ साता। फेरिन केरि कहै को बाता॥
अतीसार संग्रहणी कुत्रा। इहवाँ आइ रहव हम पुत्रा॥
अवरौ चक्र धारि जेहि नाऊँ। आवै इहाँ रहैं कह ठाऊँ॥
शूल तीनिसै मालिनि गंडा। इह कुश कुष्ठ महा परचंडा॥
वात पित्त पुनि कफ जु अपारा। धनुष बाण कर शूल कुठारा॥
नेत्ररोग मुखरोग विशाला। बालक मृत्यु अवर गँडमाला॥
वातरोग गल पुनि शिररोगा। यह तो नगर नाहिं हम योगा॥
जहवाँ नित हरि कथा सुधर्मा। हम प्रवेश तहँ जहाँ अधर्मा॥
वैवस्वत पुनि वचन सुनावा। हमरे संग रहौ तुम छावा॥

दोहा-अलंकार सब दिन प्रति, इहि विधि इहां रहाउ।
यम बोले रोगनसन, जहँ पठवहुँ तहँ जाउ॥ १५३ ॥

अर्जुन कहँ हरि कहि समझावा। तनु धरि रोग रहे तह छावा॥
धर्मिनके नियरे नाहिं जाहीं। पापिन कहँ वे धरि धरि खाहीं॥
राजा यमसन गोचर कहई। कवन रोग केहि विधि अनुसरई॥
सो मोहि स्वामी कहहु बुझाई। जेहि विधि पाप न नियरे जाई॥
धर्मराय राजासन कहिया। जैसे पाप पुण्य गुण लहिया॥
पाप पुण्य जानै भगवन्ता। रहे भूलि ब्रह्मादि अनन्ता॥
पुरुषोत्तम दासनकर दासा। अर्जुन कथा नृपतिसन भासा॥
जैमिनि सहित महाप्रभु अहई। संत कृपाते जन कछ कहई॥
जे कछु पाप कहत हैं लोगा। रोग सोग तहँ महावियोगा॥
सुनि राजा जो विप्र सतावै। तेहि तनु राजरोग पुनि धावै॥
महादेव जप होम प्रधाना। कंचन पुरुष देइ नित दाना॥
चौरासी कनक देइ जो वीरा। यम बोले भल होइ शरीरा॥
यम बोले सुनि रोगन राजा। ताकर ऐसा होइ न साजा॥
सिंह अस्त गोदावरि जाई। सुमिरन हरि इक मास कराई॥
यम भाषहि जनि तिनहिं सतावौ। तब तुम राजरोग मोहिं भावौ॥
राजरोगकी घरनी सोई। सुनि विषूचिका जा तन होई॥
सुर सामग्री को जु चुरावै। भोजन करत जे विप्र सतावै॥
गो द्विज अतिथि न आदर करई। तेहि तनु गाँठि विशुचिका परई॥
सो नर देइ नित्य गोदाना। शालग्राम शिलोदक पाना॥
जहँ नर होइ प्रमेह बहूता। दूसर राज-रोग कर पूता॥
माता पिता पच्छ जो नारी। कामचेष्टा करहि विकारी॥
विथा होइ तनु बोल न आवै। शुचिके समय बहुत दुख पावै॥
छुटै व्यथा नियरे नाहिं आवै। नित प्रति जो हरिके गुण गावै॥
मुखफोटकन होइ नर तेई। कनकमूर्त्ति हरि शिवकी देई॥
पांडुरोग उपजै नर काहू। सुनतै पुण्य हरै अघ ताहू॥

पंडित विप्र विष्णुजन होई। शुचि पकवान जिमावै सोई ॥
कुसुममाल शिवपूजन करई। त्रेपन सहस जाप अनुसरई ॥
राजरोगकर पंडुह भाई। इह पुण्यतै सोई विनसाई ॥
शोषनरोग होइ जेहि देही। कंचन देत रहै नहिं रेही ॥
गोत्रमध्य जे करते पापा। थाती देय करहिं संतापा ॥
ताहि जलोदर बहुत सतावै। गर्भ जाइ सुत देखि न पावै ॥
सुरभी अर्ध प्रसूती देही। चढ़तहि शूल विगतिसो नेही ॥
कंचन देहि तुला चाढ़ि दाना। सब रोगनकर भा अपमाना ॥
पाप विनाशन श्रीभगवंता। जासु चरित गावहिं नित संता ॥
जो नर परपीरा नित करई। ता तन रूप भगंदर धरई ॥
कदलीफल सुवर्ण कर देई। नीक होय हरिनाम जु लेई ॥
दान देत बरज कोइ पापी। ताके सन्निपात तनु व्यापी ॥
हरिकी भक्ति करै मनलाई। सन्निपात नाशै दुखदाई ॥
जो विश्वासघातकी होई। अतीसार व्यापै नर सोई ॥
धर्मद्रव्य जो चोर चुरावै। संग्रहणी पुनि ताहि सतावै ॥
कनक अर्द्ध पुनि देहु गढ़ाइ। तुरतहि संग्रहणी घटि जाई ॥

दोहा-जे कोइ विप्र सतावही, ताकहँ अनरुचि होइ ॥
इच्छाभोजन विप्रको, निवति जिमावै सोइ॥ १५४॥

जेठेकहँ जे कराहिं प्रहारा। अरु पापी नर जे बटमारा ॥
आश निराश करै जे कोई। दारुण शूल हूल डर होई ॥
फन्दा करि पशु पक्षिहि धरहीं। करि उतपात घात जे करहीं ॥
ताके तुमुल शूल अनुसरई। जे मानुष चोरी नित करई ॥
ताल कूप बनवावै वेरा। रोगन हरत लाग नहिं बेरा ॥
जे हरिकथा मनहिमें गुनई। साथ होइ मनहीमें सुनई ॥
कर्णशूल तेहि सदा सतावै। अमर न होइ बहुत दुख पावै ॥
कथा सुनै निश्चय नहिं धरई। कपिलाधेनु मन्दिरहि रहई ॥
परधन परदारा लै जाही। नेत्ररोग अरु पुत्र नशाही ॥

सुवरण कमल देइ जो दाना । नाशै रोग दया भगवाना ॥
गिरि तीरथ अरु काशीनाथा । निर्मल होइ संतके साथा ॥
निद्रा साधन करत जु डोलहि । सो नर तो जड़ तोतल बोलहि ॥
पर अपवाद करै जो कोई । मुख बड़ रोग ताहि कहँ होई ॥
जाके अन्न धन्न घरि आवै । काहू देइ न आपु चरावै ॥
बधिर होइ सब देह सुखाई । विप्र जिमावत रोग नशाई ॥
हरिकर भजन करै मनलाई । आन जन्मकर पातक जाई ॥
रोगरूप है व्यापै तरना । सेवा विप्र भक्ति हरि करना ॥
एकौ पाप न तनु संचरई । जो इह सुनिकै चितमें धरई ॥
हरिजनकेर करै कोउ भंगा । कबहूँ रोग न छाड़ै संगा ॥
भोजन करत चाप गल सोई । ताके गंडमाल गल होई ॥
रक्षा भोजन विप्र जिमावै । हरि हरकर घंटा चढ़वावै ॥
पंचरतन औ नरियल देई । गंडमाल नीको करि लेई ॥
दान देत जो शीश डुलावै । आपु सु उबरै ताहि सतावै ॥
कंचन केरि धेनु भल करई । देय उबारि रोग परिहरई ॥
तीर्थ जाय जो पाप लहावै । अरु मारगमें वसन चुरावै ॥
तोरै विप्र जनेऊ कोई । डंबरोग ता-कहँ अति होई ॥
उत्तम कनक जनेउ गढ़ावै । देव विप्र कहँ आनि चढ़ावै ॥
तीरथ चलत दान जो देई । डमरुरोग नीका तब होई ॥
कृत्रिम भक्ति करै जो कोई । ताके शूल महा तनु होई ॥
साधुको शीश नवहि नहिं जोई । ताके शिर पीडा नित होई ॥
दिनकरकी पूजा नित करई । शिर पीडा तबही परिहरई ॥
भोजन विप्रनाम भगवाना । सब रोगनको हरै निदाना ॥
जो जन कर्मविपाक कराई । हरिकी कथा सुनै चितलाई ॥
ताके रोग निकट नहिं आवै । सुयश गोविंद जाहि जिय भावै ॥
जो कछु पूर्वजन्मकी बाता । भूत भविष्यत जानि विधाता ॥

दोहा-जैमिनि ऋषिके कहेते, कछु कछु कीन्ह बखान ॥
पुरुषोत्तम नाहिं जान कोउ, रचना श्रीभगवान॥१६९॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि कर्मविपाकवर्णन
नाम एकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

जैमिनिरुवाच ।

यम रोगनसन कहा बुलाई । सबै कामरूपी सँग लाई ।
आनि बसे पुर सरस्वत जहवाँ । होन विवाह लाग पुनि तहवाँ ॥
मंगलचार वाद्य बजवावा । वेदी विधि मंडफ्रै छवावा ॥
तप्तहुताशन होम करावा । नारद सहित तहाँ यम आवा ॥
पाणिग्रहण नृपति तब कीन्हा । धर्मराय पुनि उत्तर दीन्हा ॥
दै कन्या माँगिय कछु नाहीं । राजा कहै समुझि मन माहीं ॥
मोसन कछु माँगहु तुम राजा । जियहु बहुत दिन राजसमाजा ॥
फिरि यम कही नृपति सुनि बाता । हम पति गृही और तुम दाता ॥
भिक्षुक दातहि देत अशीशा । जाकर दोष नाहिं नर ईशा ॥
तब नृप कह तबही शुभ जाना । जबही देखहुँ श्रीभगवाना ॥
तबलग रहौ तुमहु हम संगा । हरिपद देखहुँ कल्मष भंगा ॥
यम बोला तुम मिलि दुख सहिहैं । हरि ऐहैं तब लगि हम रहिहैं ॥
वासुदेव अर्जुन समझावा । आदि अंत सब कथा बुझावा ॥
सावधान कीन्हे सब वीरा । आवत हैं राजा रणधीरा ॥
पंथ मयूरध्वज संभारा । पंथज कर्णज महाजुझारा ॥
प्रद्युमन आदि सबै रणयोधा । आयउ राजा भयो विरोधा ॥
कृष्ण वचन रण चढ़ेउ अडोला । राजा अर्जुनसन तब बोला ॥
सबै वीर मैं रणमहँ जीता । अब तुम बाण लेहु हरिहीता ॥
जूझैकी भुजबल मो खाजू । तो बिनु कौन निबाह आजू ॥
पंथ सहित अरु है प्रभु वीरा । करौं प्रहार विषम रणधीरा ॥

वचन परे अर्जुनके काना । बाण सात तब कीन्ह सँधाना ॥
बाण सात राजा फटकारा । अर्जुन तन नहिं रहेउ सँभारा ॥
नृपति मयूरध्वज दुख माना । क्रोधित मेलेउ दारुण बाना ॥
कृष्ण पंथ सब उठे रिसाई । मेलिन बाण सहे नहिं जाई ॥
जा विधि वर्षत जलद अपारा । बरषत बाण महा असरारा ॥
राजा बाण सहस्र अड़ावै । तिल तिल करि सब पंथ खसावै ॥
नृप मेले दारुण शर साता । अर्जुन बाण साठि आघाता ॥
हरिसन्मुख छाँडेउ सौ बाना । सहित निमंत कीन्ह संधाना ॥
अर्जुनके रथ मारि खसाये । बहुरि वीर पछमन नहिं आये ॥
जस नर मोह फाँस जग बंधा । तैसहि बाण नृपति पुनि संधा ॥
वासुदेव अर्जुन सन बोला । इह तो नृप रण महा अडोला ॥
जैसे धरणि कर्ण रथ ग्रासी । तेहि विधिपै नृप भये निरासी ॥
चक्र सुदर्शन है रण काला । तेहि जैसे मारेउ शिशुपाला ॥
बाँधेउ उदधि जवन रण बाना । सो बल राजा करि संधाना ॥
इह अंतर हनुमंत रिसाना । इह तो नृपति महा बलवाना ॥
नारायण नहिं जंबुकमाली । जानकि त्रास बहुरि जनु शाली ॥
कृष्ण कहैं हनुमत बरवीरा । हम तुम मिलि जीतहिं रणधीरा ॥
वचन सुनत मोरध्वज धावा । सारथि रथ लै गगन उड़ावा ॥
पुनि तब आय परेउ रण धरनी । जानहि नृपति युद्धकी करनी ॥
राजा कहै सुनहु हनुमंता । मैं देखेउँ अब कमलाकंता ॥
जसे रवि शशि तिमिर नशावै । पंथकेर दुख हरि न वढ़ावै ॥
हनुमत कहा सम्हारहु राजा । अब मैं करत अहों रण साजा ॥
राजा विषमबाण फटकारा । हनुमत किय मुष्टिका प्रहारा ॥
मूर्च्छित नृपति परे विकरारा । उठेउ सभारि न लागी बारा ॥
पुनि तीनहु तन कीन्ह प्रहारा । लीन्ह बचाय कृष्ण रखवारा ॥
पंथ कृष्ण अरु अर्जुन वीरा । तीनिहुँको कीन्ही रण पीरा ॥
कृष्ण कहा सुनि पंथ कुमारा । देखि पंथ नृप महा जुझारा ॥

वर्ष सहस्त्र युद्ध जब करि है । तबहूँ राजा रण नहिं मरि है ॥
सब बीरन इह रण महि जीता । हमैं तुमैं कीन्हेउ भयभीता ॥
हरिसन अर्जुन बोलेउ चोषा । इह कीन्हेउ हरिकर संतोषा ॥
राजा कहँ हरि दीन्ह बड़ाई । रूप चतुर्भुज भे यदुराई ॥
अर्जुन सावधान तब भयऊ । बोले वचन नृपति सुनि लयऊ ॥
जेहि त्रैलोकनाथ हरि कहहीं । सो प्रभु तुम्हरे सन्मुख अहहीं ॥

दोहा–अर्जुन वचन कहे जब, परे नृपतिके कान ॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, छाँड़ि नृपति संधान ॥ १५६॥

वीरवर्मोवाच ।

राजा कहै सुनहु हरिहीता । तुम रण मोहि वचन महि जीता॥
वीर न कोउ प्रभु तुमहिं समाना । वचन सुनत मम हृदय जुड़ाना ॥
देखि रूप तब नृपति लजाना । कृष्ण चरण पंकज उर आना ॥
निशिदिन हमरे तुमरिय शरना । त्राहि त्राहि प्रभु आरत हरना ॥
सावधान कीन्हा यदुराई । अवरौ आय संग सब धाई ॥
पंथहि भेंटेउ नृप उरलाई । तजनि युद्ध करि रामदुहाई ॥
लीन्ह लिवाय पंथ यदुराई । भली भाँति कीन्ही पहुनाई ॥
सबकी नृपति कीन्ह भलि सेवा । हे दयाल देवनके देवा ॥
धर्मराय अस्तुति भल कीन्हा । पुनि पुनि चरण रेणु शिर लीन्हा ॥
दिन दिन होइ शुद्ध ज्यवनारा । गीत नाद अरु मंगलचारा ॥
पंथ गोविंद हरण दुख फंदा । दिन छे रहे करत आनन्दा ॥
सरस्वतपुर जो धन कछु रह्यो । नृप गजपुर तेहि भेजन कह्यो ॥
मुक्ता अष्ट सहस दश भारा । अगणित लादे रतन भँडारा ॥
इकहत्तरि सहसौं गज भरे । श्यामकर्ण अगणित सँग करे ॥
नव सहस्त्र सुंदरि सर्वंगा । गजपुर चलीं रानि धन संगा ॥
सरस्वतपुर में सुत बैठावा । राजा हरिके संग सिधावा ॥
चले कृष्ण सब सैन समेता । वन द्रुम टूटि होइ सब खेता ॥

स्यंदन एक एक गंभीरा । जाय ठाढ़ भये गजपुर तीरा ॥
मान ग्राह नाके मैमंता । घोर करत जनु उदधि अनंता ॥
महा भयावनि तरि नाहिं जाई । सबै मीन वै कुंजर खाई ॥
अतिय अलोल उठै परचंडा । मानहु सातों उदधि अखंडा॥
नृपवर्मासन पंथ सुनावा । ये तो मानसरोदक आवा ॥
कहै नृपति मैं मर्म कहाऊ । इह जल हल जंबू नद नाऊ ॥
कृष्ण कहै सुन पंथ कुमारा । जहाँ अहै पर्वतकी धारा ॥
तेहि ऊपर सब कटक उतारा । कृष्ण कृष्ण करि सब भये पारा॥
तरेउ तुरंग पंथ सब सैना । संग संग सब पंकजनैना ॥
मारग विष्णुसरोदक गाढ़ा । सब कोउ उतरि पार भा ठाढ़ा॥

दोहा-पुरुषोत्तमहि चकोर खग, कृष्ण शरदनिशिचंद ॥
दर्शनही मूर्च्छित भये, निरखतही आनंद॥१५७॥

इति श्रीम०अश्वमेधप०वीरवर्मयुद्धप्रारम्भणं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५२॥

करि प्रणाम गोविन्दके चरना । मैं शरणागत राखहु शरना ॥
कृपासिंधु प्रभु दीनदयाला । जल थल जीव करहु प्रतिपाला॥
प्रणवौं गणपति सेवा चाऊँ । करहु कृपा गोविंद गुण गाऊँ॥
सुमिरत राम गये दुख फंदा । चलेउ तुरंग भयो आनंदा ॥
जैमिनि जियमें सुमिरि गणेशा । वर्णिनि पंथ गये जेहि देशा ॥
सारस्वतपुरहि बहुरि हय गयऊ । निकसेउ वेग पवन जिमि भयऊ ॥
कौंतलपुर भल देश सुहावा । चन्द्रहासपुर पुनि नियरावा ॥
पुरुषोत्तमजन करहिं बखाना । वदन तुरंगम चन्द्र समाना ॥
मकरध्वज पद्माक्षि कुमारा । निकसे बाहर नगर जुझारा ॥
खेलत खेल तहाँ चलि आयउ । यज्ञ तुरंगम इतते धायउ ॥
देखतही सवक बहु धायउ । पकरि तुरंग नगर लै आयउ ॥
अर्जुन सैन तबै चलि आई । यज्ञ तुरंग न दीन्ह दिखाई ॥

नीचेते ऊँचे भा ठाढ़ा । तृण वर लेखहि जो रण गाढ़ा ॥
हय पाछे पहुँचे सब वीरा । कृष्ण कृष्ण नंदन रणधीरा ॥
अर्जुन अरु हंसध्वज राजा । ताम्रध्वज बभ्रुवाहन साजा ॥
नीलध्वज वृषकेतु प्रकीता । पहुँचे शल्य महा रणजीता ॥
सबै चकित ह्वै दुहुँदिशि धावहिं । यज्ञ तुरंगम खोज न पावहिं ॥
किधौं स्वर्ग कै गयो पताला । कासन अब करिये शरजाला ॥
चिंतावंत भये सब वीरा । चितवहिं कोमल विकल शरीरा ॥
तेहि अवसर इक आय विमाना । तेजवंत रवि बिंब समाना ॥
सन्त शिरोमणि विश्वेच्छाता । कलह प्रिय नारद साक्षाता ॥
आय तहाँ अर्जुन धनुधरना । भिन्न भिन्न टेके सब चरना ॥
पूजा करि पूछेउ मुनिदेवा । कछु तुरंग कर जानहु भेवा ॥
तुम त्रैलोक कुशल सब जानहु । भूत भविष्य सकल पहिचानहु ॥
संत दरशते दुःख नश जइय । तुम्हरी कृपा तुरंगम पइये ॥
मुनि नारद सुमिरण जिय कियेऊ । पुरी कौंतलहि तुरंग लियेऊ ॥
परमभक्त रसना मनुपासा । तहँवा बसै राउ चन्द्रहासा ॥
नृप कौंतल वनवास सिधारा । दै कन्या अरु राज पसारा ॥
धृष्टबुद्धि मंत्री नृप आहा । तासु सुता सन भयेउ विवाहा ॥
केरलपति सुत महा जुझारा । बिनु पितु मात कलिंद प्रतिपारा ॥
लक्ष्मीपति प्रसाद अस वाजा । आय भयो कौंतुलपुर राजा ॥
हरिकर जन चन्द्रहास बसाहीं । तेहि समान योधा कोउ नाहीं ॥
पटतरही जु कहै जन कोई । इनकी सरवरि आन न होई ॥
नारद वचन पंथसन कहे । सुनतहि सब विस्मय ह्वै रहे ॥

अर्जुन उवाच ।

कहै पार्थ ऋषि मोहिं समझावहु । विधिवत करि सब कथा सुनावहु ॥
नारद कहै समय अब नाहीं । तुम जु कही चिंता जियमाहीं ॥
पार्थ कहै जो मम हित चहहू । संतकथा सिगरी तुम कहहू ॥
जेहि कुरुक्षेत्र परेउ रण बाना । गीता सुनेउँ कही भगवाना ॥

जो न सुनैं भागवत चितलाई । तिनकी नाहिं मोक्षगति भाई ॥
हरि यश सुनै अनत चित टारै । असमय समय न चित्त विचारै ॥
आयु घटै अरु धर्म नशाई । संतकथा न सुनै चितलाई ॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन अर्जुन, ऋषिसन विनती कीन्ह ॥
सावधान सब वीर भये, कथा कहै मुनि लीन्ह १९८

नारद उवाच ।

केरलपति अति धर्म शरीरा । बड़ दाता जानै परपीरा ॥
बहुत वैस भइ वन चलि गयऊ । पुत्रशोक राजा हिय भयऊ ॥
विधिसँयोग कछु ईहै वनाई । राजा गेह पुत्र भयो आई ॥
पुत्र भयो राजा सुख माना । पंडित नगर बोलि सब आना ॥
साधहु घरी सुलग्न विचारहु । शुभ अरु अशुभ नीक निरधारहु ॥
लग्न विचारि विप्र तब कह्यो । अशुभ लग्न बालक यह भयो ॥
याके मारे तुम क्षय जाहू । यह रिरिषिर ह्वैहै बड़ राहू ॥
इह मारै तुम अस्थिर रहहू । ईहै विचार लग्न कर कहहू ॥
तब राजा जिय सोच विचारा । मोरी क्षय औरौं परिवारा ॥
पुत्र विना अपयश है भारी । प्रात नाम नहिं लेइ विचारी ॥
मेरो वरु चाहै कछु होई । या बालक जिय मार न कोई ॥
राजा पुत्र नृपति सुख माना । सुनहु पंथ मैं करौं वखाना ॥
मूल नक्षत्र पुत्र यह भयऊ । केतिक दिनमें सब धन गयऊ ॥
वैरिन आय नगर पुनि छेका । एकौ दिवस रही नहिं टेका ॥
बाहिर नगर निकसि नृप आवा । रणमहि वैरिन मारि गिरावा ॥
सेवक माथा मंदिर आना । देखत रानि न छाँड़िउ प्राना ॥
इस्त्री पुरुष सबै तिहि मारा । छोटा बड़ा सबै संहारा ॥
लैटेउ नगर भयो अंदोरा । निकसि धाय लीन्हेउ उहि कोरा ॥
धाय गयो कौंतलपुर आवा । भेष कीन्ह काहू नहिं पावा ॥
रहै नगर कोउ अंत न पावै । चुनि भिक्षा करि आनि जिवावै ॥

वर्ष तीनि कीन्हेउ प्रतिपाला । विधना कीन्ह धायकर काला ॥
तीनि वर्षकर शिशु दुखदाढ़ा । सुंदर जन कंचन कसि काढ़ा ॥
वाम चरण षट अंगुल सोहा । जो निरखै तेहि उपजै मोहा ॥
सुनहु पंथ हरिइच्छा करई । सबै नगर माया जिय धरई ॥
कोऊ बनिता लावै तेला । कोउ भोजन करि देहि अकेला ॥
कोउ लै घर पकवान खवावै । कोउ छुहाय अंबर पहिरावै ॥
कोउ लै मर्दन करि अस्नाना । चंदन लाय खवावै पाना ॥
कोउ उपान पद लै पहरावै । कोउ श्रवणन कुण्डल लटकावै ॥
अति सुंदर पहरै तनु बागा । देखत सबहि मनोहर लागा ॥
पाँच वर्षकर भया सुहेला । घर घर आवै जाय अकेला ॥
धृष्टबुद्धि मंत्री अति हीना । ताके ऋषिय निमंत्रण कीना ॥
आये ऋषि शंखध्वनि करही । बालक सब आनँद जिय भरही ॥
खेलत खेलत तहँ शिशु गयऊ । देखि ऋषिय सब मोहित भयऊ ॥
सुनहु पंथ जे ऋषि तजि माया । उनहि कृष्ण उपजाई दाया ॥
बालक सबन लीन्ह उर लाई । पाछे कै ज्यवनार बनाई ॥
मंत्री कीन्ह विविध पकवाना । घृत पापर नहिं जाय बखाना ॥
मुनि जेमहिं अरु शिशुहि जिमावहिं। लेहिं गोद सबही मनभावहिं ॥
नीकी विधि मुनि भोजन कीन्हा । वारि कपूर आचमन दीन्हा ॥
कंचन रत्न भूमि गोदाना । वस्त्र पटंबर बहुविधि आना ॥
दीन्ह दान टेके मुनि चरणा । तुम लायक कछु ना दुख हरना ॥
दीन्ह अशीश सबै मुनि ईशा । धृष्टबुद्धि जो नावत शीशा ॥
मुनि बालकको देहिं अशीशा । रक्षा करहिं सदा जगदीशा ॥
मंत्री तबहिं ऋषीसन कहिया । आशिर्वाद कवनको दइया ॥
मंत्री सो ऋषि पूँछहिं बाता । को इनकी जननी अरु ताता ॥
फिरिकै मंत्री वचन सुनावा ।इहाँ आजु शिशु अगणित आवा॥
राजकाज मैं रहौं भुलाना । का जानिय काकर इह आना ॥
जो हमरे मुख कृष्ण कहाई । सो काहूसन मेटि न जाई ॥

आकस्मात भयो गति आई। जो हम कहेउ सु होइ सहाई ॥
लक्षण पूजित अरु मनहरना। तुम सब रहो याहिकी शरना ॥
ह्वैहैं सुंदर नयन विशाला। नीके तुम करिहो प्रतिपाला ॥
यहै वचन कहि ऋषिय सिधाये। मंत्री धवला गृहको आये ॥
रोवहिं दुख मानहिं असरारा। शिशु मारन मन कीन्ह विचारा॥
पूछेउ पुनि सब नगर बुलाई। काहू कर नहिं शिशु सुधि पाई ॥
ऋषिके वचन आजु मैं टारौं। इह अनाथ ततक्षणही मारौं ॥

दोहा-तुरत घातकनटेर कह, महिषिधेनु बहु लेहु ॥
जा इहि लरिकै मारहू,चिह्न आनि मोहि देहु ॥१९९॥

चंडालन सुनि भयो अनंदा। आये जहाँ शिशु आनँदकंदा ॥
शिलगलकीली लीन्ही हाथा। लै शिशु चले आपने साथा ॥
देखि पशूगण सब शिशु भागे। वे कहँ जाहिं रहे हठि आगे ॥
चंडालन अपने सँग लावा। जाहिं चले वन कहुँ बौरावा ॥
महाघोर वन अति घबरावा। जहँ बहु बाघ सिंह रहै छावा ॥
मारनकहँ लै चले चण्डाला। विना गोविंद कवन प्रतिपाला ॥
मेलिन मुखमहँ शिला किशोरा। इह भल अहै लिलाना मोरा ॥
अवरौ पाहन गोलक हाथा। केश गहै हरि वाल अनाथा ॥
नारद कहै पंथ सनि धीरा। हरि हरि बोलत लोचन नीरा ॥
देव देव नारायण नामा। सुमिरहिं बालक हरिगुणग्रामा ॥
कृष्ण कृष्ण गोविन्द सुदेवा। वासुदेव नारायण सेवा ॥
सब व्यापक प्रसन्न तब भयऊ। चंडालन जिय दया जु लयऊ ॥
मोहे अंत्यज छोड़े केशा। काहे वधिय मनोहर भेशा ॥
नयन विशाल महा सुकुमारा। बाहु दीर्घ शिशु हरि आधारा ॥
इह बालक जो वनमें मरि हैं। प्रलयकाल लगि नर्कहि परि हैं ॥
पाछे जीव बहुत हम मारा। वे अघ क्षमा करहिं करतारा ॥
मारिय ते जे करहिं उपाया। यह शिशु कवन कीन्ह अन्याया ॥
यह बालक बिन जननी ताता। इहकर कबहुँ न करिये घाता ॥

छाँडि जीव करिये नाहिं भंगा । कछुक काटि लै चलिये अंगा ॥
पुनि चंडाल करत मन ज्ञाना । काटिये कवन अंग परमाना ॥
वदनकमल चरणन चित लाया । काटि न सकै बढ़ी अति दाया ॥
आति सुंदर सर्वांग सुरेखा । वाम चरन षट अंगुलि देखा ॥
महामंद मंत्री अति कहई । लेहि काटि ऐसे कछु अहई ॥
अंत्यज काटि षडंगुल लीन्हा । लै मंत्रीके करमें दीन्हा ॥
धृष्टबुद्धि के परशे चरना । चिन्ह दिखाय सुनायो मरना ॥

दोहा–सुनि मंत्री आनंद युत, महिष धेनु बहु दीन्ह ॥
अब को राजा होइ है, गूढ़ वचन ऋषि कीन्ह ॥ १६० ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चन्द्रहासोपाख्यानं नाम
त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

नारद उवाच ।

सुनि अर्जुन भुजमहाविशाला । जवनै विधि हरि शिशु प्रतिपाला ॥
छिन्न षडंगुल उहि वनमाहा । जीव जंतु सब कीन्ह उछाहा ॥
इहिविधि चंद्रहासकी रक्षा । माया उपजी पशु अरु पक्षा ॥
सुमिरन तोर मित्र कर करई । वे नर जन्म जन्म निस्तरई ॥
रसना हरि हरि नित उच्चरई । निशिदिन हरि हरि सुमिरन करई ॥
बालक तरुण वृद्ध जो कोई । रसना हरि हरि सुमिरै सोई ॥
अँगुली कटत भई तनु पीरा । रोवन लागेउ रुधिर शरीरा ॥
चाट लि रक्त मृगी शिशु पाया । आपु अमरपति जन किय छाया ॥
रोवहिं सब जे बनका घरनी । मानहु चंद्र परेउ खसि धरनी ॥
पक्षिनकहँ लागी अति माया । पंख पसारि करहिं सब छाया ॥
वनसपती सब देव खारी । करि करुणा मानहि दुख भारी ॥
बक सारस दुख मा मराला । दुखित देखि तेहि क्षण सो बाला ॥
रूप देखि रोवहिं विकलाई । सबके विधि माया उपजाई ॥

शुक सारस पारावत रहिया । रोवहिं सब जे बनमहँ जहिया ॥
विधि संयोग कछु इहै बनाई । कलिंद द्रव्य लै कौंतल जाई ॥
शुभ घरि जानि शकुन शुभ भयो । वेगिहि कौंतलपुर सो गयो ॥
परशेउ चरण मंत्रिके जाई । धन दीन्हेउ बहु विनय सुनाई ॥
मंत्री आदर बहुत कराई । नृप कलिंदकी कीन्ह बड़ाई ॥
सौंपेउ धन कीन्हेउ परणामा । बहुरि चलेउ पुनि आपन ग्रामा ॥
तेहि अवसर कालिंद तहँ आवा । देशरक्षको मनमहँ भावा ॥
खोजत मृगन चला बनमाहा । देखेउ पक्षि कीन्ह सब छाँहा ॥
पुष्पित फलित महावन फंदा । झाँपि जलद लीन्हेउ जनु चंदा ॥
देखि कालिंद जीव सब भागे । हिमकर वदन परे शिशु आगे ॥
देखेउ बालक अद्भुत वेषा । रक्त भरे रोवाहि शिशु रेषा ॥
हरि हरि जपै न लावै भोरा । लीन्हेउ उतारि कालिंदर कोरा ॥
मुख प्रक्षाल रुधिर पुनि धोवा । बालक देखि कालिंदहु रोवा ॥
आँसू पोछ निकट बैठावा । को तुम बाल कहाँते आवा ॥
कौन कुटुंब कहाँ तव वासा । देखिय अस जस रवि परकासा ॥
हरि हरि बालक बोलत वैना । काहू तनु नहिं चितवत नैना ॥
बहुत कालिंदहु सोच विचारा । इह बालक अद्भुत अवतारा ॥
एहिकर तात जननि गोपाला । हरि कीन्हेउ याकी प्रतिपाला ॥
तब कालिंद बोलेउ परधाना । विधना दीन्हेउ मोहि सुत दाना ॥
सुत विहीन मैं पुण्य न कीन्हा । वैष्णव पुत्र राम मोहिं दीन्हा ॥
उपतिष्ठेऊ पुण्यकर चीन्हा । कृपासिंधु हरि दुख हरि लीन्हा ॥
अंकमाल दीन्हेउ जिय भावा । आपन ढिग रथमाहिं चढावा ॥
चँदनावति नगरी कहँ आवा । बालक सहित पहूँचेउ तहँवा ॥
बहु विधि दान पुण्य तेहि कीन्हा । तो असअर्भक विधि मोहिं दीन्हा ॥

दोहा-जगत फाँस अतिभीषण, सो काटी सुत मोर ॥
संतकथा पुरुषोत्तम, बोलत है कर जोर ॥१६१॥

आय कलिंद अनंदित तहँवा। नगरी चँदनावति बसि जहँवा॥
पुत्र सहित मंदिर पै सारा। पतिव्रता जहँ तहँ पगु धारा॥
सुतकी कथा कही समझाई। पतिव्रता जनु नव निधि पाई॥
भयो मनोरथ सुकृत जागा। वंझा नाम गयो दुख भागा॥
तब कलिंद बोले परधाना। संत बुलाइ मता बड़ ठाना॥
विप्रनसन मंदिर बुलवावा। कनक रत्न बहु दान दिवावा॥
पंडित जन त्रिविधि जो आवा। कै प्रणिपत्ति रहसि गल लावा॥
पंडित गणत भयउ आनंदा। यह बालक है है कुलचंदा॥
पुनि है चंद्रबिंब जस शोभा। चंद्रहंस सु नाम मन लोभा॥
रसना रटहि कृष्णगुणग्रामा। ताते चंद्रहास भयो नामा॥
अगणित पुरुषा तारै सोई। जेहि कुल एक वैष्णव होई॥
वृद्ध होइ अरु पढै बहूता। विनु हरि भक्ति प्रेत यमदूता॥
लरिकाहू जे हरि हरि कहई। कुल ताराहि वैकुंठहि रहई॥
तात जननि जिय भयउ हुलासा। पृथ्वीपति होवै शशिहासा॥
नारद पंथहि कथा सुनाई। सबकी बिदा कलिंद कराई॥
शुक्लपक्ष जस वाढै चंदा। तस बाढहि सुत होइ अनंदा॥
जब चाहै तब घन वर्षाहीं। दुखियनके सुनि दुःख पराहीं॥
सुरभी देहि बहुतकै क्षीरा। कबहूँ रोग करै नहिं पीरा॥
शाखा उपजै देशसुचारा। नितही सुनिये मंगलचारा॥
जब सुत सात वर्ष नियरावा। विप्र बुलाय पढ़न बैठावा॥
गुरु लागेउ अक्षर सिखवावै। रसना हरि तजि आन न भावै॥
हारि परेउ गुरु बहुत रिसाना। हरि हरि छाँडि पढ़ै नहिं आना॥
तब जिय क्रोध बहुत गुरु कीन्हा। चंद्रहास कहँ त्रासित कीन्हा॥
चंद्रहास गुरुसन कर जोरा। जनि तुम विदा करहु तनु मोरा॥
सभा मनाये सिद्धो वरना। हरि हरि जपौं सुनौं हरि करना॥
जो करते शिर देहु न डोलहि। हरि तजि अक्षर आन न बोलहि॥
सुनत वचन गुरु क्रोध प्रचारा। कीन्हेसि तनुमहँ दंड प्रहारा॥

डरडरात कंपत भयभीता । गद्गद् वचन कहत सुठि हीता ॥
हरि हरि बोलेउ वचन प्रमाना । जिभते अवर न निकसै आना ॥
हरि हरि नाम जपैं मन जानी । सो पंडित सोई बड ज्ञानी ॥
हरि हरि सो जोहि प्रीति न होई । वेद शास्त्र पढि निष्फल सोई ॥
श्रीनारद अर्जुन समझाई । वैष्णव चरित सुनहु मन लाई ॥

दोहा--चंद्रहास राजा बड़, सुनतहि पाप पराय ॥
हरिप्रेमी जिय जानही, जो प्रभु दास कहाय ॥१६२॥

इह अंतर कलिंद है जहँवा । क्रोधित गुरु आये पुनि तहँवा ॥
बड मूरख है पुत्र तुम्हारा । निशिदिन हरि हरि करहि पुकारा ॥
लरिकन लै हरि हरि गुहरावै । आपन नाचै उनाहिं नचावै ॥
मोहि कहै तुमहू पुनि नाचहु । रटहु गोविंद कालते वाचहु ॥
तब मैं कीन्ह दंड परहारा । देखहु हरि हरि अजहुं पुकारा ॥

कलिंद उवाच ।

ताड़ेउ नीके किनहुँ न जाना । मूरख यहे रटै भगवाना ॥
मैं सुतहीन शुद्ध मन कीन्हा । पायउँ परा विधाता दीन्हा ॥
मूर्ख पिशाच पढ़े कह कहिया । हरि हरि कहत टेरे ध्रुव तहिया ॥
चरित बाल गुरु सुनि चित लाई । हरिवासर कहुँ अन्न न खाई ॥
जल न ग्रहै अरु रहै निरासा । तेहि दिन सबहि करहि उपवासा ॥
चलि कलिंद गुरु मंदिर आये । हरि हरि बोलत शिशु उर लाये ॥
बालिनि व्याल बहुत उपजाई । लोग डसै अरु मानुष खाई ॥
पूर्वजन्म पंचाग्निहि साधेउ । तजि बिकार गोविंद अवराधेउ ॥
अनशन कीन्ह बनारस जाई । हरिजन पुत्र मिलेउ मोहि आई ॥
आठ वर्षका भा चन्द्रहासा । देइ जनेऊ वेद परकासा ॥
वेदाहुति विप्रन तब कीन्हा । सबकहँ दान दक्षिणा दीन्हा ॥
हृदय बसै हरि अलख अभेदा । बिनही पढ़े पढ़े सब वेदा ॥
श्रुति स्मृति अरु सकल पुराना । हरिप्रसाद तेहि निगम बखाना ॥
वेद पुराण लोग समुझावै । हरिजन छाँड़ि आन नहिं भावै ॥

संपूरण विद्या जब आई। क्षत्रिय धर्म सुनहु चित लाई॥
संतत संत भक्ति धनु ठाना। सात्विक गुण कीन्हे परमाना॥
हरि सुमिरन कर कीन्ह निवरना। चितये मनमहँ हरिके चरना॥
उर अनंगचित वाण अड़ावै। बधै विरहि हरिही चित लावै॥
निशिदिन चितवै हरिकर चरना। इहि विधि चंद्रहास धनु धरना॥
वन वनमें नित करै अहेरा। इंद्रिय वधि गोविंदहि हेरा॥
इंद्रियजित जौ मानस होई। तीनि भुवन जीतै जन सोई॥
चंद्रहास अभ्यास बड़ कीन्हा। इहि विधि गोविंद पद चित दीन्हा
दीक्षा दै गुरु कीन्ह बड़ाई। चंद्रहास हरि सदा सहाई॥

दोहा-चरित नीक शशिहास कर, कहै सुनै चित लाय॥
पुरुषोत्तम नारद कहै, दुरति तुरत नशिजाय १६३

इति श्रीम० अश्वमेधप० चन्द्रहासोपाख्यानं नाम चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥५४॥

अर्जुन उवाच।

नारद धन्य धन्य चंद्रहासा। जेहि अस धनुषवेद अभ्यासा॥
हरि हरि रटत कबहुँ हम देखें। तबही जन्म सुफल करि लेखें॥
बलि पताल ध्रुव स्वर्ग बसाई। लंक बिभीषण तहँको जाई॥
तुम्हरे कह मन बहुत हुलासा। कबहूँ पग देखब शशिहासा॥
मोहि तारहु तुम कथा सुनावहु। तृषावंत मोहि अमृत प्यावहु॥
जबही तरुण भये चंद्रहासा। विषयातनु किमि कीन्ह प्रकासा॥

नारद उवाच।

षोडश वर्ष भये शिशु जबही। जाय दिग्विजय कीन्हेउ तबही॥
कहै तात सुनु सुंदर पूता। चहुँ दिशि दारुण नृपति बहूता॥
धृष्टबुद्धिके हम बैसाये। सकल ग्राम रखवारी आये॥
आनके गाम करहु तुम पीरा। तहँवा बसि है ये सब वीरा॥
तात वचन ले शीश चढ़ाई। अपने गामनि भक्ति चलाई॥

पंथरथी तहाँ रहै प्रसंगा । जहाँ नाहिं भक्ति करै तनु भंगा ॥
राम नाम बोलै सब कोई । जो हरि कहै न मारिय सोई ॥
सबही ग्राम भक्ति भगवाना । अपने देशहि कीन्ह पयाना ॥
घर उन्मत्त भये सब रहई । कबहूँ वे हरि हरि नाहिं कहई ॥
तबलग राय वृथा दुख पैये । जबलगि इनहिं न राम कहइये ॥
रथी पंच सँग संत बहूता । हरि हरि सुमिरि कीन्ह आकूता ॥
तमसत रिपु आगे सब आये । देखत चंद्रहास कहँ धाये ॥
जान्यो चक्र लीन्ह गोपाला । बिचलेउ सब जानेउ निज काला ॥
जैसे हरिकी कथा सुनंता । भाजहिं कलिके दोष तुरंता ॥
हरि हरि चहुँदिश रहे भरपूरी । भागे नृपति गये सब दूरी ॥
नारद कह सुनि पंथ विचारा । सबै नृपति जीते निरधारा ॥
पाइनि रथ अनेक मैमंता । मुक्ता शकटन कनक अनंता ॥
मानस देह मिलन सब आवै । जो हरि कहै वसन सो पावै ॥
हरिकर जनके वे वैसाये । आपु चन्दनावतिकहँ आये ॥
घर घर सबही आरति साजी । हरि हरि कहत शंखध्वनि बाजी ॥
मात पिताके टेकउ चरना । गति तुम्हारि मोहि तुम्हरिय शरना ॥
जे नर पिता भक्ति नाहिं होई । परहिं नरक दारिद्री सोई ॥
जस लक्ष्मी नारायण मानै । तैसेहि मात पिता कहँ जानै ॥
देखन नर नारी सब आवहिं । नयनविशाल सबहि मनभावहिं ॥
युवती यूथ लगे सब संगा । कमल वदन लोचन सारंगा ॥
वर्षत पुष्प वृष्टि सँग घेरहिं । जनु शशिहास कुचित नाहिं हेरहिं ॥
कहुँ काहू न कुदृष्टि निहारी । जस जननी तैसी परनारी ॥
विप्र सबै सब संत बुलाये । हरि हरि जपि अभिषेक कराये ॥
सुनि अर्जुन दशमी जब आवै । घर घर सबहि उछाह करावै ॥
चंदन चौक रत्नके घरहीं । कनकसाज सब घर घर करहीं ॥
कुमकुम लेपन करै बहूता । नगर शंखध्वनि होय अकूता ॥
जहँवा चंद्रहास जहँ आवै । लोचन ललित सबै मनभावै ॥

दशमी एकै बार अहारा । जो न करै सो शत्रु हमारा ॥
हरिवासर जो अन्न सँचारै । शत्रु जानिकै ताहि निकारै ॥
एकादशी दिवस जब आवै । उठत हि हरिकी भक्ति करावै ॥
दोहा–नारद कहि रहे पार्थसन, चहुँदिशि हरि हर होय ॥
पुरुषोत्तम शशिहास सम, उपमा वीर न कोय ॥ १६४ ॥
निर्मल अन्न विना सब रहई । हरिकी कथा छोट बड़ कहई ॥
धर्मबुद्धि पापहि सब डरहीं । छिन छिन विष्णुकथा अनुसरहीं ॥
रैन समस्त होइ जागरना । ते नर तीनि लोक आभरना ॥
जीवन जग बुदबुदकी नाईं । छिन एक माँझ विनाशि तन जाई ॥
अस्तमास सब बंधन दीन्हा । मास रक्त कर लेपन कीन्हा ॥
शतांच्छिद्र जाजर सर्वंगा । लोभ क्रोध वैरी रहै संगा ॥
निर्मल भलेहि होइ तोहि देहा । एकादशी व्रत रामसनेहा ॥
नगर निवासिनसों अस कहिया । सब कोउ व्रत एकादशि रहिया ॥
वेदध्वनि सब सुनहि पुराना । करत जागरण होइ विहाना ॥
देश देश उत्सव बड़ होई । हरि मंदिर उठवावें कोई ॥
सब कोउ कूप तलाव खनावा । गाम गाम वै दान दिवावा ॥
बाजे बाजत होय हुलासा । पथिकन परे कहेउ उपवासा ॥
देश देश जे लोग रहाई । सब सेवक चँदनावति जाई ॥
सबै धनी दुखिया नाहिं कोई । चारौ वर्ण अनंदित होई ॥
दर्शन देखत दुरित नशाई । चंद्रहास भलि पुरी वसाई ॥
विष्णुप्रीति हित दे नित दाना । नगरी अमरावती समाना ॥

कलिंद उवाच ।

तात कहेउ सुतसों कर जोरी । चंद्रहास विनती सुन मोरी ॥
हमरे आन अहै बड़ राजा । ताकहँ इह पठइय कछु साजा ॥
छह योजन इहि थलते अहई । राजा अरु मंत्री तहँ रहई ॥
कौंतल नृपति अहै बड भारी । उपरोहित गालव मनुहारी ॥
धृष्टबुद्धि मंत्री बड़ नाऊँ । ताकर जनमें सदा रहाऊँ ॥

वर्ष दिवस भीतर मैं जाऊँ। धन दै चरण परशि घर आऊँ ॥
अब सुत वर्ष बहुत इक भइया। उन कहुँ द्रव्य कछू नाहिं गइया ॥
पितुके वचन सुने सुत जबहीं। परम अनंद भयो सुत तबहीं ॥
मंत्री अरु गालव है राजा। रानी कुमरहिं दे सब साजा ॥
साजे कलभ शकट सब आना। कनक रतन अति तुरोपलाना ॥
कस्तूरी चंदनौ कपूरा। पाटंबर गज भरेउ अपूरा ॥
सेवक चंद्रहास बुलवावा। लिखा दीन्ह अरु धन पठवावा ॥
शुभ घरि साधि कीन्ह प्रस्थाना। पूजा करि सुमिरे भगवाना ॥
चरणोदक लै तिलक सँभाला। शीश धारि तुलसीकी माला ॥
जहँ मंत्री अरु अहै अवासा। द्वारे ठाढ़ भयो हरिदासा ॥
मत्रीसन तेहि शुद्धि कराई। सुनतहिं तब आगे बुलवाई ॥
धन दीन्हेउ टेकेउ पुनि चरना। हमहिं गुसाईं तुमरिय शरना ॥
सेवक देखि मंत्रिहि रिस लागी। जस मेलत घृत प्रज्वलित आगी ॥
धृष्टबुद्धि चकित हो रहिया। कहहु कलिंद मरे दहु कहिया ॥
सेवक तबहीं हरि गुहरावै। सोई मरि जोहि कलिंद न भावै ॥
चंद्रहास कलिंद कहँ पूता। तुम कहँ पठयो द्रव्य बहूता ॥

दोहा–तुमहि न ऐसी बूझियै, जस तुम बोलहु बोल ॥
पुरुषोत्तम जन चंद्रहँस, बड़ दिग्विजै अडोल १६५

मंत्री देखा कनक बहूता। लादे हस्ति रत्न संयूता ॥
कस्तूरी चंदन जु कपूरा। लौंग लाइची लायो पूरा ॥
जीय चकित मंत्री मतिमंदा। देखत जियमहँ भयउ अनंदा ॥
बाँटि बाँटि सबही धन लीन्हा। सेवकसन नीके चित कीन्हा ॥
पुनि भोजनकी बात जनाई। हरिवासरकहँ अन्न न खाई ॥
इह सुनि मंत्री बहुत रिसाना। भयेउ गर्व हम तबहीं जाना ॥
तब सेवक मंत्री समझावा। हमरे गर्व कबहुँ नहिं आवा ॥
कहा तुम्हारो जियमें धरि हैं। प्रातसमय भोजन हम करिहैं ॥

तब उठि मंत्री गये ज्यवनारा । सब निशि सेवक हरिहि पुकारा ॥
बीती रैनि भयउ भिनुसारा । सेवक उठि हरि हरि उच्चारा ।
कोरा अन सेवक तब लयऊ । अपने हाथन भोजन कियऊ ॥
इह सुनके मंत्री परजरिया । सेवक केरि विदा तब करिया ॥
मंत्री जियमें सोच उपाया । पुत्र कलिंद कहाँते आया ॥
अब मैं जाय सोध बहु करि हौं । जहँतक भयो कलिंदहि गाहि हौं ॥
जियहि आनमुख आन मधाना । पुत्र बुलाय कीन्ह मत ठाना ॥
तुम सुत राज काजमहँ रहऊ । हमरे वचन हृदयमें गहऊ ॥
विषया कन्या भई सयानी । वर कितहूँ हेरहु मन जानी ॥
मदनसिंह बोलेउ चित लाई । विजय करहु वर हेरहु जाई ॥
मंत्री तव उठि चलेउ तुरंता । चंद्रहास रक्षक भगवंता ॥
द्वै दिनमें चँदनावति आवा । चंद्रहास जहँ संत वसावा ॥
मंत्री लखि कलिंद दुख माना । सुखकोमल जिय बहुत डराना ॥
सहित पुत्र उठि टेकेउ चरना । हमहि गुसाईं तुम्हरिय शरना ॥
विधिवत सेवक करि वे सावा । कहौ कलिंद पुत्र कहँ पावा ॥
नगरके लोग भले करि बोला । पुरुषोत्तम हरिभक्ति अडोला ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं नाम
पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥

नारद उवाच ।

उदाधि कुबुद्धि मंत्रि अनुसारा । चंद्रहास वध हृदय विचारा ॥
मुनिके वचन झूठ मैं करऊँ । पुत्रहि मारि कलिंदहि धरऊँ ॥
शंभु कंठ जोहै आभरना । सोई दैये होइ जेहि मरना ॥
चंद्रहास जन कहा बुझाई । मिलहुव मदनसिंह कहँ जाई ॥
राजकाजकी वहै चलावै । जाहि देह सोई पै पावै ॥
चंद्रहास बहुतै सुख माना । कहा तुम्हारे हमहिं परवाना ॥

हरिजन ठाढ़े भये उठि आगे। मंत्री पत्र लिखन तब लागे ॥
स्वस्तिश्री शुभ मदन कुमारा। मोकहँ बड़ा भरोस तुम्हारा ॥
चंद्रहास उतलँग जब आवै। जहिवा जन देखन नाहिं पावै ॥
रूपशील गुण कछु जानि चीन्हु। इनको तुम जातै विष दीन्हु ॥
लिखिके पत्र मुष्टिका कीन्हीं। मुष्टिका चंद्रहास शिर लीन्हीं ॥
अंतहि इह बाँचै जो भाई। तेहि गोविंदकी लाख दुहाई ॥
चंद्रहास माथे करि लीन्हा। तात कालिंदहि अंकम दीन्हा ॥
मंत्रिहु कर टेके पुनि चरना। अहै कालिंद तुम्हारिय शरना ॥
नारद कहँइ सुनहु परसंगा। बाण चारि लै चलेउ तुरंगा ॥
मेधावति जननी है जहँवा। चंद्रहास पशु टेकिनि तहँवा ॥
मेधावति दधि अक्षत लीन्हा! चंद्रहास कहँ आशिष दीन्हा ॥
कुशल पंथ सुत होहु तुम्हारी। निशिदिन तुम्हरी हरि रखवारी ॥
मुखमहँ नारायणकी रटना। राखहु प्रभु तुम कहुँ निज शरना ॥
हृषीकेश सब अस्थलमाहा। माधव करहु उदरकी छाया ॥
नाभहि पद्मनाभकी सेवा। राखहु कुछ नरसिंह सुदेवा ॥
कमलनयन कहँ कटि सौंपाई। मधुसूदन कहँ जंघ रखाई ॥
यज्ञ भक्त कहँ सौंपेउ जाना। वाहन यज्ञ दमोदर बाना ॥
राखत चरण सहस जेहि शरना। सकल भाव प्रभु है दुख हरना ॥
राखि त्रिविक्रम सकल शरीरा। आशिष दीन्ह नयन भर नीरा ॥
सावधान मारग भय जाहू। हरिप्रदास मोहि बहुरि दिखाहू ॥
करि प्रदाक्षिणा पुत्र सिधाये। पुरके लोग मिलन सब आये ॥
कुमकुम चंदन लेपन करहीं। नारी कुसुम माल शिर धरहीं ॥
मारग माहिं मिले बगवाना। विपुल सुफल दाड़िम भल आना ॥
अगणित पुण्य चंपकी माला। पूजहिं भुज जो महा विशाला ॥
सुन्दर चंद्रहास भल सोहैं। मारग पशु पक्षी सब मोहैं ॥
हरि हरि करत पहूँच्यो तहवाँ। कौंतल वन शरक्रीड़ा जहवाँ ॥

दोहा-वन सरवर सुंदर सुघर, अति सुंदर शशिहास ॥
हरि चरित्र अति सुन्दर, कह पुरुषोत्तमदास ॥१६६॥

हंस हंसिनी करहिं विलासा । उत्तम कमल कुमुद चहुँ पासा ॥
ताल तमालहि अधिक सुहावा । मानहु सब वन कौतुक छावा ॥
द्रुम पल्लव आये सरमाहा । लै सुगंध कीन्हे अलि छाहा ॥
अमृत वेर अमृत सम आवा । मधुरस्वर कोकिला सुहावा ॥
नाना पाक्षि मधुर धुनि करहीं । बोलत मन कामिनिकर हरहीं ॥
चंपा केशरि नाग अशोगा । नाना भाँति कहै को योगा ॥
वनस्पती द्रुम सवहि वसाही । पवन सुगंध दूरिलों जाही ॥
भँवर गुंज नीके वन सोहा । मानुषको अमरादिक मोहा ॥
झरिझरि कुसुम धरणिमें परहीं । वनस्पती शिवपूजा करहीं ॥
नारद ऋषि अर्जुनसन कह्यो । सुनि इह कथा प्रफुलित भयो ॥
बाग देखि वहुतै सुख माना । कहेनि करिय पूजा अस्नाना ॥
चंद्रहास उतरेउ तहँ न्हाई । हरिपूजा कीन्हेसि मनलाई ॥
उत्पल पुष्प कुसुमकी माला । पूजा करि सुमिरे गोपाला ॥
लाये विविधि भोगकरि स्वादा । हरिहरि सुमिरि कीन्ह परसादा ॥
सेवक हरित दूबकै आनी । यह बर कहुँ मेलिनि मनुजानी ॥
शीतल छाँह लगेउ वड़ घामा । चंद्रहास निद्रा विश्रामा ॥
इह अंतर सुंदरी सुहाई । क्रीड़ा करन सरोदक आई ॥
नृपकौंतल कन्या सुकुमारी । विधि चंपक मालिनी सँभारी ॥
धृष्टबुद्धिकी कन्या एका । विषयासन जेहि कीन्हेसि टेका ॥
सखि सहस्त्र मिलि एकहि संगा । रहसि भरीं अब कामतरंगा ॥
चुनति पुष्प मन होति सुफूला । सबै पुष्प मधुकर तहँ भूला ॥
कुसुममाल सवहीके हाथा । वर्ष त्रयोदशकी सब साथा ॥
कवानिउ षोडश वर्षक वाला । पहरे कुसुम मदन शरजाला ॥
सुंदर कुच कंचुकी समारी । नवल नवोढ़ सबै सुकुमारी ॥
पहरे गजमुक्तनके हारा । गावति सुर वहु मंगलचारा ॥

निरतति सुंदरि नूपुर बाजै । ताल शब्द बन महा विराजै ॥
हँसी करहिं कवनहुँ भलि गावहिं । कवनौं भले तम्बूल खवावहिं ॥
कोउ मृगनयनि संग यंत्रधारी । गावहिं गीत रूप रतिहारी ॥
सरवर आय कराति आनंदा । देखत वदन मदन कर फंदा ॥
कोकिल कंठ लजावनहारी । रतिते रुचिर मुनिन मनहारी ॥
सिंह गयंदनि जीत निदादा । कहति अनंद महासंवादा ॥
कटिगति केहरि लीन बहोरी । लीन्हे मृगानि नयन अंजोरी ॥
मारहिं जाहि मदनके बाना । तहँ बिसरै सुधि होइ अयाना ॥
चंद्रवदनि मकरध्वज सयना । कुसुम उतारहि खंजन नयना ॥
निंबुआ फलसे अस्तन सोहा । मुनि गंधर्व सबै तिन मोहा ॥
कवनिहुँ सखी अग्र है धावै । कवनिहुँ सखी निकट चलि आवै ॥
कवनिहुँ गति देखाति भयभीता । मिलहि आय बोलहि अति हीता ॥
नाना पुष्प कीन्ह समतुला । माल गूँदि कंदली फल फूला ॥
मंगलराग सखिन मिलि ठाना । कन्या नव प्रसून तहँ आना ॥

दोहा-कुसुममाल सब पहिरहीं, नृपकन्यहि पहराव ॥
वनक्रीड़ा सुन्दरिनकी, कछु कछु वरणि सुनाव ॥ १६७ ॥

कोउ पुष्पकी माल बनावहि । चंपक मालिनि कहँ पहरावहि ॥
शयन करहि नृपकन्या जहवाँ । कवनहु यंत्र बजावहि तहवाँ ॥
कवनहुँ अगर धूप लै भरही । कुसुम लाय शिवपूजा करही ॥
पूजा करि मागहि निज नाथा । चंपक मालिनि विषया साथा ॥
पूजत वामनेत्र फरकाई । स्वामी तुरत मिले सखि आई ॥
नृप कन्यहि तब भयउ अनंदा । जिय जानेउ मिटि है दुख द्वंदा ॥
विषया सब सखियनसन कहिया । आवहु कुसुम बहुत अब चहिया ॥
कवनहु सखी चढ़ी चौडोला । गावति मधुर स्वरन पिक बोला ॥
सखी परस्पर क्रीड़ा करहीं । एकहि एक चतुर श्रम हरहीं ॥
पुष्पमाल शिरमंडल करहीं । मुक्ताहार टूट महि परहीं ॥
धावहिं सखी लूटि बहु करहीं । मधुर मधुर बोलत मन हरहीं ॥

कोउ मुकताहल बीनन लागी। कवनिहुँ खेलहिं कवनिहुँ भागी॥
कवनिहुँ लखहिं जाइ पुनि तहँवा। विषया नृप कन्या है जहँवा॥
कवनिहुँ पुष्पवृष्टि भल करहीं। कवनिहुँ गीत नाद अनुसरहीं॥
बहुरि बजावहिं बीन उपंगा। कोउ परवीन बजाव मृदंगा॥
करत कुलाहल सुनत न कोई। क्रीड़ा करति सरोदक सोई॥
नूपूर शब्द किंकिनीजाला। शरदपर्ण जहँ धरे मराला॥
क्रीड़ा करहि सरोदक पैसी। सब कामातुरि सुंदरि जैसी॥
तनु सुगंध जलमंजन कियऊ। जनु सर सबै सुधाजल पियऊ॥
लीला करहिं भयावन भेशा। टूटहिं अभरन विगलित केशा॥
कवनिहुँ डारि देहि जल गहना। कवनिहुँ पैरि आभरन लहना॥
कवनिहुँ बूड़ि गहै सखि चरना। कवनिहुँ उदित होहि जल तरना॥
कवनिहुँ पैरि चलै पुनि भागै। कवनिहुँ धाय कंठ पुनि लागै॥
जल क्रीड़ा करती इक साथा। मुक्ताहल चूरण करि हाथा॥
एकहि एक देहिं जलधारा। करहिं परस्पर महाविहारा॥
कवनिहुँ सखि इक संग विहाई। गई रही देखन फुलवाई॥
विषया तीर आय भइ ठाढ़ी। विह्वल वदन व्यथा तनु बाढ़ी॥
देखेउ वनमें महातुरंगा। मानहु सोवत सेज अनंगा॥
नृप लक्षण सुंदर सुकुमारा। कमलवदन उर ऊँच लिलारा॥

दोहा–देखि कुमर व्याकुल भई, लगे मदन हियबान॥
विषया ढिग ठाढ़ी रही, मर्म न काहू जान॥ १६८॥

इति श्रीम०अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं नाम
षट्पंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५६॥

नारद उवाच।

कन्या सब सरवर अस्नाना। चंपक मालिनि कीन्ह पयाना॥
वनमहँ कनक लता जनु सोही। विषया चलति न देखति मोही॥

नूपुर काढ़ि सखिनकहँ दीन्हा । कुँवरहि देखि नेह चित दीन्हा ॥
प्रथम प्रणाम कीन्ह तेहि जाई । मोहन तुरंग दूब तहँ खाई ॥
हंसिनि चलै हंसके पासा । तिमि विषया गइ जहँ चंद्रहासा ॥
सुंदर चंद्रबिंब जनु रेखा । कंचुकि अग्रपत्र जिनि देखा ॥
मुद्रा हेरि चकित ह्वै जाई । चीन्हि न परै तात को धाई ॥
बाँचत पत्र होइ आनंदा । उरझी मनो कामके फंदा ॥
स्वस्ति मदनसिंह वरवीरा । चंद्रहास है बड़ रणधीरा ॥
रूपशील जन गुण कछु हेरहु । विद्या विच चित्त जानि फेरहु ॥
इनसन भलहिं हेतु तुम कीनहु । जातहिं इनकहँ तुम विष दीनहु ॥
पत्र बाँचि विषयहि दुख लागा । कुँवरहि देखि भयउ अनुरागा ॥
सुनि अर्जुन भुज महाविशाला । इहि विधि कृष्ण कीन्ह प्रतिपाला ॥
बड़ मूरख है पिता हमारा । इह विष दीजै कवन विचारा ॥
शिव गौरी जो मैं अवराधी । पायउँ पुरुष बहुत तप साधी ॥
विषयाकहँ विधना बुधि दीन्हा । नख कनिष्ठ लै लेखनि कीन्हा ॥
दूब लिखा काजरकी रेखा । जहँ विष तहँ विषया करि लेखा ॥
लै वैसियै मुद्रिका करिकै । पुनि नीके कंचुकिमें धरिकै ॥
हंसगामिनी पुनि फिरि आई । चंद्रहास छाँड़ो नाहिं जाई ॥
चितवत चित्त अनत नाहिं जाई । जहाँ सखी तहँ विषया आई ॥
पूछै सखी विलम कहँ कीन्हा । बहु भइ वार कहाँ चित दीन्हा ॥
सोवत नर केहरि कहुँ देखा । जनि गोवहु कछु आनि विशेखा ॥
विषया सबै सखी समझावा । पिता हमार विवाह बनावा ॥
इतनी सुनत भयउ आनंदा । विकसीं सबै कुसुम जनु चंदा ॥
गाइ उठीं सब मंगलचारा । उत्सव काज सबन अनुसारा ॥
करति अनंद सखी सब आईं । एक एकसों पूछहिं धाई ॥
मंगलगान भई बहु भीरा । विषयहि मदन कीन्ह उर पीरा ॥
आपन आपन गईं अवासा । विषया जीव बहुत भा सासा ॥
यहि अंतर सुनि पंथ विचारा । जागे चंद्रहास सुकुमारा ॥

मुख प्रछालिकै चढ़ेउ तुरंगा । हरि हरि सुमिरेउ सेवक संगा ॥
चंद्रहास कौंतलपुर आवा । चन्द्रपुरी सब नगर सुहावा ॥
गालव प्रोहित जहाँ रहाई । संतत धर्मकथा सु कहाई ॥
आये धृष्टबुद्धिके द्वारा । रथते उतरेउ चन्द्र कुमारा ॥
कहेउ द्वारपालक सन बाता । कहौ मदनसन पठये ताता ॥
द्वारपाल तब कहेउ सँदेशा । आये चंद्रहास शिशु भेशा ॥
सुनतहि प्रीति महा उठि धाये । जहँवा चंद्रहास तहँ आये ॥
चौथे खंड कहा उन आई । कृपा करी तुम हरिजन राई ॥
पंचम सप्तम अष्टम द्वारा । जहाँ विवेक रहै प्रतिहारा ॥
कंचन लकुट रहै कर लीन्हे । स्वामी मदनसिंह चित दीन्हे ॥
सदा विवेक रहै उहि द्वारा । साधत लकुट करत परहारा ॥
दारुण मदनसिंह जहँ ठाढ़ा । कर जोरे तहँ आयउ गाढ़ा ॥
शिव प्रिय सिंहासनहि अडोला । दाहिन दिश पुराण द्विज बोला ॥
वेदशास्त्र तहँ होहिं बखाना । ताल मृदंग भक्ति भगवाना ॥
हरियश वर्णहिं कविजन जहँवा । न्याय वेदांत विचारहिं तहँवा ॥
बंदीजन गुण वरन बहूता । हरि हरि सबकहँ होइ अकूता ॥
वामें दिशि क्षत्रिय सब रहहीं । दाता शूर कृष्ण गुण कहहीं ॥
दिशि दिशिते आवै शार्दूला । शास्त्र विशारद अरिउर शूला ॥
मदनसिंहके ढोरहि चोरा । तहाँ विवेक कहै करजोरा ॥
मैं स्वामी केवल जन तोरा । विनती करत डरै जिय मोरा ॥
ब्रह्मादिक चितवैं नित जाहीं । निशिदिन भक्ति उनहिं जियमाहीं ॥
चंद्रहास द्वारे है ठाढ़ा । तब दरशनको अति चित बाढ़ा ॥
धृष्टबुद्धि तुम पास पठाये । हरिजन तुमहिं मिलन कहँ आये ॥
चंद्रहास कहँ दीन्ह बड़ाई । सभा मध्य बहुरौं गुहराई ॥
सुनतहिं वचन मनोहर काना । आये मदन जहाँ भगवाना ॥
सभा लोग सब लागे साथा । जहाँ चरण तहँ नायो माथा ॥
करि प्रणाम आलिंगन दीन्हा । पूँछा कुशल प्रेम बहु कीन्हा ॥

करगाहि सिंहासन बैठावा। पूजा करी भले तुम आवा॥
कोउ कलिंदकी कुशल बुझावैं। नगरलोग सब देखन धावैं॥
विप्र वेदधुनि करहिं बहूता। चार वर्ण आरति संयूता॥
मदनसिंह पूछन तब लीन्हा। कहुँ हरिजन काहे दुख दीन्हा॥
कहौ कुशल जहँ आये ताता। उहाँ हमार गयउ जनु ताता॥

चंद्रहास उवाच।

तुम्हरी कृपा कुशल अब अहई। संत संगते कल्मष दहई॥
संत प्रसाद भक्त हरि कीन्हा। तुमरे पिता पत्र कछु दीन्हा॥
अंतहि इह जो बाँचै भाई। ताकहँ हरिकी लाख दुहाई॥
वचन कहूँ पुनि कहो यकंता। सुनिये मदनसिंह तुम संता॥
पिता हमारे ब्याह बनावा। याते पत्र न अनत बचावा॥
विधना कारज सिद्धि कराई। बाँचेउ सभामध्य गुहराई॥
स्वस्ति मदनसिंह भल कीन्हेउ। चंद्रहासकहँ विषया दीन्हेउ॥
रूपशील गुणकहँ जनि देखहु। कहा हमार सत्य करि लेखहु॥
बाँचत पत्र होइ आनंदा। विहँसे सब जिमि पुनौ चंदा॥
आज वंश सब भयउ पुनीता। आजु मनहु तीनहुँ जग जीता॥
जस इच्छा हम जियमहँ कीन्हा। सो फुर आजु विधाता दीन्हा॥
सातहु खंड धवल गृह जहँवा। विषया काम मोहवश तहँवा॥
चंद्रहासकर मारग चहई। पार्वती पद छिन छिन गहई॥
इच्छा पूर्ण होइ मन मोरा। जननी करुणा करि मम ओरा॥
तुम्हरी कृपा कीन्ह व्रत जहिया। भादौं तीज होति है तहिया॥
तुमरी प्रीति कीन्ह जागरना। पुष्प धूप पूजेउँ तव चरना॥
पार्वती तव चरण मनाऊँ। मदनहु वनो चन्द्र नर पाऊँ॥
रति विषया मन्मथ शशिहासा। निरखत नयनन होत प्रकासा॥
मुनि जिमि करहिं रामकर ध्याना। विषया चंद्रहास तस जाना॥
सखिन लाज विषया वरनारी। नीचे मुख करि चितव कुमारी॥

दोहा-लाज न करै परै करे, भूमि अँगूठा चीर ॥
चंद्रहास बिन देखे, मदनबाण तनुपीर ॥ १६९ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं
नाम सप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

जन्मेजय उवाच ।

सुनि सुनि मदनसिंह कस कहा । कहेउ व्याह विषयाकर महा ॥
चंद्रावति जस भयउ विवाहा । विष्णुभक्त कर करेउ उछाहा ॥

नारद उवाच ।

जैमिनि ऋषि तब नृप समझावा । मदनसिंह पुनि विप्र बुलावा ॥
सुनत वचन नृप द्विज सब आवा । ज्योतिषशास्त्र विचार करावा ॥
विषया चंद्रहास उत्साहा । कहौ लग्न शुभ करिय विवाहा ॥
उदित शुक्र सब पंडित कहहीं । वर कन्यहि एकादश अहहीं ॥
बड़े भाग्य वैष्णव गृह आवा । आज भली शुभ लग्न सुधावा ॥
गोधूलिक शुभ कहै प्रभाता । सब निर्दोष और विख्याता ॥
सुनत वचन जिय मदन हुलासा । सखिन कही सुधि जाय अवासा ॥
बाजन बाजेउ मंगलचारा । होवन लागेउ व्याह पसारा ॥
विषया चंद्रहास अन्हवाये । मंडप दिव्यवसन लै छाये ॥
चतुर सुंदरी मंगल गाना । वर कन्या दोउ किय अस्नाना ॥
चंद्रहास कहँ वस्त्र बनावा । अस्तर बहु शुचिलग्न सिचावा ॥
जियमहँ सुमिरे हरिके चरना । आसन शुभ्र बैठि धनु धरना ॥
सविध शब्द विप्रन करवावा । मिष्ट अर्घ्य मधुपर्क करावा ॥
निज निज गोत्रक करहु विचारा । चंद्रहास अस कहै उचारा ॥
मात पिता मम श्रीभगवाना । दूजा और पिता नहिं जाना ॥
हरि हरि गोत्र सुहृद है मोरा । दूसरका नहिं रहा निहोरा ॥
चरण पखारि उतारिनि दाना । चंद्रहास अस कहेउ प्रमाना ॥

निशि दिन हरि हरि जपहुँ गोपाला । संत कलिंद कीन्ह प्रतिपाला ॥
विप्रन गोत्र करे तव लीन्हा । गाँठि जोरि संकलपो कीन्हा ॥
कमलाकंत प्रीति दै दाना । वेदहु होम हुताशन ठाना ॥
पंचविप्र वर्णन अनुसारी । तिल घृत आहुति अनल प्रजारी ॥
वेदी सप्त कीन्ह मन जानी । विषया वाम दिशा तब आनी ॥
हृदय पराशिकै ध्रुवहि दिखावा । चंद्रवदन जय मंगल गावा ॥
विप्र मंत्र पढ़ि आशिष दीन्हा । चंद्रहास माथे धरि लीन्हा ॥
हंसगामिनी पतिव्रत आवा । कुमकुम तिलक लिलाट बनावा ॥
पुत्र सहित फल दै मनुहारी । अर्घ्य देत लै गइ चित्रसारी ॥
अंतहु पर सब चारु करावा । छाँड़न चंद्रहास नहिं भावा ॥

दोहा-भो विवाह विषयाकर, पहरावनि तब दीन्ह ॥
हरि कबहूँ नहिं विसरऊ, द्विजन दाक्षिणा लीन्ह १७०

बैठे कुमर शरद जस चन्दा । मदनसिंह जिय भयो अनंदा ॥
महिषी धेनु वाजि गज आना । गजमुक्तन कर दीन्हेउ दाना ॥
रत्नपटंबर अगर बहूता । दाइज दीन्हेउ स्यंदन सूता ॥
तुम तो हरि मूरति सम तूला । शिर हमरे पंकजके फूला ॥
तुम्हरे पदकी पूजा करई । पादोदक लै निजशिर धरई ॥
चंद्रहास बहुतै धन दीन्हा । चरण धोय गालवके लीन्हा ॥
और विप्र जे वेदी आये । होत विदा सब घरहि सिधाये ॥
विप्र कुटुंब सज्जन युत आवा । सब काहू पकवान खवावा ॥
भोजन करि सोवन सब लागे । ब्रह्म प्रहर मदनु तव जागे ॥
मंडपमें बैठत है जाई । सोवत सुंदरि सब उठि गाई ॥
घर घर द्वार वेद धुनि वानी । वीथिन सींच चतुर श्रम जानी ॥
अति अनंद कछु वरनि न जाई । घर घर सबही ध्वजा बँधाई ॥
असनोथा वेरा जब भयऊ । चंद्रहास उठि हरि हरि कियऊ ॥
सुंदरि उठि आई पटसारा । गाँठि जोरि कीन्हेउ व्यवहारा ॥
कुमकुम चाँच कीन्ह अस्नाना । निर्मल पहराये परधाना ॥

माथे मुकुट मुनिन बैसावा । तिलक लिलाटहि अधिक सुहावा॥
वेदशास्त्र हरि भक्ति बखाना । विप्रन दीन्हेउ बहु विधि दाना ॥
बंदीजनकर कीन्ह समारा । गाइन नट नाटक अनुसारा ॥
बंशी ढोल मृदंग उपंगा । सब लखि चले विवाह न संगा ॥
सर मंदिरपिनाक यंत्रधारी । जड़िया जौहरी अरु चित्रकारी॥
बंश चढ़े जे नृत्य कराहीं । बाजीगर जे बाल धराहीं ॥
आव बहुत जे वृषल नचावहिं । मुखमें अनल जुवारि दिखावहिं ॥
अस बहुतक जे खेल भंडारा । आये बहुतक कियो पसारा ॥
मंगित सुत चहुँ दिशा सभूरा । वर्णहिं सुयश प्रथम जे शूरा ॥
राजन कर वर्णन अनुसरहीं । मालहिमाल युद्ध बहु धरहीं ॥
लोग बहुत आये ब्रह्मचारी । दीन्ह दान दारिद्रहि मारी ॥
अमृत वचन सबै कहि दीन्हे । सुहृद सबै संतोषित कीन्हे ॥
पुरकर लोग करत आनंदा । सबकर मेटि दीन्ह दुखफंदा ॥
हरिजन चरित्र सुनै चितलाई । तिनकर दुरति तुरत नशि जाई ॥
हरिहि रटहिं परहरि पाखंडा । ते न सहहिं पुनि यमकर दंडा ॥
विषया सन मंत्री मत कीन्हा । हरिउ उनहिं कहँ विषया दीन्हा ॥
परवश मनाषि भूमिपै सरवा । दिनभंगी तनु मिथ्या दरवा ॥
जाकर विप्र राम नित टारै । दूसर कवन ताहि पुनि मारै ॥

दोहा—चंद्रहास विषया सँग, यहि विधि भयउ विवाह ॥
पूँछव तेहि पुरुषोत्तम, भक्तिदान मनचाह ॥ १७१ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहंसोपाख्यानं
नाम अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

नारद उवाच ।

अब अर्जुन आगिल व्यवहारा । तोसन सबै कहौं विस्तारा ॥
इह अंतर मंत्री कस कीन्हा । बाँधि कलिंदहि बहु धन लीन्हा ॥

चँद्नावती राजको आहिया । काहूके कछु धन नहिं रहिया ॥
मंत्री सुस्त कुलिंदहि किन्हा । बाँधि सबन लक्ष्मी हरि कीन्हा ॥
बाँधि कालिंदहि बहुरि रिसाना । पुत्र देखि तू गर्व भुलाना ॥
मैं दारुण लेहौं तव माथा । तैं धनु पठवा सेवक हाथा ॥
धन हमरा तैं सब नशावा । वापी कूप तड़ाग खनावा ॥
काहि अब तोर पुत्र कहँ अहई । त्रास देय कालिंदसन कहई ॥
नगरनिवासिन टेकेउ चरना । हमैं गुसाई तुम्हरी शरना ॥
जहँ कालिंद भलि पुरी बसाई । जिय मंत्रिहि इह दै भुकताई ॥
छोरि कालिंदहि घर पठवावा । अपना करि पुनि नगर बसावा ॥
जीव हर्ष मंत्री बड़ माना । कौंतलपुर कहँ कीन्ह पयाना ॥
चढ़ि चंडोल छत्र शिर धारा । कनक रत्नसै तीनि कहारा ॥
लादि तुरँग धन बहुत गयंदा । लैकर मंत्रि चलो मतिमंदा ॥
धृष्टबुद्धि जिय दुख बड़ शाला । दीनबंधु वंदेउ गोपाला ॥
ये तो छाँड़त है जनु देशा । आन राज कर भा परवेशा ॥
करि विलाप काहि वचन हँकारा । क्रोध दुःख जिय करहि विचारा ॥
नगर तुरत बाजन अति सुनई । दुख चिंता मंत्री अति गुनई ॥

नारद उवाच ।

मंत्री जबहि नगर नियरावा । मागधसूत अलंकृत आवा ॥
बंदीजन सब बोलहिं बैना । मंत्री देखि जरैं तेहि नैना ॥
मारि दरिद्र मदन दिय दाना । मंत्री सुनत लगत जनु बाना ॥
चंद्रहास दुखहर प्रभु सोई । ब्रह्मासी आयुर्बल होई ॥
सुनि सुनि मंत्री चकृत होई । कैसे वचन कहत सब कोई ॥
बहु धन दीन्ह विप्र पहिराये । सो मंत्रीके आगे आये ॥
कहै विप्र तव पुण्यप्रकासा । विषया वर पायो चंद्रहासा ॥
मंत्री सुनत भयो जुलमाना । देखत विप्रै बहुत रिसाना ॥
भाजत विप्र कनक खासि परिया । छुटे केश धोती पुनि गिरिया ॥
बिनु जाने जे सब बतलाना । गायन मिले मर्म नहिं जाना ॥

गावत राग मिले यंत्रधारी। चरणासि चरण सुदंड प्रहारी॥
मंत्री आव जहाँ जनराजा। मारत आव सबै कोउ भाजा॥
पहुँचे तमसत सिंहदुवारा। कुमकुम चर्चित वदन निहारा॥
मंत्री कहै कहाँ इह कियऊ। मनहु अनिल घृत आहुति दियऊ॥
मृगनयनी कहि उत्तर दीन्हा। विषयाकर विवाह भल कीन्हा॥
इह वचन सुनि बहुत रिसाना। उर लागेउ जनु दारुण बाना॥
पुनि पहुँचो जा सप्तम द्वारा। जहाँ विवेक रहै रखवारा॥
साधत लकुट रहे कर लीन्हे। नहिं बोलै क्रोधित मन कीन्हे॥
मंदर बैठत मंगल सुनेऊ। वेदी देखि शीश तब धुनेऊ॥
चंद्रहास शिर मुकुट विराजा। गाँठि जोरि विषयासन साजा॥
क्रोधित लोचन सबही चीन्हा। जियमें कहै पुत्र कहा कीन्हा॥
दोहा-चंद्रहास विषया सँग, वचन कहत मुख हेरि॥
मृगसुत देखै बाघ जिमि, कालरूप मुख फेरि॥ १७२॥
तेहि क्षण मदनसिंह तहँ आवा। डरडरात चरणन शिर नावा॥
मंत्री कहै पुत्र कहा कीन्हा। सुत मंत्रीकहँ उत्तर दीन्हा॥
जो तुम पत्र लिखा सो कीन्हा। चंद्रहासको विषया दीन्हा॥
महिषी गाय धेनु बहु दीन्हा। याचक बहु संतोषित कीन्हा॥
तहँ सबकहँ बहु दान दिवावा। भिक्षुक देश देशकर आवा॥
काहे कहँ दुख मानहु ताता। जो तुम लिखेउ कीन्ह सो बाता॥
सुनतहि मारेउ कर तनु माथा। पुनि मारसि धरनीसन हाथा॥
कहेउ जाउ वन भिक्षा शासा। हरि जीरन करि सबकी आसा॥
सुनत बचन आनंदित भयऊ। पिता बचन रघुपति वन गयऊ॥
सुत कलिंद हरिजन चँद्रहासा। तुम्हरे बचन विवाह प्रकासा॥
इह अपराध कीन्ह मैं ताता। मेटै को जो लिखा विधाता॥
पिता कहै मुख लखौं न तोरा। आनहु पत्र लिखा जो मोरा॥
मदन आनिकर पत्र दिखावा। बाँचत मंत्री शीश डुलावा॥
अस अजगुति कहुँ भई न काऊँ। तैं सुत कीन्ह कहा बलि जाऊँ॥

हम तुम नहिं विवाह इह कियऊ। जो विधि लिखा सु निजकरि दयऊ।
सबसन कहा हेतु जिय धरहू। कुलाचार नीकी विधि करहू॥
चौथे दिवस व्याहते होई। वनमहँ देवी परशै सोई॥

दोहा-हृदय आन मुख आन कछु, मंत्री कीन्ह विचार॥
दास उबारैं राम जेहि, तेहि को मारनहार॥१७३॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं
नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः॥ ५९॥

नारद उवाच।

सुनि राजा जो मंत्र विचारा। कहासि पुत्र नहिं वश्य हमारा॥
चंद्रहास होइहैं जब राजा। कुल हमार क्षय करहि अकाजा॥
विषया अब विधवा किन होई। अवहूँ इह मारव जो कोई॥
मंत्री तब चांडाल बुलावा। काँपि गुप्त मंदिर महँ आवा॥
जाहि दीन्ह विषया हम व्याहा। तेहि मारहु लेइहि वनमाहा॥
मंत्री जब बहुतहि समझाये। तमशत देवीके मठ आये॥
चंद्रहास सन कहेउ बुलाई। कुलदेवी परशहु तुम जाई॥
कुमकुम चंदन लेहु बाहूता। वंदउ तुम संध्या संयूता॥
हमरे कुल विवाह जो होई। परशे विनु सुख लहे न सोई॥
मंत्री कथा कही जय जानी। चंद्रहास शिर ऊपर मानी॥
वरकन्याहि कीन्हेउ शृंगारा। परशे कर कीन्हेउ अनुसारा॥
इह अंतर को तहँ है दाता। गालवऋषिसन पूछी बाता॥
तन धन पुत्र राज सब माया। इह तो सब बादलकी छाया॥
दरश अरिष्ट कहौ समझाई। मैं वन योग करौं मनलाई॥

गालव उवाच।

गालव कहँ ज्ञान मन दीन्हा। दत्तात्रेय अलंकृत कीन्हा॥
देवपंथ ध्रुव शुक्र न देखे। रोम छोह तै धरणि न पेखे॥

चित्रवत ध्रुवहि प्रकाश न होई । एक वर्ष जीवै नर सोई ॥
विना किरिणि रवि जौन निहारै । मास एकादशमाँझ सिधारै ॥
कृष ते थूल थूल कृश होई । मास आठ नर जीवै सोई ॥
प्रकृती फिराहि होय लघु वरना । ताकर वेगि होय पुनि मरना ॥
बिनु वादर दामिनि दमकाई । दक्षिण दिशि घन ऊये जाई ॥
सो मानुष जीवै दश मासा । अलंकार दत्तात्रय भासा ॥
तेल औ घृत दर्पण परछाहीं । देखै धुधरा जीवै नाहीं ॥
जे नासिका वास नहिं जानै । जिह्वा कछू स्वाद ना आनै ॥
जे नर केउ करै अस्नाना । हृदय ललाटहि तुरत सुखाना ॥
पियत नीर जो कंठ सुखाई । दिन दश माहिं जियत नहिं जाई॥
ये तो काल परीक्षा साजा । स्वप्न अध्याय कहौं सुन राजा ॥
वनचर रीछ दक्षिण दिशि जावै । ताकर काल निकट गुहरावै ॥
लोह करिया अरु अंवर धारी । गावत हँसति जाय वरनारी ॥
दक्षिण दिश अस देखै कोई । अल्प मास जीवै नर सोई ॥
नग्न पुरुष स्वप्ने जो अहई । जो देखहि सो तुरतहि नशई ॥
देह शीश बिनु देखै अपने । पुनि चह लै जो वंचै सपने ॥
दोहा-केशन छावा मंदिर, देखि अपन शिर झार ।
गालव कहै नृपति सुनि, दिन दशमाँझ सिधार ॥ १७४ ॥
विकट कराल पुरुष है करिया । मरेउ जानि परकट पुनि मरिया ॥
अपने नेत्र आनिकै लागे । बड़ मूरख सोवत नहिं जागे ॥
सपने व्याह काज जेवनारा । होइ मरन कहा करिय विचारा ॥
स्वप्नाध्याय कहेउ कछु वीरा । सुनहु अलक्षण कहौं शरीरा ॥
पूजा कृष्ण नाम नहिं भावै । मात पिता कहँ बहुत सतावै ॥
दुहितापति भगिनीपति होई । तासन इती करै जो कोई ॥
गुरुतल्पै नर संगम चहई । बड़ो अलक्षण गालव कहई ॥
वेद पुराण सुनत नहिं भावै । देखत पाहन तमसत आवै ॥
दृष्टि विरोध करै विनु काजा । ये सब नृपति अलक्षण साजा ॥

सुनि राजा भाषौं अन ज्ञाना। हित अनहित एकै करि जाना ॥
जे पुनि छाँड़ै इंद्रविकारा। क्रोध लोभते रहै नियारा ॥
मन लावै गोविंदके चरना। निशिदिन रहै रामकी शरना ॥
सब परिहरि रामै चित धरई। जागै सदा कबहुँ नहिं मरई ॥
जैसे जल जलमाहिं समाई। तैसे मिलै गोविंदहि जाई ॥

नारद उवाच।

गालव योग ध्यान समझावा। कौंतलको वनवासहि भावा ॥
छाँड़ेउ राज्य काज परसंगा। जैसे कंचुकि तजै भुजंगा ॥
राजा कहँ गालव समझाई। एहिकर जतन करो तुम भाई ॥
घर देखउ कन्या जो व्याही। गालव कहै त्रिलोकहु माही ॥
चंद्रहासकी सुनी बड़ाई। राजा पठयो मदन बुलाई ॥
तुरतहि बेगि जानि नियराई। मंत्री पुत्र आय शिर नाई ॥
कहनि मदनसन भुवन सिधावहु। हरिजन चंद्रहास लै आवहु ॥
वंश विहीन तपोवन लयऊ। राज्य सौंपि कन्या यह दयऊ ॥
सुनत मदन जिय करत हुलासा। आये तहँ जहँ हरिजन दासा ॥
संध्या वंदन हरि हरि कहई। मदन जोरि कर पग तब गहई ॥
कुमकुम चंदन बहु तहँ धरई। विविध सुगंध धूप बहु करई ॥
माथे मुकुट कुसुमतनुहारा। भुजा दीर्घ अरु हरि आधारा ॥
मारग सर देखउ पुनि तहँवा। पूछनि कुशल चलहु उठि जहँवा ॥
हरिहरि सुमिरन कीन्ह प्रणामा। देखत सबहि मनो अभिरामा ॥
नृपति कहेउ गालवऋषि पाही। चंपकमालिनि दीन्ह विवाही ॥
विप्र सबै आनंदित कीन्हा। सकल राज्य नृप दाइज दीन्हा ॥
करि अभिषेक सिंहासन बैसा। चंद्रबिंब सम सुंदर जैसा ॥
बाजन बाजेउ मंगल घोषा। वनवासी भा नृप चलि चोषा ॥
परिहरि राज्य पहिरि कोपीना। ऊर्ध्वभुजा निकसेउ जनु दीना ॥
छाँड़ेउ राजकाज परसंगा। वन गवनेउ जहँ मृगा विहंगा ॥
राजापद निर्वाण विचारा। तृणवत लेखेउ सब संसारा ॥

--

दुर्लभ है मानुष अरु देवा। काटिनि फाँस कीन्ह हरिसेवा॥
बंधे अहैं मोह अज्ञाना। निकसे नृपति सुमिरि भगवाना॥
नृपति कहा अस सुख तजि भाई। जग महँ राजा लीन्ह बड़ाई॥
धन्य धन्य नर ते संसारा। माया तजि जे हरिहि पुकारा॥
दोहा-कौंतल राज्य मनोहर, छाँड़ि रहे वनवास॥
हरिजन तहाँ मनोहर, पुरुषोत्तम शशिहास॥१७५॥

नारद उवाच।

सुनहु पंथ हरि चरित न जाना। इहि विधि इच्छा करि भगवाना॥
इह अंतर तहँ मदनकुमारा। देखेउ युद्ध करत मंजारा॥
चौंकेउ हाथ भूमि खसि परिया। आवा रुधिर जीव अति डरिया॥
उल्लू आय शीशपर बोला। दुखयुत वचन मदन तब बोला॥
चिंता जीव कहनि अस बाता। चंद्रहास सुख राखि विधाता॥
मैं पठवा हरिजनहि अकेला। तासन कोउ करै जनि पेला॥
दुख मानत देवी मठ आये। मारु मारु करि अंत्यज धाये॥
मदन कहा पूजा करवावहु। मैं नाहिं दैत्य होव जो धावहु॥
रक्तबीज नाहिं शुंभ निशुम्भा। जाकर प्रथम विदारेउ खंभा॥
हरिहू साखि देहु बलि मोही। चंद्रहास नित पूजत सोही॥
चंदन चर्चि कुसुम बलि कीन्हा। मंत्री कहा घातकन कीन्हा॥
देखि घातकन सोच विचारा। मंत्रीसुत इह मदन कुमारा॥
राजा बंधु अबंधु जु होई। श्रेष्ठ जानि मारिय सुत सोई॥
लै हथियार आय समुहाऊ। एकहि बार कीन्ह सब घाऊ॥
लागत वार भयो पुनि मरना। माधव हरि हरि मुख उच्चरना॥
धृष्टबुद्धि आनहि दुख दीन्हा। तुरतहि पापनि आपन कीन्हा॥
परकर बुरा करै जो कोई। निश्चय सो ताहिकर होई।
दोहा-जाकर बुरा करै जो, ताकर नीक न होय॥
पुरुषोत्तम हरिकर चरित, जान न पावै कोय॥१७६॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं नाम षष्टितमोऽध्यायः ६०

नारद उवाच ।

चंपकमालिनि अरु चंद्रहासा । गज चढ़ि आये मंत्री पासा ॥
बहुविधि वाजन बहुत बजावा । तबलग लोग अगमने धावा ॥
मंत्रीसन अस जाय कहाहीं । चंद्रहास नृप कन्या व्याही ॥
सुनतै मंत्री मारा चहई । काटौ रसना जो अस कहई ॥
कौंतल राजा बड़ा हमारा । तेहि तजि राज्य करै को पारा ॥
निकसि वचन मुखहूते पावा । तबलागि चंद्रहास तहँ आवा ॥
देखत शूल भयउ उर महा । नयनन नीर कहेउ सुत कहा ॥
गजहूते उतरे हरि रसना । धृष्टबुद्धि कर परशेउ चरना ॥
अपने जियमहँ करत विचारा । इन घातकन मदन जनु मारा ॥
चंद्रहास शिर मुकुट विराजा । तुम्हरे पुण्य भयो अस साजा ॥
देवी मठ मोहिं पठयो जबही । मारग मिलउ मदन मोहि तबही ॥
आपन परसन गे लै साजा । मोहि पठयो जहँ कौंतल राजा ॥
दै कन्या औ राजपसारा । आपुन कौंतल बनहि पधारा ॥
सुनत वचन भय विगलित केशा । ऊर्ध्व श्वास अति दुखित नरेशा ॥
परकर बुरा जु चितमें धरई । निश्चय हरि ताहीकर करई ॥
सबहींकर करिये उपकारा । देखेउ मंत्रीकेर विचारा ॥
धृष्टबुद्धि जस बौरा धावा । जहँ देवस्थल तहँ चलि आवा ॥
तहाँ उठेउ कंकाल ठिठाई । जियतहि हमाहिं मिलेउ तुम आई ॥
ब्रह्मघात कीन्हेउ धनहारी । कै विश्वास घातकिय मारी ॥
कै तुम परमंदिरके पारा । कहनि आजु भा संग हमारा ॥
नाम नृसिंह सुनत अघभंगा । हम तुम हैं सब एकै संगा ॥
हम देखब अब दरश तुम्हारा । हरिजन पीड़हु तुम बटमारा ॥
शोकभरा मंत्री गा तहँवा । मठमहँ मदन परे हैं जहँवा ॥
करहुव देवीकर मठभंगा । देखेउ जाय पुत्रकर अंगा ॥
दोउ हाथ करि लोथि उठाई । रोवहिं मंत्री अंकम लाई ॥
उठहु पुत्र भेटहु शशिहंसा । विषया व्याह करहु परशंसा ॥

मैं रिसियानो मंदिर माहीं। ताते सुत मोहि बोलत नाहीं॥
जिमि मैं हरिकर दास सतावा। ताकर फल यह तुरतहि पावा॥
हरिजनद्रोही सुख नहिं पावै। नारद कहि अस निगम सुनावै॥
रतनखंभ दै मारेउ माथा। काहे पुत्र तजो मम साथा॥
रोवत रोवत भयो बिहाना। तपस्वी देखिनि आय मशाना॥
छाँड़ेसि पूजा बिलखत भयऊ। जहँ रह चंद्रहास तहँ गयऊ॥
तपासिय चंद्रहाससन कहिया। मंत्रि तुम्हार मदन जो रहिया॥
दोहा–जहँ देवी मंडप तहँ, मारे परे कुमार॥
धृष्टबुद्धि जो मंत्री, तेउ परे विकरार॥ १७७॥
सुनतै चंद्रहास दुख माना। देवी मंडप आय तुलाना॥
देखेउ मदन परे रणमाहीं। धृष्टबुद्धिसुत सोवत ताहीं॥
रामभक्ति जिय सोच विचारा। हमरा मदन कीन्ह उपकारा॥
हमरे युक्त आय इह बरिया। इनहि आपु लागि हमहूँ मरिया॥
चंद्रहास तँह कुंड खनावा। तिल घृत समिध तुरत मँगवावा॥
हुतियै काटि आपनी देहा। चंद्रहास हित मदन सनेहा॥
थूल मानपै रहा कुमारा। कैर अंबिका लागि विचारा॥
मैं साक्षी नहिं मारेउ काहू। जो उहि वधै देहु बलि ताहू॥
जहाँ जीव वरते तहँ सीवा। हत्या चढ़ै वधै जो जीवा॥
देवी वेगि खड्ग कर धरयो। मंत्री पाप मदनपर परयो॥
हरिजन कहँ कुदृष्टि इन करिया। परेउ मदन महि बलि नहिं परिया॥
अब प्रसन्न मैं भई कुमारा। माँगहु जो मनमाहिं विचारा॥
सात्विक भक्ति अचल मैं पाऊँ। जन्मजन्म हरिके गुण गाऊँ॥
सात्विक भक्ति करै जो कोई। रहै न पाप कहै सब सोई॥
तुम्हरे होत पुत्र रणवीरा। हरि संतुष्ट करहु रणधीरा॥
बालचरित चंद्रहास तुम्हारा। होइहै कलि संतन आधारा॥
नर नारी जे सुनहिं पुराना। पढ़हिं सुनहिं जे करहिं बखाना॥
सुमिरन राम करहिं जियमाहीं। उपजाहे भक्ति करहिं हरि छाँहा॥

जन्मत पावै भोग विलासा । मूये हो वैकुंठ निवासा ॥
हरि आराधत मदन जिआवा । देवीमंडप मंत्र जगावा ॥
शंख चक्र गद पंकज धरिया । देवन तहाँ उपस्थित करिया ॥
तहाँ बैठि अस्तुति जिय धारी । रूप वैष्णव हँसि सम्हारी ॥
अंकम मदनसिंहकहँ दीन्हा । चंद्रहास हरि सुमिरण कीन्हा ॥
धृष्टबुद्धि मिले तहँ आई । चंद्रहास तब करत बड़ाई ॥
कौन जियउ काकर भा मरना । चरित करैं प्रभु पंकज चरना ॥
ताकर जन्म सुफल संसारा । धन्य जीव जो पर उपकारा ॥
आनँद भा बाजन बहु बाजा । चंद्रहास हरि जन बड़ राजा ॥
मित्र मदन मंत्री बड़ कीन्हा । इहिविधि राम राज्य तेहि दीन्हा ॥
देश देश हरि भक्ति चलावै । कबहुँ अनीति होन नहिं पावै ॥

अर्जुन उवाच ।

सावधान ह्वै सुन रणधीरा । मंत्रिय कीन्ह कलिंदहि पीरा ॥
तबै कलिंद सोच जिय करिया । पुत्रौ मारि मोहि पुनि धरिया ॥
जियमें हरि जो बंदी छोरा । पापी तैं राखेउ सुत मोरा ॥
मंत्री नृपकर सब धनु लीन्हा । जो उबरा सो विप्रन दीन्हा ॥
हरिकर भक्त जु दीन तुम्हारा । निशिदिन हरि हरि कीन विचारा ॥
राखहु पुत्रहि हरि दुखहरना । तुम्हरिय चंद्रहासको शरना ॥
जन कलिंद आने दुख गोवै । विह्वल चंद्रहास करि रोवै ॥
धृष्टबुद्धि जो बंधि छुटाई । पत्नी सहित मरव को जाई ॥
रोपिन चिता अनल पर जरही । जरन कलिंद अनल अनुसरही ॥
चंद्रहास कर बंधन कीन्हा । तब तो दंड हमहुँसन लीन्हा ॥
कौंतलपुर लोगन गुहरावा । अनल जरै जहँ मंत्री आवा ॥
कहु कलिंद अब काहे जरहू । देवै धन तुम धीरज धरहू ॥
पुनि सब तोहि सौंपिहौं देशा । काहे कीज तु अनल प्रवेशा ॥
जीवत है सुनि पुत्र तुम्हारा । हरिकर भक्त वधै को पारा ॥

करि संतोष मंत्रि गृह आवा । इह चरित्र मैं सबै सुनावा ॥
चंद्रहास राजा बड़ भयऊ । सुनिकै जिय कलिंद सुख भयऊ ॥
विप्रनकहँ कीन्हेउ वहु दाना । षट दरशनकर करि सन्माना ॥
चँदनावती पुरी भइ जैसी । चंद्रहास बसवाई तैसी ॥
दोहा–सहित कुटुंब कलिंद तब, कौंतलपुर कहँ आव ॥
तहाँ चँद्रहंस पुरंदर, पुरुषोत्तम यश गाव ॥ १७८ ॥
विषया मदन कर बहुत दुलारा । मंत्री कीन्ह बहुत उपकारा ॥
मंत्री मोसन पत्र पठावा । तब इह राज बहुत विधि पावा ॥
महापुरुष अवगुण नहिं मानहि । जे उपकार होहिं जिय जानहि ॥
मंत्री गृहमें रहे लजाना । चंद्रहास नित करहि बखाना ॥
मदन मित्र मंत्री बड़ करिया । आपुन हरि पूजी जिय धरिया ॥
नारद कहा पंथ दुख भाजा । वर्ष तीनिसै तैं है राजा ॥
विषयाके सुत भा रणधीरा । नाम धरेउ मकरध्वज वीरा ॥
चंपक मालिनि सुत धनुधारा । तहँ वन गा पद्माक्षि कुमारा ॥
बालकते रटि सो हरिनामा । हेत बढ़ो इनि शालिग्रामा ॥
भवसागर तरिबेके कारन । शालग्राम पतित निस्तारन ॥
चक्रवर्ती पूजियै संगा । जन्म कोटिके कल्मष भंगा ॥
रामनाम रसना उच्चरहीं । ते नर भवसागरसे तरहीं ॥
रूप भाउ देवन कर देवा । शालग्राम यतीकी सेवा ॥
जो जगसिंधु तरा तुम चहहू । पूजि शिला हरिको तुम कहहू ॥
जे हरि भक्ति होहि नर केहू । अति हित शालग्राम सनेहू ॥
ताके दरश अधम सब तरहीं । कोटिन धर्म नित्य ते करहीं ॥
नीरसार सागरकर संगा । कुरुक्षेत्र सब तीरथ गंगा ॥
शालग्राम उदक जो लेई । दशगुण फल पावै नर तेई ॥
जन्मकोटि लगि पाप जो करई । पूजत शिला तुरत निस्तरई ॥
शालग्राम जाहि जिय भावै । चंदन कुमकुम नित्य चढ़ावै ॥
मुक्ति होइ भवसागर तरई । कबहूँ बहुरि न देही धरई ॥

शिला पूजि तुलसी जो पावै । वनमाला पुनि शिरहि चढ़ावै ॥
ब्रह्मा कहै सत्य करि जानो । तेहि जनको हरि मूरति मानो ॥
भोजन शालग्राम चढ़ावै । पाछेको प्रसाद पुनि पावै ॥
जन्म जन्मकर पातक दहई । ब्रह्मलोक बासा पुनि लहई ॥
शालग्राम दरशि करै कोई । पूजा धूप धरै नर सोई ॥
तेहि जनु दान कोटि विधि दीन्हा । देव पित्र आनंदित कीन्हा ॥
शिला निकट साधन जो करई । तेई गयापिंड नित करई ॥
विसतारि शिलाभक्ति नित करई । पुस्तक बाँचत हरि चित धरई ॥
आपु तरै शाखा पुनि रई । पापिनकर पातक बहुरई ॥
जेहि मंदिर रहँ शालग्रामा । अरु तहँ होइ राम गुण ग्रामा ॥
देव सहित तीरथ सब ताहाँ । नित हरि कल्पवृक्ष है जाहाँ ॥
शिला पूजि आरति जे करहीं । देहि नावति पृथ्वी जनु धरहीं ॥
अंतकाल जो मानुष होई । तेहि क्षण लेहि शिलोदक कोई ॥
पापीहूकर पाप पराई । तरि भव सिंधु परमगति पाई ॥
नारायण तजि हित नहिं आना । तीरथ नहिं हरिवासर माना ॥
देखेउ सब तीरथ जगमाहीं । चरणोदक अस तीरथ नाहीं ॥
तुलसीके पल्लव है जहँवा । मंदिरमें केशव हैं तहँवा ॥
तही पत्र हरिपूजा करई । होय पवित्र गोत्र निस्तरई ॥
शालग्राम अनंतहि पूजा । ताहि समान और नहिं दूजा ॥

नारद उवाच ।

बहुत पुराण सुनै जो पारै । महिमा शालग्राम विचारै ॥
पूजै कथै सुनै मनलाई । संतत सो वैकुंठ वसाई ॥
आदि अंत नारद सब कहिया । सुनतै सब विस्मयकै रहिया ॥
जो नर सकल भुवन फिरि आवै । संत संग विनु दुख न नशावै ॥
यह सुनि अर्जुन मुनि पगधरिया । चढ़ि रथ कौंतलपुर अनुसरिया ॥
जैमिनि नृपसन सुनेउ पुराना । इह तो सब इतिहास बखाना ॥
जो हरिकथा सुनै अरु कहई । मानुष जन्म भाग्यवश लहई ॥

मरतै सो नर चढ़ै विमाना। बास रहै जहँ श्रीभगवाना॥
निष्फल जन्म जगत नर सोई। जेहि तनु धरि हरिभक्ति न होई॥

दोहा–पुरुषोत्तम जन वर्णही, त्र्यंबकपुरी प्रसाद॥
और कथा नहिं भावई, रामनामके स्वाद॥ १७९॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चन्द्रहासोपाख्यानं नाम
एकषष्टितमोऽध्यायः॥ ६१॥

चंद्रहासकर चरित सुहावा। यह तो ऋषिय वहुत मोहि भावा॥
चंद्रहास जो गहै तुरंगा। बहुरि कहौ मुनिवर परसंगा॥

जैमिनिरुवाच।

कौंतलपुरकी सुनि नृप बाता। अमरउ तुरँग होत परभाता॥
मकरध्वज पद्माक्ष सुरेखा। विस्मय भयो तुरंगम देखा॥
सबही जाय तुरंगम धरचो। देखत अति विस्मय जिय करचो॥
मूर्च्छित चकित सभाकर लोगा। कहब तुरंगम राजहि योगा॥
बाँचत पत्रहि भयो हुलासा। लै गमने जहँ रह शशिहासा॥
बाँचत जिय अनुमान विचारा। जहँ अर्जुन तहँ विश्वअधारा॥
बालकहूते जाकहँ ध्यावा। सो अर्जुनके गृहनै आवा॥
वर्ष दिवस इनि कान्ह कलेशा। भये युद्ध आये इह देशा॥
चंद्रहास सब सुतनहु बोला। सुनत पुत्र रण महा अडोला॥
तजि संग्राम मिलहु तुम जाई। संग फिरहु पंथहि बैठाई॥
अर्द्ध मास वर्षमहँ रहिया। यह पितुवचन पुत्रसन कहिया॥
धर्मरायसन करौ सनेहू। पद्मा तुम मकरध्वज लेहू॥
अर्जुनसों संग्राम न करिये। हरिपद रेणु शीश लै धरिये॥

जैमिनिरुवाच।

चंद्रहास मकरध्वज गाढ़ा। सेना सहित निकसि भा ठाढ़ा॥
इह अंतर अर्जुन भगवाना। वेऊ कटक सहित नियराना॥

पंथहि जन्म सफल करि लेखा । वैष्णवकेर शिरोमणि देखा ॥
श्रीमत कृष्णचरण अवधारा । शिर तुलसी हरिहरि उच्चारा ॥
वयो वृद्ध तपवृद्ध पवित्रा । ज्ञानवृद्ध कर सुनहु चरित्रा ॥
देखत पंथहि भयो अनंदा । सबहि कटककर गा दुखफंदा ॥
इह अंतर देखे भुजचारी । मूरति मधुर मनोभव हारी ॥
पंकज चरण देखि चंद्रहासा । रथते उतरेउ करत हुलासा ॥
दंड प्रणाम भली विधि कीन्हा । कृष्ण कृपा करि अंकम दीन्हा ॥
कृष्ण पंथसन कहा बुझाई । तुम चंद्रहंस मिलहु किनधाई ॥
पंथ कहा हँसिहै सब कोई । क्षत्रियकर इह धर्म न होई ॥
मोसन स्वामि कहौ तुम बूझी । तव तुम सैन विषम किय जूझी ॥
अब तो जग अपयश मैं लेऊँ । तो इह अंकमालिका देऊँ ॥
कहहिं कृष्ण अर्जुन वरवीरा । तोहि न अस बूझिय रणधीरा ॥
सुनहुव मोर भक्त जो होई । करिय प्रणाम भेंटिये सोई ॥
विधिवत कपिला गो सुत दीजै । मिलत वैष्णवै सो फल लीजै ॥
हरिजनसों जो प्रीति बढ़ावै । ते जानहु सब दान दिवावै ॥
मिलहुव चंद्रहासको ऐसे । पूजहु अर्जुन हम कहँ जैसे ॥
दोनों हरि जन दोनों वीरा । दोनों जानहु एक शरीरा ॥
इह अंतर हरिजन चंद्रहासा । दोनों मिलि अति परम हुलासा ॥
दुवौ मिले दोनों गहि चरना । हरि तजि दोनों आन न शरना ॥
अर्जुन दास सुनहु हरिसेवा । पुत्र सहित करिबै हम सेवा ॥
पहले विषया नंदन धावा । अर्जुन कृष्ण जहाँ तहँ आवा ॥
पिता हमार तुम्हारी शरना । अस कहि गहे कृष्णके चरना ॥
अर्जुनकहँ पुनि भेंटेउ जाई । पंथौ मिले अंकमें लाई ॥
प्रदुमनसाहित अहैं जे योधा । गहेसि चरण तव छाँड़ि विरोधा ॥
हरिकी अस्तुति बहु विधि कीन्हीं । नवौ निद्धि न्यवछावरि दीन्हीं ॥
उत्सवमें आनंद भा सारा । करि सुखसाज नगर पैसारा ॥
कृष्णपंथ सँग सब रणधीरा । मिले सबै जस नीरहि नीरा ॥

भूमि पुरंदर वे चंद्रहासा। हरिहरि सबही नगर प्रकासा॥
साहित पुत्र मंत्री पुनि आवा। तेहि हरिचरणकमल शिर नावा॥
मदन हृदयमहँ बहु सुख भयऊ। धृष्टबुद्धि कर पातक गयऊ॥
भक्तन गृह पुनीत पुनि करना। मदन कहा राखहु मोहि शरना॥
पुनि तहँ मुनि गालव हँकरावा। विधिवत हरि पूजा करवावा॥
गालव हरि अस्तुति परकाशी। रूप अनंत अलख अविनाशी॥
मनमहँ चितये हरिकर ध्याना। पाये हरि दरशन निर्वाना॥
सबकाहू कर गा दुखभारा। बहु आनंद गनै को पारा॥
राजा सकल सुतन धन लीन्हा। सब हरिकी न्यवछावरि कीन्हा॥
कृष्णपंथ अस मत जियसाजा। कीन्हेउ मकरध्वज बड़ राजा॥
पाक्षिचकोर मिलेउ जस चंदा। सबकाहू कर गा दुखफंदा॥
हरिजन चंद्रहासकी लीका। पढ़ै सुनै ताकहँ सुख नीका॥
जे नर पढ़ैं चरित शशिहासा। कल्मष रोग दरिद्र विनासा॥
आयुवृद्धि कुल हो सुत संता। बहु विधि कृपा करहिं भगवंता॥
हरिकी भक्ति वहुत उपजावै। इह संसार तुरत तरिजावै॥
जैमिनि जन्मेजय समुझावा। नारद पंथहि अमृत प्यावा॥
वांछा जवन करै सो पावै। जाकहँ चंद्रहास यश भावै॥
विष्णुवैष्णव मिलि गा ऐसे। औरौ जल गंगोदक तैसे॥
जित तित शब्द कृष्ण ह्वै रहिया। वेद पुराण भागवत कहिया॥

दोहा-पुरुषोत्तम जन जलचर, जलहरिनाम गोपाल॥
निमिषहु तुम जनि बीछुरौ, जीवनके प्रतिपाल॥ १८०॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि चंद्रहासोपाख्यानं
नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः॥ ६२॥

नारद उवाच।

इह अंतर हरिजन शशिहासा। विषया सुतसन वचन प्रकासा॥
जग बहु देश नगर प्रतिपाला। हम नहिं छाँड़त चरण गोपाला॥

हमाहिं लागि कौंतल वन गयऊ । जो हम कहा सोई अब भयऊ ॥
ऐसे वचन पुत्रसन कहिया । बिछुरत पिताहि बिलखहै रहिया ॥
इह अंतर बाजन बजवावा । कृष्ण पंथ अगमनै चलावा ॥
हरि जन चंद्रहास भये संगा । कोउ न छेदय यज्ञ तुरंगा ॥
अमित तेज अर्जुनकर धुनई । करि प्रणिपत्य नृपति शिर धुनई ॥
जवनहिं देश तुरंगम जाई । धन अरु रत्न मिलहि लै आई ॥
उत्तर देश तुरंगम बाढ़ा । तीर समुद्र जाय भा ठाढ़ा ॥
तुरँग प्रतीष्टि उदधि गंभीरा । पाछे पहुँचे अर्जुन वीरा ॥
घोरा पैठि समुद्रहि धावा । सेनासहित कृष्ण तहँ आवा ॥
योधा सबै जीव दुख मानहिं । यज्ञतुरँग कर मर्म न जानहिं ॥
जवनहिं देश तुरंगम धरिया । तहँतहँ युद्ध कृपा हरि करिया ॥
कहेउन कृष्ण विपतिके भंगा । पाउब कैसे यज्ञ तुरंगा ॥
कहहिं कृष्ण चिंता जनि मानहु । पंचरथी अविनाशी जानहु ॥
पंथ हंसध्वज अरु चंद्रहासा । पंथ सुवन मोरध्वज दासा ॥
ये सर्वत्रगामि नाहिं मरहीं । जल नाहिं डूबहिं अग्नि न जरहीं ॥
हमहूँ पुनि होउब तव संगा । सिंधु ते आवहि यज्ञतुरंगा ॥
कृष्ण वचन सुनि सबही भावा । पाँचो रथी समुद्रहि धावा ॥
पाँचहु साथ चले भगवाना । भीतर उदधि करैं मुनि ध्याना ॥
तेजरूप पद्मासन वैसा । देखत मानहु ब्रह्मा जैसा ॥
दीन्हें शिर वट पत्र सुखाना । जीरण शास्त्र छिद्र परिधाना ॥
तामहि घरलू तनु सब कीन्हा । चिरंकाल रामहि चित दीन्हा ॥
बकदालभ्य मुनी संभागा । रथ अंदोर सुनत ऋषि जागा ॥
रथते उतरे पाँचो वीरा । परशेउ चरण कीन्ह मन धीरा ॥
पुनि देखहिं पंकज जे चरणा । पायो दरश पतित निस्तरना ॥
परम अनंद कीन्ह जिय माहीं । पूछी बात रथी मुनि पाहीं ॥
ऋषि केशव हैं तुम्हरे संगा । जासु चरण प्रक्षालित गंगा ॥

दोहा–सुनत पंथ विस्मै भये, कह देखे गोपाल ॥
पुरुषोत्तम जल थल कहा, घर घर राम दयाल॥१८१॥

अर्जुन ऋषिको पूछत लीन्हा। शिर वट पत्र कहा घर कीन्हा ॥
मृगपक्षी वनमें जे रहई। गृह घरनी वेऊ सब चहई ॥
सुनत वचन ऋषि उदधि अडोला। हँसिकै ऋषि अर्जुनसन बोला ॥
हर्षवंत ह्वै मुनि अस कहिया। जेहि घरनी तहँ बड़ दुख सहिया ॥
सुनि हो अब मम ज्ञान विचारा। पुरषहि घरनी करि अहँकारा ॥
घरनी ते हरि हारे विसराई। घरनी ते जे जाल पराई ॥
गृह अंकूर जन्म संतापा। धर्म हरै संचै बड़ पापा ॥
ज्योतिषसे अरु देह मलीना। संतति लागि होइ तनु छीना ॥
तृष्णा बाढ़ै होत विवाहा। पुनि आगे संतति नर चाहा ॥
संतति कर विवाह जो होई। पुनि नरसै उनके सुत होई ॥
पुनि उनकर विवाह जो करिया। तृष्णा बढ़ै वेगि पुनि मरिया ॥
इहि विधि होय जन्म अरु मरना। कवहुँ न आये हरिकी शरना ॥
इहते वनितहि ना चित दीन्हा। हरिहि लागि सायर घर कीन्हा ॥
थोरी आयुर्बल जब जानी। तेहि ते पर्णकुटी नहिं ठानी ॥
अर्जुन पुनि विनती अवधारी। आयुर्बल मुनि किती तुम्हारी ॥
कहेउ मुनिय निर्मल मति तोरी। सुनहुव तुम आयुर्बल मोरी ॥
तनुके रोम कहे श्रुति जेते। मार्कंडेय मरिगये तेते ॥
ब्रह्मा विष्णु परे हैं आगे। ध्यान धरैं तबहूँ हम जागे ॥
बहुत बार जल हल संचारा। उदधि सुखानेउ बहुतक बारा ॥
जब जब ब्रह्म परहि सुनि वीरा। धरनी शिखर होइ सब नीरा ॥
जल ऊपर वटपत्र सुरेखा। तेहि ऊपर हरि बालक देखा ॥
चरण अंगुष्ठा मुखमहँ आना। पौढ़े पत्र मध्य भगवाना ॥
रूप न रेख जाइ कछु चीन्हा। ताते पत्र रहै शिर दीन्हा ॥
जो वटपत्र उपर हम देखा। तुम्हरे संग रहत नरवेखा ॥

ब्रह्मादिक जाकर कर ध्याना । सो तुम संग मर्म नहिं जाना ॥
पंकज चरण दिखायउ मोही । बहुतक प्रलयधाव हरि तोही ॥

जैमिनिरुवाच ।

यहै वचन सुनि यादवराई । मिले ऋषिहि हरि अंकम लाई ॥
मोहिं लागि धरनी नहिं कीन्हा । शिर ऊपर वटपत्रहि दीन्हा ॥
वकदालभ्यमुनि स्तुति करही । टेकिन चरणरेणु हिय धरही ॥
तुमहिं पुराण पुरुष साक्षाता । ब्रह्मा विष्णु न जानहिं बाता ॥
धन्य धन्य युधिष्ठिर राजा । जाकहँ कृष्ण करहु तुम साजा ॥

दोहा—अवगति अगम अगोचर, वेद भेद नहिं जान ॥
पुरुषोत्तम सँग अर्जुनहि, देखे श्रीभगवान ॥ १८२ ॥

हरि अस्तुति कीन्ही मुनि जबही । अर्जुन वीर चकित भये तबही ॥
सर्व देव देवनके मूला । नहिन कोउ हरि जन सम तूला ॥
सुनि अर्जुन हरि चरित अखंडा । चालिस वर्ष फिरे ब्रह्मंडा ॥
प्रथमहि गयो चतुरमुख जहँवा । हरि चरित्र पूछेउ मैं तहँवा ॥
सृष्टि करैं तहँ वेद बखानै । हरिकर मर्म नेक नहिं जानै ॥
अपने गर्भ ब्रह्मा रहै ताहाँ । गर्भते हरि की लहै न छाहाँ ॥
ब्रह्मा अष्ट वदन है जहँवा । हरिकर मर्म उनहु नहिं कहँवा ॥
षोडशमुख ब्रह्मा जो अहई । मर्म न जानै हरिहरि कहई ॥
बत्तिस मुख ब्रह्मा है जहँवा । हरिचरित्र पूछेउ मैं तहँवा ॥
रूप रेख कछु उनिहु न कहिया । अपने लोक वैसि सो रहिया ॥
चौंसाठि मुख ब्रह्मा रह जहिया । उनिहू हरिकर मर्म न कहिया ॥
जाने कोउ रूप है कैसा । बहुरेउ सहस वदन जहँ वैसा ॥
सनकादिक तहँ अस्तुति करहीं । सुर मुनि ब्रह्मा ध्यान जु धरहीं ॥
होइ भक्ति निशिदिन हरि जहँवा । सुनउ पंथ गमनेउ मैं तहँवा ॥
मैं पूछेउ हरिके गुण ग्रामा । मोकहँ उठिकै कीन्ह प्रणामा ॥
मैं पूछी हरिकी कुशलाता । मोसन ब्रह्मा कही न बाता ॥
सुनि मुनिवरको हरिहि बखानै । ब्रह्मादिक कोउ मर्म न जानै

जगवर ऊदुंबर फल होई । प्रात रक्त अगणित रहै सोई ॥
पै जानै इतना है देशा । तव ब्रह्मांड अहै इस भेशा ॥
उत्पति प्रलय करैं प्रभु सर्वा । ब्रह्मादिक झूंठे करि गर्वा ॥
सिंधुमाँझ जिमि उठै तरंगा । उपजै जहाँ तहाँ होय भंगा ॥
हरिकर मर्म जानि नहिं जाई । पूजहि ब्रह्मा हरि चित लाई ॥
हरिके नाम प्रीति जेहि होई । सुनि मुनि हरि जानै नर सोई ॥
नाम प्रभाव अधम सब तरे । नाम लेत कल्मष सब हरे ॥
नाम सवाद जे न मुनि जाना । सनकादिक प्रेमी भगवाना ॥
इंद्रियजित विकार जिय तजई । हरि हरि रटहिं हरिहि हरि करई ॥
तो मैं पंथ सुने अस वचना । तजि विकार कीन्हेउ हरिचरना ॥
मिथ्या करि जानेउ संसारा । उदधि माँझ हरि नाम अधारा ॥
सुनहु पंथ जिय गर्व न कीजै । ताजि विकार हरिमें चित दीजै ॥
सुनत वचन मुनि गा दुखफंदा । पंथ कृष्ण जिय भयउ अनंदा ॥
मुनि आनेउ पुनि यज्ञ तुरंगा । बिंहँसि चले मुनिवर तेहि संगा ॥
छाँड़ेउ जाहि रामके चरना । देखिहौं नृपति कहेउ हरि शरना ॥
यज्ञ तुरँग मुनिवर सँग लाये । जँह सब कटक तहाँ प्रभु आये ॥
देखेउ सबहि महामुनि आवा । भा आनंद तुरंगम पावा ॥
चरण परशि अस्तुति सब करहीं । बकदालभ्य हरि हरि उच्चरहीं ॥
तीर उदधिके बाजन बाजा । पावा तुरँग सिद्धि भा काजा ॥

दोहा-अद्भुत चरित गोविंदकर, अगम अथाह अपार॥
पुरुषोत्तम भव उदधिमें, रामै नाम अधार ॥ १८३ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि ऋषिसमुद्रआगमनं
नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

जैमिनिरुवाच ।

निकसि समुद्र तुरंगम धावा । तुरतहि पुरी जयद्रथ आवा ॥
निकसे देश लोग तहँ राजा । शीश छत्र सिंहासन साजा ॥

तेहि पुर गयो यज्ञकर बागी । देखत धरेउ बार नहिं लागी ॥
योधा लै गये जहाँ भुवारा । सकल वीर मिलि करहिं विचारा॥
पत्र बाँचि सब कहेउ प्रसंगा । राय युधिष्ठिर केर तुरंगा ॥
रानि पुत्र जिय मतो विचारा । दरश देखिये जन्म उधारा ॥
रानी सुत दोउ टेके चरना । हम हरि एक तुम्हारिय शरना ॥
स्वामी मोर इंद्रसुत मारा । त्राहि कृष्ण अब करहु विचारा ॥
पुत्र राज्य बैठा है मोरा । कृपा करो अब जन है तोरा ॥
उतरे पंथ जहाँ हरिनामा । भगिनी कहँ कीन्हेउ परनामा ॥
भगिनिहि बात कही समझाई । पाछिल बात क्षमहु तुम जाई ॥
लेहु तुरे अरु बहुत गयंदा । दुख जनि मानहु करहु अनंदा ॥
कहि करि हरि अर्जुन चुप रहिया । दुहिता वचन दुसहि लै कहिया ॥
सर्वव्यापि राखहु पुनि दाया । अब जिनि मो विसरहु यदुराया ॥
तब द्रौपदि कर दुःखनिवारा । होत प्रलय यदुवंश उबारा ॥
अहौं अनाथ परम दुख भयऊ । स्वामी मोर तुमहि हरि लयऊ ॥
कह लै करिहौं हस्ति तुरंगा । देखत दरश भयो दुख भंगा ॥
कृष्णचरण धरि बहुविधि रोवै । नयन नीर पद अंबुज धोवै ॥
सुर नर मुनि दुर्लभ ये चरना । दीन जानि राखै सब शरना ॥
जननी दर्शनकी अनुरागी । दीनदयालु दया तब लागी ॥
लै हरि पथहि आये तहवाँ । पुत्र सिंहासन बैठेउ जहवाँ ॥
तुरतहि पुत्रहि लीन्हेसि जानी । मेलिसि चरण कमल तर आनी ॥
अर्जुनके टेके पुनि चरना । मोहि निस्तारहु राखहु शरना ॥
सिंहासन हरि लै बैठाये । नगर लोग सब देखन आये ॥
भेरि मृदंग पणव बजवावा । गीत नृत्य उत्साह करावा ॥
घर घर कीन्हे मंगलचारा । सब घर बाँधेउ बंदनवारा ॥
पंथ कहा भल हेत करावहु । पुत्र कलत्र सु निवते आवहु ॥
वर्षदिवस हय तुरो फिरावा । अब हम गजपुरको चलवावा ॥
मिलहु आनि कुंती कहँ तहवाँ । उत्सव यज्ञ देखिये जहवाँ ॥

जैमिनिरुवाच ।

पुत्र सहित जननी आनंदा । कनक रतन भरि लीन्ह गयंदा ॥
नगर निवासिन कीन्हे साजा । जैहैं तहाँ युधिष्ठिर राजा ॥
वर्षदिवस संपूरण भयऊ । हरि प्रसाद अर्जुन यश लयऊ ॥

दोहा-लाय प्रदक्षिण धरणी, तुरँग देश फिरि आव ॥
पुरुषोत्तम आनंदयुत, गजपुर सौंह चलाव ॥१८४॥

इति श्रीम० अश्वमेधप० जयद्रथपुरप्रवेशनं नाम
चतुष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

जैमिनिरुवाच ।

वर्षदिवस लगि फिरेउ तुरंगा । अर्जुन देवकी नंदन संगा ॥
कृष्ण कहा अर्जुन सुनि लेहू । यज्ञतुरँग सौंपो अब केहू ॥
जायहि तुरँग बहुरि किहु देशा । जानि न परत कछू गुण भेशा ॥
इतने वचन कहे भगवाना । यज्ञतुरंग इहाँ धरि आना ॥
कृष्णपंथ राजाके संगा । चलेउ हस्तिनापुरहि तुरंगा ॥
अति अनंद बाजन बजवावा । चलेउ जहाँ नृप यज्ञ करावा ॥
राग होहिं तहँ हरिकर हीता । नाचत नट सब चले सँगीता ॥
प्रदुम्न अरु अनिरुद्ध कुमारा । अरु वृषकेतु जु बड़े जुझारा ॥
बभ्रुवाहन बर्मारु अनंगा । मोरध्वज हंसध्वज संगा ॥
यौवनाश्व नीलध्वज साजा । चंद्रहास आरा सब राजा ॥
छत्र मुकुट शिर रत्नविहारा । भूषण वसन चमर शिरढारा ॥
नानाभाँति कुसुमकी माला । सब सुंदर भुज महा विशाला ॥
केतेहु दिनमहँ पहुँचेउ आई । अर्जुन नगर निकट नियराई ॥
रजनी दीप कीन्ह पैसारा । हीरारत्न जहाँ उजियारा ॥
कृष्ण कहा सुन अर्जुन दासा । राय युधिष्ठिर मनहि उदासा ॥
कहे पंथ मैं अब अग्रुसरहूँ । राजाके जिय धीरज धरहूँ ॥

बंदीजन अस्तुति सब करहीं । चंदन सींचि जहाँ पगु धरहीं ॥
नगरके निकट कटक नियरायउ । कृष्ण हस्तिनापुर तब आयउ ॥
मंडप दिव्य गंगके तीरा । मुनिन सहित जहँ धम शरीरा ॥
देवकी सहित मनोहर बीरा । सब हरिभक्त करैं मनधीरा ॥
सवनि बसाहिं जहँवा चित्रसारी । गावत सुर सुंदर यंत्रधारी ॥
चरण कमल नृप मंदिर आये । वर्षि सुधा जनु मृतक जिवाये ॥
परशेउ राजा हरिके चरना । पावन पतित सदा भय हरना ॥
राजा तिनहि अंकमें लाई । दिन दिनकी सब बात जनाई ॥
आयेउ अर्जुन कुशल तुरंगा । नीलध्वज राजा रह संगा ॥
हंसध्वज मोरध्वज राजा । तुम्हरे पुण्य जीति सब साजा ॥
सुधन्वा अरु जो सुरथकुमारा । दुवौ जीति रण बड़े जुझारा ॥
मणिपुर बभ्रुवाहन हय धरिया । पंथ वृषकेतु शीश बिनु करिया ॥
अर्जुननंदन महा जुझारा । गंगा शाप पंथ कहँ मारा ॥
मणि कारण पुनि गयो पताला । नागन सब कीन्हों शर जाला ॥
आनेसि मणि वृषकेतु जिआवा । अर्जुन शीश आनि पुनि लावा ॥
पंथ जिये नृप तुम्हरे धर्मा । सरस्वतपुर जहँ वीर जु वर्मा ॥
उनहूँ जीत गये पुनि तहँवा । हरिजन चंद्रहास है जहँवा ॥
कौंतलपुर मारेउ अति हीता । और असुर काहू नहिं जीता ॥
तुम्हरे पुण्य जीतियो सर्वा । आये जीति लाये धन अर्वा ॥
पुनि तुरंग गयो सागर माहीँ । बकदाल्भ्य मिले पुनि ताहीँ ॥
चिरंकाल उहि ब्रह्मा शेखा । जन्मकोटि कर गनै न लेखा ॥
चाढ़ि शिबिका लावहु बहु साजा । आये मुनि तुम देखन काजा ॥

दोहा—सबै कुशलसन आयउ, कहै वचन भगवान ॥
जस हम कहँ नृप जानहू, तस राखउ उनमान॥१८५॥

राजाकर हरि करि संतोषा । भीमसेन हरि बहुत भरोसा ॥
भीमहि हरि अंकाहिमें दीन्हा । नगर सबै आनंदित कीन्हा ॥

कुंती परशेउ हरिके चरना। सुभद्रा द्रौपादि हरिकी शरना॥
करि प्रणाम स्तुति जब धारी। हम सब हैं प्रभु शरण तुम्हारी॥
संजयविदुर दंडवत कीन्हा। सब कहँ अंकमालिका दीन्हा॥
भीम संग हरि आये तहँवा। देवी रोहिणि यशुदा जहँवा॥
टेके चरण कही कुशलाता। आये हम नीके सुनि माता॥
जननी मिलि आये मनहारी। जहँ रुक्मिणि सतभामा नारी॥
जाम्बवती लक्ष्मना मनहरना। देखनकहँ तरसति हैं चरना॥
देखत कमलवदन आनंदा। सब काहू कर गा दुखद्वंदा॥
सतभामाके वचन रसाला। करि क्रीड़ा पूछेउ गोपाला॥
कमलनयन प्रभु कहौ विचारी। कितहु मिली कुवजासी नारी॥
पंथहि मिली प्रमोला जैसी। कितहूँ मिली तुमहिं कोउ तैसी॥
सुनत वचन प्रभु हँसे अनंदा। फिरि बोलेउ प्रभु यादवनंदा॥
भीमसेन हैं संग हमारे। पुत्र पौत्र अब भये तुम्हारे॥
करहु लाज अब चुप करि रहहू। बाल कथा अब काहे कहहू॥
बोले भीम सुनहु यदुनाथा। काहे वचन चुरावौ गाथा॥
जो तुमसों सतभामा कहई। सो हमसन प्रभु गुप्त न रहई॥
कीन्ह परस्पर क्रीड़ा ताहाँ। आये सबै युधिष्ठिर जाहाँ॥
कहेउ नृपतिसन धीरज धरहू। यज्ञ मनोहर अब तुम करहू॥

जैमिनिरुवाच।

हम तुम अरु धृतराष्ट्रक राजा। औरौ वृद्ध करत मख साजा॥
मातन संग ऋषीश्वर जाहू। औरौ संग लेहु सब काहू॥
बकदालभ्यमुनि आवै जाहाँ। आवहिं सकल अहैं हरि ताहाँ॥
कुंती सहित जाहु सब नारी। गज चढ़ि आरति सकल सँवारी॥
विप्र वेदध्वनि मंगल घोषा। घर घर ध्वजा बँधावहु चोषा॥
नृत्यत नट नाटकी वहूता। कुसुम पगार वहुत संयूता॥
चंदन छिरकत मारग जाहू। मिलिकै पंथ मिलहु सबकाहू॥

दोहा-सुनिकै वचन पंथपै, सब मिलि कीन्हों साज ॥
पुरुषोत्तम अर्ज्जुन जहाँ, चले वाद्य सब बाज १८६ ॥

करत कुतूहल चलो तुरंगा। आये जहँ अर्जुन सब संगा ॥
वधू वृद्ध सब अमृत बोला। रुक्मिणि सहित चढ़ीं चौडोला ॥
अगर कपूर कुमकुमा पंका। वर्षहिं लवा आवाद्य मयंका ॥
देवै यशुमति कुंती संगा। गज चढ़ि देखहिं यज्ञ तुरंगा ॥
बहुत सखा तहँ चमर डुलावहिं। जहँ अर्जुन तहँवा चलि आवहिं ॥
आईं सब लोचन सारंगा। देखेउ पंथ भयो दुखभंगा ॥
विप्र वेदध्वनि आगे करहीं। सुंदरि दधि दूर्वा लै धरहीं ॥
सुवरनथार आरती साजी। गजमुक्तामणि माल विराजी ॥
बहु विधि देव पुण्य श्रृंगारा। सब गंधर्वन नृत्य पसारा ॥
आतुरि हावभाव सब करहीं। पंथहि देखि धीर जिय धरहीं ॥
चातक स्वातिबूँद गुहरावा। पक्षिचकोर चंद जनु पावा ॥
बिकसहि पंकज रविहि प्रकासा। सबकाहूकी पूजी आसा ॥
पंथ सहित देखे सब वीरा। सबकाहू कर गइ दुखपीरा ॥

दोहा-पुरुषोत्तम जस धरणी, सावन हरियै होइ ॥
तिमि अर्जुनके दरशते, आनंदित सब कोइ ॥ १८७ ॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि अर्जुनआगमनं नाम
पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

जैमिनिरुवाच।

जे हैं जहाँ तहाँते धावा। देशक लोग मिलनकहँ आवा ॥
मिलिकै सब सुंदरि इक संगा। प्रथमहिं पूजेउ यज्ञतुरंगा ॥
पुनि सब बोले अमृत बैना। हरिकर रूप जनौ सब सैना ॥
रत्नकमाल मिष्टकै लेहीं। अर्जुनको जयमाला देहीं ॥

धर्मराय कर यज्ञ सँवारा। आपुन कृष्ण भये रखवारा॥
वरणि न जाय बहुत आनंदा। लोग कुमोद पंथ जनु चंदा॥
भीमादिक सब चमर ढुरावहिं। ऋषि औ वृद्ध महाजन आवहिं॥
धूप दीप गइ शिखा अकाशा। दीख न पर रविकर परकाशा॥
दुहुँ दिश अति बाजन बहु बाजा। चकित होइ देशकर राजा॥
इह अंतर अर्जुन धनु धरना। देवकि कुंती टेकिन चरना॥
रुक्मिणी लक्ष्मणा अरु सतभामा। जाम्बवती कहँ कीन्ह प्रणामा॥
पुनि धृतराष्ट्र विदुर हैं जहँवा। टेके चरण पंथने तहँवा॥
विषयापति जनु शशि परकासा। बड़ हरिजन तहँही चंद्रहासा॥
वर्मा वीर अहै बड़ राजा। आये कर्ण यज्ञकर साजा॥
ये मोरध्वज यज्ञ जु कीन्हा। हरिहि लागि करवट शिर लीन्हा॥
हंसध्वज जे पुण्य शरीरा। जाकर सुरथ सुधन्वा वीरा॥
उनहू सन भा बहुत कलेशा। जाकर शीश शृँगार महेशा॥
कर्ण पुत्र टेकत है चरना। इन सम नहिं दूसर धनुधरना॥
ये तो है नीलध्वज राजा। आनेउ बहुत यज्ञकर साजा॥
धृत्तराष्ट्र सन सबै सुनाइनि। आपुन मिलि सबही मिलवाइनि॥
धृतराष्ट्रक जिय भयो अनंदा। आये तहँ जहँ पांडव नंदा॥
नृपकी चरणरेणु शिर लीन्हा। राजा अंकमालिका दीन्हा॥
भीमसेन कहँ मिले प्रवीना। दोनहुँ नयन नीर भरि लीन्हा॥
जननिहिं मिलि भा परम सनेहा। पुनि पुनि कुंती निरखति देहा॥
देखत अक्ष अश्रुकी धारा। तेहि क्षण भेंटेउ कर्ण कुमारा॥
धन्य पुत्र धन धन वृषकेतू। अर्जुन सन कीन्हों बड़ हेतू॥
मिले परस्पर तब रणधीरा। करुणा जीव नयन बह नीरा॥
भयो परिरंभन बहुतै भेशा। जहँ वेदी तहँ कीन्ह प्रवेशा॥

द्रौपदी तहाँ युधिष्ठिर राजा । वर्ष दिवस संयम व्रत साजा ॥
साकिल समिध बहुत विधि धरी । राजा सब विधि सेवा करी ॥
कुंती देवी यशुमति संगा । चंदन कुंकुम चर्चित अंगा ॥
मंत्र पाठ द्विज पढ़हिं बहूता । सुंदरि गावहिं मख संयूता ॥
कुंकुम चंदन बहुत चढ़ावहिं । खेलैं हँसैं अँनद उपजावहिं ॥
पूजहिं सब बकदालभ्य जाई । बहुत अनंद बरणि नहिं जाई ॥
जाकर जो बिछुरत है जाहाँ । आवहि आपु मिलत पुनि ताहाँ ॥
लगेउ होन तहँ यज्ञ पसारा । आनेउ रत्न कनक बहु भारा ॥
कनक खंभ बहु रंग बनावा । गनत चारितै अधिक सुहावा ॥
आठ द्वार कर मंडप छावा । ऋषिमुनि तहाँ वेदध्वनि गावा ॥
विधिवत कुंड खना मनलाई । रत्न जटित भल ध्वजा बनाई ॥

दोहा—उपरोहित तहँ व्यास हैं, युधिष्ठिर यजमान ॥
पुरुषोत्तम जन कहत है, वर्णन श्रीभगवान ॥ १८८ ॥

ऊख दिव्य अरु वट पालाशा । जित तित विप्रन वेद प्रकाशा ॥
उखल तहाँ पुनि मूसर धरचो । अक्षत शब्द सुंदरिन करचो ॥
आचारज भये तहँ मुनि व्यासा । बकदालभ्य ब्रह्म परकासा ॥
जो कछु रीति देव ऋषि कीन्हा । भिन्न भिन्न सब मंत्र जु दीन्हा ॥
वामदेव महाऋषि आये । मुनि वसिष्ठ गौतम बैठाये ॥
अग्नि परशु अरु भारद्वाजा । जामदग्नि कौंडिन्य विराजा ॥
शोभन ऋषिय और कौंडिन्या । जातुकरन ऋषि गालव धन्या ॥
भूपर व्यासादिक ऋषि जेते । ऋत्विज वरण कीन्ह मुनि तेते ॥
स्वस्ति वचन व्यास अनुसारा । विश्वामित्र यज्ञ रखवारा ॥
पुलस्त्य धौम्य अरन्य ऋषि कहिया । बहुत ऋषीश्वर तहँवा रहिया ॥
ऋषि विभांडका अरु मधुछंदा । यज्ञद्वार पालक आनंदा ॥
औरौ बहुरि ऋषीश्वर रहिया । विधिवत सबकी पूजा कहिया ॥
शृंग कुरंग गहे कुरु राजा । कीन्हों व्यास यज्ञ कर साजा ॥

कहै व्यास नृप सुनि मनुजानी। चतुः खंड राजा अरु रानी ॥
ग्रंथि जोरि गंगोदक आनहु। रानी शिर धरि घट भरि आनहु॥
सुनत बचन जस पूनौ चंदा। जोरहि गाँठि होहि आनंदा ॥
नृप अरु पत्नी मुनि संयूता। अरुंधती वसिष्ठ अग्निहूत्ता ॥
रुक्मिणी कृष्ण गाँठि गहि कीन्हा। पंथ सुभद्रा सब सँग लीन्हा ॥
मायावति प्रद्युम्न अनंगा। ऊषा कुमरि अनीरुध संगा ॥
हरिवा अहै भीम कुल दीपा। भद्रावति वृषकेतु समीपा ॥
मोरध्वज नीलावति संगा। प्रभावती यौवनाश्व संगा ॥
शीलध्वजके संग सुनंदा। अरु रानी राजनके संगा ॥
चले सकल मिलि एकै संगा। ग्रंथि जोरि आनहु जलगंगा ॥
कनक कमल शिर ऊपर लेहू। वेदी आनि गंगजल देहू ॥
इह अंतर बाजन सब बाजा। ठाढ़े भये रानि अरु राजा ॥
विप्र वेदध्वनि कीन्ह उचारा। गज चढ़ि गावैं मंगलचारा ॥
वर्षत मुक्ताहल वर नारी। सुरनर मुनि सबको अति प्यारी॥
नानाभाँति कीन्ह शृंगारा। तहाँ महाजन संत सिधारा ॥
देवकी कुंती चतुःसम घोषा। अंचल कृष्ण रुक्मिणी चोषा ॥
इह कौतुक सब नारद देखा। आये जहाँ सतभामा देखा ॥
चरण पखारे कीन्ह प्रणामा। आये कहाँ कहै सतभामा ॥

नारद उवाच।

सुंदरि सतभामा तुम सुनहू। कृष्ण प्राणवल्लभ के गुनहू ॥
यज्ञ अरंभ तुरँग जहँ राजा। ग्रंथि जोरि रुक्मिणि सँग राजा ॥
बहुविधि तहँ बाजन बजवावा। वर सुंदर तहँ मंगल गावा ॥
तहाँ प्रद्युम्न मायावति साथा। अनिरुध ऊषा गहि निज हाथा ॥
अति पाखण्ड करहिं गोपाला। बात तुम्हारी कबहुँ न चाला ॥

दोहा-नारद अनुख कहैं सबै, सतभामहि समझाय ॥
सुंदरि उत्तर दीन्ह तब, तुमहि कलहि झुठि भाय॥१८९॥

सत्यभामोवाच ।

मुनि तुम अस जानि करहु निदाना। हमरे मंदिर हैं भगवाना ॥
हमरे कहे नाहिं पतियाहू । पंकज चरण देखि तुम जाहू ॥
नारद ऋषिय गये पुनि ताहाँ । सुमिरत कृष्ण चरण मनमाहाँ ॥
चकृत ह्वै नारद अस कहिया । चरित तुम्हार काहु नहिं लहिया ॥
तब नारदका भा चित भंगा । देखेउ कृष्णहि रुक्मिणि संगा ॥
ब्रह्मादिक जानै नहिं बाता । नारद दुख भा आवत जाता ॥
नारदमुनि गमने पुनि तहवाँ । जाम्बवती नारी बड़ि जहवाँ ॥
सुदरि सुनौ कहौं मनजानी । सतभामा रुक्मिणि बड़ि रानी ॥
सुनहु बड़े बड़ राजन माहीं । ग्रन्थ जोरि गंगाजल जाहीं ॥
तुमहू कौतुक देखहु जाई । अस अपमान न बूझिय भाई ॥
जाम्बवती झूँठै करि माना । तहाँ जाहु जे तुमहिं न जाना ॥
परघर घालन कलहिं करावहु । हरि हमरे हैं जनि बौरावहु ॥
आज्ञा भंग नृपति जे करहीं । साधन मान भंग जिय धरहीं ॥
पतिव्रताकर करि अपमाना । विनही अस्त्र मरन जनु ठाना ॥
कृष्ण हमार करहिं मन भंगा । तो हमरें सुमिरन मन अंगा ॥
जाम्बवती नारद सन कहिया । सुनतै मुनी चकित ह्वै रहिया ॥

जैमिनिरुवाच ।

जेहि जेहि मंदिर नारद जाहीं । जोरै गाँठि कृष्ण है ताहीं ॥
आदि अंत काहू नहिं जाना । घटघट पूरि रहे भगवाना ॥
अगम अगोचर कथा अपारा । को जानै प्रभु मर्म तुम्हारा ॥
दोहा—भुवन चतुर्दश जल थल, सब महँ व्याप्त गोपाल ॥
　　पुरुषोत्तम जन वर्णही, प्रभु काटहु भ्रमजाल ॥१९०॥
इहि अंतर नारद तहँ आवा । जहँ वेदी नृप यज्ञ करावा ॥
आये जहाँ अहैं मैं हरना । अस्तुति करि परसे हरिचरना ॥
चरण निगम ब्रह्मादिक जानहिं । गुप्त कथा नारदहिं बखानहिं ॥

सहित वासिष्ठ नृपति मनभावा। गाँठि जोरि गंगोदक लावा॥
आसपास गर्जहिं सब वीरा। अति कौतुक गंगाके तीरा॥
व्यास देव जलदेव पुजावा। सबसन कंचनकुंभ भरावा॥
अनसुइया अरुंधती लीन्हा। घट भरि जल रुक्मिणि शिर दीन्हा
अरुंधती इह वचन उचारा। रुक्मिनि सहनि फूलकर भारा॥
तुम बरु टेकि हाथ करि लेहू: आन कलशमें तुम बरु देहू॥
अरुंधती करुणा अति कीन्हा। बहुरि सुभद्रा उत्तर दीन्हा॥
ताकर भार कवन विधि सहिया। कर पल्लव गोवर्द्धन गहिया॥
विपति परी ब्रज राखेउ तहवाँ। भुवन चतुर्दश उरवसि जहवाँ॥
खेल सुभद्रा करि अस कहई। सो प्रभु रुक्मिणिके उर रहई॥
कनक कलश महि कौतिक बाता। सुनहू तुम अरुंधति माता॥
रुक्मिणि वचन सहोद्रहि कहिया। अर्जुन तुम्हरे ऊपर रहिया॥
जाके बलहि औरको सहिया। तीनि लोक अर्जुन भय रहिया॥
विकसित वदन शरद जस चंदा। आपहि आपु करै आनंदा॥

जैमिनिरुवाच।

कनक कमल गंगाजल लीन्हे। आप सकल शिर ऊपर दीन्हे॥
रतनजटित सब अभरन हारा। गावति आवै मंगलचारा॥
बजहिं मृदंग शंख अनुसाजा। वीणा विविध शंखध्वनि बाजा॥
काहल भेरि गोमुख अति स्वादा। आवत जलहि भयउ बड़ नादा॥
गंगोदक लै कलश भरावा। कछु लै यज्ञ तुरंग न्हवावा॥
दोहा-द्रौपदि राय युधिष्ठिर, उनहु कीन्ह अस्नान॥
पुरुषोत्तमजन वर्णही, होऊ यज्ञविधान॥ १९१॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि जलयात्रावर्णनं नाम
षट्षष्टितमोऽध्यायः॥ ६६॥

मंत्रस्नान कीन्ह तब राजा । वेदी आनि बैठि किय साजा ॥
भीमसेन अर्जुन व्रतकारी । कृष्णदेव हित भये सुखारी ॥
शिव गोविंद सखिन संभारा । नृपति ऋषिनके चरण पखारा ॥
आसन लै मुनिवर बैठाये । उत्तम पाटंवर पहराये ॥
चंदन चर्चि दिव्य अलंकारा । कुसुममाल पहराइनि हारा ॥
साहित कपूर दीन्ह सब बीरा । कनकासन बैठाइनि धीरा ॥
सुनि जाचक आये सब कोई । देहु देहु चारों दिशि होई ॥
चमर छत्र सहस्र गौ देही । दासी दास धराणि सब लेही ॥
कीन्हे पाटंवर बहु दाना । आशादानहिं सकल अघाना ॥
आये जे नहिं भये निरासा । सुखी दुखीकी पूजी आसा ॥
देकरि दान वैसि पुनि राजा । आयो यज्ञतुरँग करि साजा ॥
नृपति कहे सुनि यज्ञ तुरंगा । नृपति कहै तब हुतियै अंगा ॥
जैसा जीव हमार तुम्हारा । भयो आप अब मोर विचारा ॥
नृपति वचन तव सुनेउ तुरंगा । धुनो शीश अरु भा चित भंगा ॥
स्वामी काज जीव जो जाई । तैसी शोभा तनु सुख पाई ॥
इह अवसर जो मखमहिं मरना । देह छुटै देखत हरि चरना ॥
अवगाति गति जहँ रूप न देखा । ताकर दरश प्रगट हम देखा ॥
ना हमरा तुम मारनहारा । कृष्णहि हाथ सृष्टि संहारा ॥
बूझी नकुल तुरंगम वानी । सबै नृपतिसन कही बखानी ॥

नकुल उवाच ।

सुन राजा इह महातुरंगा । इह कर जीव मरै नहिं संगा ॥
हमरा कहा नृपति जो मानहु । पूजि तुरंगम वेदी आनहु ॥
नकुल वचन सुनि आव तुरंगा । सब कुटुम्ब नृप चर्चहिं अंगा ॥
भीम खड्ग कर लीन्ह सँभारी । तेहि क्षण धौम्य वचन अनुसारी ॥
भीमसेन क्षण हो अब धीरा । जबलगि परखो तुरँग शरीरा ॥
धौम्य यज्ञ मैं कीन्ह उपाया । वामें करण कीन्ह है घाया ॥

जन्मेजय सुनि महा विचारा। कर्णते चली क्षीरकी धारा॥
देखि सबै चकित ह्वै जाहीं। इनके तनु शोणित कछु नाहीं॥
इनकर प्राण लीन्ह हरि जाहा। तनु सब भयो चतुःसम ताहा॥
धौम्य कहा सुनि भीमकुमारा। अब तुम करहु खड्गपरिहारा॥
नहिं प्रसन्न जेहि पुरुष पुराना। अब या अविनाशी सब जाना॥
महा वाद्य बाजन झनकारा। भीमसेन हय शीश उतारा॥
परत शशि काहू नहिं देखा। रविमें मनो अनलकी रेखा॥

दोहा–सफल यज्ञ धर्मजकर, सब भाषत गुहराव॥
पुरुषोत्तम हरिको चरित, केहिपर जानो जाव॥१९२॥

अगमन निकसि तुरंगम प्राना। देखत लीन्ह भयो भगवाना॥
भूमि परेउ तनु कृष्णसनेहा। भयो कपूर तुरंगम देहा॥
तनुते जवन वहा कछु क्षीरा। वह विभूति भइ रुद्रशरीरा॥
मुनि विस्मय भये देखि कपूरा। सब तन भयो चतूर मधूरा॥
वेदध्वनि ब्रह्मादिक सुनहीं। अठारः कपूर शकटन उनहीं॥
सहित रुक्मिणी यदुपति ताहाँ। करहिं युधिष्ठिरकी नित छाहाँ॥
व्यास श्रवाके लीन्ह कपूरा। देवविमान रहे थाकि झूरा॥
व्यासदेव अस कहहिं विचारा। आहुति इंद्र लेहु धनुधारा॥
आगे दुर्लभ ह्वै है ऐसा। राय युधिष्ठिर कीन्हेउ जैसा॥
देवन सहित इंद्र तहँ आवा। व्यासदेव तहँ वचन सुनावा॥
सनमुख अनल देवता होही। आहुति लै पुनि पूँछे तोही॥
आहुति लै सुमिरहिं जेहि व्यासा। लक्षण ही आवैं चहुँ पासा॥
सर्पनकी आहुति ऋषिराजा। शेषसहित आये करि साजा॥
लक्ष्मीकी आहुति अवधरिया। कमलायज्ञ सुफल बहु करिया॥
विधिवत सबकी आहुति दीन्हा। होम प्रदक्षिण सबही कीन्हा॥
तीनि लोककर भा संतोषा। बाजन बाजेउ मंगल घोषा॥
होमधूम अकाशलौं वाजा। भये पवित्र युधिष्ठिर राजा॥

भइ पावन संपूरन धरनी। देखत तृप्ति भये हिमकरनी ॥
चर अरु अचर तजा दुखद्वंदा। कृष्ण युधिष्ठिर भा आनंदा ॥
टकि चरण परिरंभन कीन्हा। पुनि मखअंत मरन जनु चीन्हा ॥

जैमिनिरुवाच।

सहित कृष्णसंग मुनि राजा। सोमपान सब काहू साजा ॥
पूरण आहुति कीन्हीं व्यासा। सब विप्रनकी पूजी आसा ॥
जयजय शब्द वाजने बाजा। भये संतुष्ट युधिष्ठिर राजा ॥
गायन सबै कृष्णयश गावैं। देवकि कुंती रत्न लुटावैं ॥
पूरण आहुति राजा वैसे। देहि विदान पुरंदर जैसे ॥
तन धन न्यवछावरि भगवाना। व्यासहि दीन्हेउ पृथिवी दाना ॥
क्रिया कर्म कारन सब कीन्हा। सो पुनि व्यास ब्राह्मणहि दीन्हा॥
रत्नथार कंचन संयूता। बकदाल्भ्यहि दीन्ह बहूता ॥
एक गयंद एक रथ आनी। दश कंचन लादे मनजानी ॥
गोसुत हेम विभूषित कीन्हा। एक गयंदनु मुक्ता दीन्हा ॥
चारि चारि सेवक सँग आना। एता एक एक कहँ दाना ॥
तिनकर अर्ध अर्ध पुनि करई। सब काहूकर दारिद हरई ॥
सौ सौ कुंजर सहस तुरंगा। कोटि एक कर भूषण संगा ॥
इतइत एक नृपति कहँ दीन्हा। तेहिते दूना यादव दीन्हा ॥
रुक्मिणि आदि अहैं जे नारी। बहुविध भूषण दीन्ह सँवारी ॥
दीन्ह दान सवही मनभावा। सिंहासन यदुपति बैठावा ॥
नृपति यज्ञसुकृत जिय कीन्हा। सब समर्पि गोविंदहि दीन्हा ॥
वाजन बाजे भयो अनंदा। पुष्प वृष्टि उदयो जनु चंदा ॥
भीमादिक पांडव जित रहिया। कृष्ण कृपा सब काहू कहिया ॥
यज्ञ प्रकाश सुनै चित दीन्हे। तेहि जानहु सब तीरथ कीन्हे ॥
हरै पाप निर्मल होइ देहा। उपजै बहुत गोविंद सनेहा ॥
दुर्वांकेर पुजवै प्रभु आसा। गई भूमि पुनि होइ प्रकासा ॥
सुनत कथा भाजै दुख अंगा। उपजै भूमि संतके संगा ॥

दोहा-भयो यज्ञ तहँ बहुत विधि, पहरावनि सब दीन्ह॥
अविचल भक्ति गोविंदकी, पुरुषोत्तम तहँ लीन्ह१९३॥

इति श्रीम० अश्वमेधपर्वणि युधिष्ठिरस्याभिषेको नाम
सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

जैमिनिरुवाच ।

जबहि यज्ञ संपूरण भयऊ । सबहि भीम जलअंजलि लयऊ ॥
मुनि नृप सहित जो श्रीभगवाना । करहु पवित्र खाहु पकवाना ॥
कहहुव मुनि हरिकर ज्यवनारा । हरि भोजनको कहौ विचारा ॥
कवन पदारथ जिय मैं गुनई । कहौ ऋषिय तुम्हरे सुख सुनई ॥

जैमिनिरुवाच ।

सुनु राजा मैं कहौं विचारा । भीमसेन कीन्ही ज्यवनारा ॥
रत्न जटित भल मंडप छावा । कनक भूमि आँगन बनवावा ॥
चौकी सब कंचनकी गढ़िया । बिच बिच रत्न तासु मैं जड़िया ॥
कनक खंभ सब कनक पगारा । तहाँ कीन्ह सबकी ज्यवनारा ॥
रत्नदीप तहँ भी उजियारा । चारि पदारथ भोजन सारा ॥
रत्न जटित चौंसाठि हैं खोरा । वरणि न जाय मनोहर जोरा ॥
अगर धूप तहँ कीन्हेउ वासा । अग्नि सुगंध तहाँ चहुँपासा ॥
कीन्ह सुधा पकवान अनेका । थारन प्रती कमण्डलु एका ॥
भोजन केरि कहै कहँ बाता । चंद्रबिंब सम आनेउ भाता ॥
तहँवा दूध साध घृत आना । धोरिनि विविध भाँति संधाना ॥
नाना भाँति कीन्ह पकवाना । वरणि न सकै शारदा पाना ॥
पूरी पापर फेनी आनी । मुनिमन कहँ पूँछाहिं मुनि जानी ॥
जानहु शशि धरणी महिं परिया । ताकर व्यंजन जनु सब करिया ॥
वायभक्ष मुनि लड्डू अहारा । वे कहँ जानै कवन प्रकारा ॥

कंद मूल फल बन महँ खाहीं । हरि हरि बोलहिं वे वनमाहीं ॥
निर्मल भात देवसम तूला । कोउ कहै कइरजके फूला ॥
व्यंजन नाम न जानै केऊ । भोजन करत सकल श्रम गयऊ ॥
खोवा खीर बहुत विधि सोहा । भोजन करत सबै मुनि मोहा ॥
काहू तक्रबरा सुठि भावै । काहूको शिखरन भल भावै ॥
मिष्टा मैदा तरि घृत आनी । नरियल कदली सबै बखानी ॥
मैदा भिंड करछु अरु खीरा । मुनि चकृत भये तृप्त शरीरा ॥
पंच पदारथ भोजन कीन्हा । जल कपूर अचवन कहँ दीन्हा ॥
चकृत भये मुनिन तब लीन्हा । सहित कपूर तंबूलय दीन्हा ॥
खारिका कनक गोड़ दीवावा । कुंकुम चंदन चर्चि चढ़ावा ॥
भीमसेन यह मंजिनि देहू । इंद्रपुत्र कहु हमसन लेहू ॥
मुनि तमोल कर मर्म न जाना । हँसि हँसि भीम खवावहिं पाना ॥

दोहा-तृप्त भये पुरुषोत्तम, मुनिप्रसाद कछु दीन्ह ॥
जन्म जन्म हरि सुमिरण, हरि करुणाकरि चीन्ह ॥ १९४ ॥

कृष्ण ऋषिय पूछी सब राजा । मंडप यज्ञ बैठि करि साजा ॥
इह अंतर द्वै द्विज उरझाये । करते बाद्य सभामहँ आये ॥
धर्मराय तुम करहु विचारा । समयि देहु तुम न्याउ हमारा ॥
भूपति कहा बकदालभ्य सुनहू । आत्रि वसिष्ठ न्याउ तुम गुनहू ॥
भिन्न भिन्न कारण गुण कहहू । ज्यों तुम न्याउ विचारा चहहू ॥
ब्राह्मण एक सभामें बोला । पक्का खेत लीन्ह हम मोला ॥
अब इह मोर करत है पीरा । देय नाहिं सुन हो रणधीरा ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

सत्य कहो तुम विप्र बुझाई । झूँठ कहै सब धर्म नशाई ॥
जो तुम द्रव्य इनहि सन लीन्हा । तौ काहे विप्रहि दुख दीन्हा ॥

ब्राह्मण उवाच ।

मैं तौ द्रव्य कछू नाहिं लीन्हा । ऐसेहि खेत याहि मैं दीन्हा ॥
दीन्हा नाहिं उपज जो खेता । अब मैं लैवे नाज समेता ॥
राजा जीव बहुत दुख माना । इह तौ न्याव बहुत उरझाना ॥
इनमाहिं झूठा कहियत कोई । देहु मैं इनहिं पाप बड़ होई ॥
इह अंतर बोले भगवाना । इह तो न्याव नीक हम जाना ॥
तीनिहु मास रहहु घर बैसा । करिहौं न्याव अहै जहँ जैसा ॥
कृष्णवचन सुनि लागे घोषा । विप्र चले अपने गृह चोषा ॥
नरपति सहित चकित सब भयऊ । अब इह न्याव कस न तुम कियऊ ॥
मुनिवर अरु राजा तब बैसा । जहँ आनंद बाण तहाँ कैसा ॥
कलियुगकर आगम तब भयऊ । झूठा झगरा विप्रन ठयऊ ॥
सुनि नृप मास तीनि जब जैहै । बीते द्वापर कलियुग ऐहै ॥
धनको लागि झूँठ सब कहहीं । नर अपने सुकृत नहिं रहहीं ॥
केश केश पुनि नख नख जूझी । होइहै मुष्टिप्रहार असूझी ॥
कलिकर पापी होइहै राजा । कोउ न करै धर्मकर साजा ॥
जो ये झगरन बहुरे आवहिं । आधा देहु बहुत सुख पावहिं ॥
होहिं विप्र जे कलियुगमाहीं । होइ न शुक्र शौच उन पाहीं ॥
नृपति प्रजा कहँ करिहैं पीरा । होवै नृपति अधर्म शरीरा ॥
धर्म न जियमें धार हैं पापी । महापाप नर बड़ संतापी ॥
परदाराको चित्त चलै हैं । जहँ हरिभक्त तहाँ नहिं जैहैं ॥
गुरु पितु की सेवा नाहिं करहीं । चोरी द्रव्य पराये हरहीं ॥
सुकृती कै पतिव्रता न होई । सेवा करै नृपतिकी कोई ॥
साधुन कर करि हैं अपमाना । विप्रन कर कोउ देइ न दाना ॥
खेदहिं विप्रहि राखहिं चोरा । लेहैं ऋन देहैं पुनि थोरा ॥
दुःसह कालियुग होइहै राजा । वेश्या कारण करिहैं साजा ॥
जीरण वस्त्र जनान कहँ देहीं । घरकर द्रव्य जुवा का लेहीं ॥

कलियुग अस होइहै व्यवहारा । वेश्या दासी रति संसारा ॥
हरिकर नाम न काहूमें है । जहाँ अधर्म तहाँ सब जैहै ॥
कनइल अरु धतूर मंदारा । ले पूजै हरिदेव निनारा ॥
कुंकुम चंदन देह चढ़ैहैं । ले पंकज वेश्या घर जैहैं ॥
औरौं कलिकर जवन विचारा । पाछे कहिहौं सब व्यवहारा ॥
होइ है गुप्त नाम हरिधर्मा । प्रवृतै निशिदिन बहुत कुकर्मा ॥

जैमिनिरुवाच ।

कलि व्यवहार कृष्ण तब कहे । राजा सब चकित है रहे ॥
सब राजन अस कीन्ह विचारा । जाना हम कलियुग व्योहारा ॥
इह कलि आवत तबहीं बूझी । पंथज कीन्ह पंथसन जूझी ॥
ल शर पुत्र पिताकहँ धावा । तब जानी हम कलियुग आवा ॥

बकदालभ्य उवाच ।

राजकाज जनि विस्मय करहू । कुश लव युद्ध राम जिय धरहू ॥
त्रेतायुग कलियुग हो काहा । क्षत्रीधर्म युद्ध मख आहा ॥
बहुत युद्धते गहेउ तुरंगा । अब तुम सुनौ सबै परसंगा ॥
नीकेउ जन्म पुत्र उहि कीन्हा । पंथके कहे अस्त्र उन लीन्हा ॥
यहै परस्पर कीन्ह विचारा । बकदालभ्य नृप सब परिवारा ॥
अब कस करिहैं जीव विचारहु । कल्मष नाशन हरि उर धारहु ॥
मुनि नृप सबै महामति कीन्हा । दृढ़मति हो रामहि चित दीन्हा ॥
सबहिन वेद पुराण विचारा । राम छाँड़ि नहिं आन अधारा ॥
आवत कलियुग अनअन वरना । सब तजि सेवहिं पंकज चरना ॥

दोहा-यहै सुना पुरुषोत्तम, जहँ सब कीन्ह विचार ॥
हरि तजि नाहिन आन कछु, रामै नाम अधार १९५

इति श्रीमहा० अश्वमेधप०युधिष्ठिरयज्ञसमाप्तिर्नाम
अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

जैमिनिरुवाच।

इहि विधि अश्वमेध भी तहहीं। जैमिनि आदि अंत कह्यो जहहीं॥
नीके यज्ञ कीन्ह प्रतिपाला। बिछुरन लागे मदन गोपाला॥
सुनत युधिष्ठिर परेउ खंभारा। हरि विनु को करि है प्रतिपारा॥
कृष्ण द्रौपदी वचन सुनाये। बिदा माँगि द्वारका सिधाये॥
कृष्ण मिलन कीन्हों संयोगा। बिछुरत कृष्णहि भयो वियोगा॥
यादव सहित चले हरिचरना। नाहिं बिछुरन भल भल है मरना॥
बिछुरत हरि सब भये मलीना। जिमि जलते बिछुरति है मीना॥
जवन जवन राजा सब आये। जो जितकर सो तहाँ सिधाये॥
नृपति सकल अपने गृह गयऊ। बिछुरत जियमें बड़ दुख भयऊ॥
पाँचो भाइ भये इकठाई। पंथहि भीम नृपति समुझाई॥
भयो यज्ञ अब करहु अनंदा। पुनि मिलि हैं प्रभु यादवचंदा॥
सुनतै वचन युधिष्ठिर राजा। बैठि सिंहासन बाजन बाजा॥
नीके करहिं प्रजा प्रतिपाला। धर्म कथा नित भक्ति गोपाला॥
निशिदिन सबै अनंदित लोगा। श्रीहरि कृपा न काहु वियोगा॥
घर घर नित उत्सव भल साजा। भी इकछत्र युधिष्ठिर राजा॥
अश्वमेध नृप महा पुराना। संत सुयश चरित्र भगवाना॥
धेनु सहस्र अलंकृत देई। तेहि फल सुकृत तत्क्षण लेई॥
होइ सुकीर्त्ति यज्ञकर दाना। सुमिरत कृष्णहि पाप पराना॥
बंझा सुनै पुत्र तहँ होई। हरै रोग रोगी कर जोई॥
अष्टादश पुराण जे कहिया। सबकर मर्म याहिमें लहिया॥
भोजन दान विप्र कहँ देई। ततक्षण फल सुनतै सो लेई॥
इस्त्री पुरुष सुनै मनलाई। बार न होइ सुनत तरि जाई॥
जैमिनि कही जाहि जिय भावै। जानहु लक्ष जो विप्र जिमावै॥

हीरा रत्न देहि बहु दाना। कंचन रत्न दिव्य अस्थाना॥
लाइ प्रदक्षिण धरणी आवै। जा हिय अश्वमेध प्रिय भावै॥
पुनि पुनि पर्व चतुर्दश कहिया। चरण धोइ चरणोदक लहिया॥
राजा सुफल कृतारथ होई। जबते दरश भयो ऋषि तोई॥

जैमिनिरुवाच।

जैमिनि जन्मेजय सन कहहीं। गजपुर राय युधिष्ठिर रहहीं॥
कृष्ण चरण द्वारका सिधाये। देश देश सब नृपति पठाये॥
दोहा-भयो राज सब पंडुकर, कीन्हेउ कृपानिधान॥
पुरुषोत्तम जन वर्णही, पावै पद निर्वान॥१९६॥
तुम प्रभु शशि मैं भयो चकोरा। मैं चातक प्रभु स्वाति मोरा॥
प्रभुकर यश जिमि अमृत वानी। हरि बिनु को मेटै अज्ञानी॥
चरण कमल प्रसाद मैं पाऊँ। हरि यश छाँड़ि आन नहिं गाऊँ॥

दोहा-पुरुषोत्तम जन वर्णही, दाता श्रीभगवान॥
जन्म जन्म हरि भक्ति दे, यह वर चहौं न आन॥१९७॥

इति श्रीमहाभारते अश्वमेधपर्वणि एकोनसततितमोऽध्यायः॥ ६९॥

दोहा-जैसी प्रति मैंने लखा, तैसी लिखी सँभारि॥
भूल चूक जो होइ कछु, लीजो चतुर सुधारि॥१९८॥

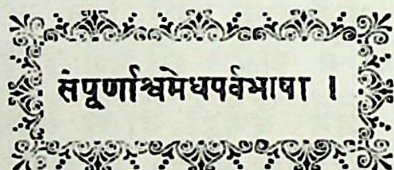
सवैया-संवत अंक धरौ भुअखंड विचारि कहौं वसु ब्रह्म गनाई॥
कार्तिक मास सुदी तिथि तीज शनीचर वार महासुखदाई॥
जैमिनि पांडव यज्ञ कथा कह सो पुरुषोत्तमदास बनाई॥
चंद्रवती निज हेत गोपाल लिखी प्रति देखि सबै मनभाई॥

दोहा-कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार॥
मो संपति यदुपति सदा, विपति विदारनहार॥१९९॥

सवैया–संग्रह कोउ करोर करोर करो कोउ लक्षिके लक्षि भंडारौ ॥
कोऊ हजारक जोरि धरौ बहु भाँति लहौ मनमें सुख भारौ ॥
कृष्ण कृपानिधि दीनके बंधु सुरद्रुम दानि प्रताप उजारो ॥
संपति मोरि वही यदुपत्ति विपत्ति सदा जो विदारनवारो ॥

दोहा–है अनेक अवगुण भरी, चाहै जाहि बलाइ ॥
सो पति संपतिहू बिना, यदुपति राखैं जांइ॥२००॥

सवैया–अवगुनपुंज भरी अति चंचल याहि कहौ जियको अभिलाखे॥
नंदकिशोर कृपा करिकै बहु संपतिहू विनु जो पति राखे ॥
पावनकाज कछु न सरै सव कोउ यहै निहचै मत भाखे ॥
जानि यहै चित चाहत याहि उपाइनके बहु ताकत पाखे॥२०१॥





मुद्रक एवं प्रकाशक:

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADA

